कलकत्ता के हिन्दी साहित्य का सेतु

नवल

तुम मेरी ज़मीन को सींचते रहना
शायद उग आए कभी उस पर पेड़
कुछ न कुछ करते रहना
लेकिन हाथ पर हाथ धरे मत बैठना

01.02.2004

कलकत्ता के हिन्दी साहित्य का सेतु

नवल

कलकत्ता के हिन्दी साहित्य का सेतु नवल

प्रकाशन सहयोगी

परिकल्पना, संपर्क एवं संपादन : डॉ० इन्दु जोशी

आवरण चित्र : प्रशान्त अरोड़ा

मुद्रक : संजय नोपानी
एस्केज्
8, शोभाराम बैशाक स्ट्रीट
कोलकाता-700 007
मो : 9831413141

समर्पण

कवि नवल को प्रतिध्वनि^{2002} की ओर से
शब्द-फूल के रूप में यह पुस्तक समर्पित है।

राम के दोहे

अब तो पर्दा खींच ले, नाटक का है अन्त।
जैसा भी मैं कर गया, दाई तू भगवन्त।।

आँख खुले तो वो दिखे, सपनों में भी राम।
करवट-करवट देखता, हिलूँ तो डोले राम।।

सभी ओर सब प्राणमय, जित देखूँ तित प्राण।
नश्वरता में है रमा, रमता प्राण प्रमाण।।

रमता जीवन क्षण मधुर, जुड़े धरा सम्बन्ध।
साँस साँस कण-कण सखा, बनती तभी सुगन्ध।।

सायं छः बजकर दस मिनिट। रूँधे गले से नवल जी की बेटी अदिति मोबाइल से सूचना दे रही थी – पापा.... चले .... गए .... दीदी। मैं अदिति ..... नवल... जी .... की ... बेटी। आपको ही फोन कर रही हूँ। रूह को कंपकंपा देने वाली अदिति की आवाज को मैं सिर्फ सुन रही थी.... कुछ नहीं कर पाए हम। कुछ....भी....नहीं। कुछ भी.... प्रतिध्वनि परिवार के महानायक, कर्त्ता-धर्त्ता, रमता योगी चुपके से अपना कमंडल उठाकर चल दिया।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी, एक हंसमुख प्रेरक व्यक्तित्व ऐसे-कैसे जा सकता है। मैंने इस सच को स्वीकारा कि महाकाल ने दरवाजा खोला और बंद कर दिया। जो भीतर गया है बाहर कभी नहीं लौटेगा।

लॉकडाउन है, डरावने शिकंजों में कसा महानगर। आतंकी पसरा भय। इस सूचना को देने का एकमात्र जरिया मोबाइल, फेसबुक और व्हाहटसएप। बस पाँच मिनट के अंदर कवि नवल की शेष-यात्रा की खबर शहर के एक कोने से दूसरे, दूसरे से तीसरे, तीसरे से चौथे सर्वत्र फैल गई। घर की चारदीवारी के भीतर से नम आँखें कवि नवल को हम सभी ने विनम्र श्रद्धांजलि दी।

कवि नवल : कलकत्ता के हिन्दी साहित्य का सेतु टूट गया।

पिछले दस वर्षों से मुस्कराते हुए नोपानी प्रेस में एक बात अवश्य नवल जी कहते — संजू (संजय नोपानी) अभी एक सौ पच्चीस वर्ष और काम करूँगा।

देखो, २०२० में मेरा रचना समग्र मुझे प्रकाशित करना है।

तीन वर्षों से मैटर कम्पोज भी वे करवा रहे थे।

मुझे भी कहा कि यह काम (रचना समग्र) तुम्हें ही करना है और कौन करेगा?

२४ अप्रैल २०२०। इस तारीख के दो दिन पूर्व नवल जी ने फेस बुक वॉल पर पूर्व घोषणा भी की

बन्धुवर !

व्हाट्सएप के माध्यम से आपके साथ अब तक जुड़ा हुआ था। सुबह-सुबह सुप्रभात कहने का आनन्द कुछ और ही था।

आगामीकाल से प्रातःकालीन इस रिचुअल से मुक्त हो रहा हूँ आत्मशोधन के लिए।

आप मुझे सदैव स्मरण रखेंगे।

सप्रेम

नवल

कवि नवल नमन आपको प्रतिध्वनि परिवार का। आपने स्वयं को प्रातःकालीन रिचुअल से मुक्त कर लिया किन्तु सत्तर वर्षों से आपने कलकत्ता के हिन्दी साहित्य की निरन्तर सेवा की। अपने जीवन को शिवता और सौंदर्य से मंडित किया। जब भी कलकत्ता महानगर की साहित्यिक गतिविधियों की चर्चा होगी ससम्मान आपको सभी स्मरण करेंगे। आप कला मर्मज्ञ ही नहीं मार्गदर्शक, प्रेरणा स्रोत भी थे। हिन्दी साहित्य के ही नहीं उर्दू और अंग्रेजी साहित्य के भी नवल जी ज्ञाता थे। सम्पादन कला, ले आउट डिजाइनिंग, डिजीटल तकनीकी में भी निष्णात थे। कनिष्ठ पीढ़ी हो या वरिष्ठ या समवयस्क मित्र-मंडली या गैर साहित्यिक आत्मीय स्वजन सभी की प्रशंसा या उत्साहवर्द्धन उन्हें प्रिय था। अपनी रचनाओं के प्रकाशन की चेष्टा उनकी कभी नहीं रही जबकि हर उभरते नए साहित्यकार की कृति का प्रकाशन उनका अभीष्ट था।

उनकी कविताओं को वह राष्ट्रीय फलक और सम्मान नहीं मिला जिसके वे हकदार थे। प्रतिध्वनि परिवार का प्रयास होगा आगामी वर्षों में नवल समग्र का प्रकाशन हो। ऐसी हमारी चेष्टा भी होगी।

नवल जी आपने जीर्ण तन को त्याग दिया और आज नूतन देह भी धारण की है। यह नूतन देह होगी काव्य पुरुष कवि नवल के आगामी एक सौ पच्चीस वर्ष अर्थात् उनके काव्य संसार का मूल्यांकन और राष्ट्रीय सम्मान।

अज्ञेय ने लिखा है :

मैं तुम्हें सम्पूर्णत: जान गया हूँ।

तुम क्षितिज की सन्धि-रेखा के आकाश हो और मैं वहीं की पृथ्वी।

हम दोनों अभिन्न हैं तथापि हमारे स्थूल आकार अलग-अलग हैं। हम दोनों ही सात्विक हैं पर हमारा अस्तित्व नहीं है; हम दोनों के प्रस्तार सीमित हैं फिर भी हमारा मिलन अनन्त और अखण्ड है।

मैं तुम्हें सम्पूर्णत: जान गया हूँ।

कवि नवल के संदर्भ में यह कथन एकदम सटीक प्रतीत होता है।

पिछले तीन-चार वर्षों से एक आध्यात्मिक प्रवृत्ति का रूख प्राय: हम सभी ने उनमें देखा और पाया।

आत्मशोधन और एक सौ पच्चीस वर्ष वाक्य अक्षय कीर्ति के प्रतीक हैं।

काव्य पुरुष कवि नवल की रचना में निहित सौन्दर्य हमें सदैव सुवासित रखेगा और रचनात्मक शिव संकल्प स्फूर्ति का अनुभव देगा।

प्रतिध्वनि परिवार ने नवल जी की एक बात का सम्मान किया है कि साहित्यकार की मृत्यु नहीं होती। वह अपने साहित्य से सदा जिंदा रहता है। उसके लिए शोक-सभा नहीं होनी चाहिए।

प्रतिध्वनि संस्था की ओर से कभी भी शोक-अवसर पर श्रद्धांजलि सभा का आयोजन भी नहीं किया गया।

रंगमंच अभिनेता प्रताप जायसवाल के शब्दों को अपने सम्पादकीय में उद्धृत कर रही हूँ।

"रमता जोगी चल दिए लकुटी कमंडल लाद

छोड़ गए बेदर्द हमें बिलखता आज।"

एक कवि को 'शब्द-फूल' के रूप में यह पुस्तक भेंट करके प्रतिध्वनि परिवार कवि नवल को आज स्मरण करता है।

शत शत प्रणाम हमारा

ओ महानायक।

"जन्म निश्चित है / मरण निश्चित है / अगर / कर्म अच्छे हैं तो / स्मरण निश्चित है।" यह आपने ही कहा है ना!

ॐ शांति ! ॐ शांति ! ॐ शांति।

डॉ० इन्दु जोशी

:: अनुक्रम ::

शब्द घनेरे रखे हैं शब्द कोष में

१.	स्वयं स्मृति बन गये स्मृतिलेख लिखते-लिखते	डॉ० अभिज्ञात	11
२.	कलकत्ता का सबसे आत्मीय लेखक : कवि नवल	अशोक सिंह	14
३.	कवि नवल	आलोक शर्मा	17
४.	सबके प्यारे नवल हमारे	डॉ० कमला प्रसाद द्विवेदी	19
५.	चिराग की तासीर का व्यक्तित्व लिए कवि नवल	डॉ० कमलेश जैन	21
६.	ध्रुवतारा की तरह साहित्य जगत में जगमगाता रहे	कालीचरण गुप्त 'सय्याद'	26
७.	कवि जो नेपथ्य नायक था	कपिल आर्य	28
८.	शहतूत का बगीचा (कवि मित्र नवल जी के लिए)	कुलदीप धिंद	30
९.	शब्द फूल	कुसुम जैन	31
१०.	परिवार, रिश्तेदार और दोस्तों की दुनिया को आलोक मुखर किये रहते थे नवल जी	डॉ० कृष्णबिहारी मिश्र	33
११.	नवल के धनी नवल	गिरिधर राय	35
१२.	नवल, कवि नवल, नवल नवल	गीतेश शर्मा	38
१३.	'स्वान्तः सुखाय तुलसी'	गोविन्द फतेहपुरिया	39
१४.	मर्म को स्पर्श करनेवाले कलमकार - नवल जी	जयकुमार 'रूसवा'	42
१५.	नवल जी	दिनेश चंद्र प्रसाद 'दीनेश'	44
१६.	नवल जी : हँसता हुआ नूरानी चेहरा	दिनेश बडेरा (ठक्कर)	45
१७.	नेपथ्य के नायक	देवदीप	46
१८.	दे गया चकमा मुझे भी मेरा प्यारा चहेता खाँटी मानुष कवि नवल	ध्रुवदेव मिश्र 'पाषाण'	50
१९.	नवल भैया एक प्रेरक व्यक्तित्व	प्रताप जायसवाल	51
२०.	जब तक नवल जी हमारे दिल में है जिंदा है	प्रशांत अरोड़ा	53
२१.	नवल जी	डॉ० प्रतिभा अग्रवाल	56
२२.	स्मृतियों की सर्जरी नहीं होती कवि	डॉ० प्रेमशंकर त्रिपाठी	60
२३.	नवल अर्थात् जयप्रकाश खत्री	मनमोहन ठाकौर	66
२४.	कवि नवल को याद करते हुए	रामनिहाल गुंजन	70
२५.	नवल जी - नित्य नवल हरित दूब	रश्मि खेरिया	73
२६.	...बेटी किसकी है !	प्रो० रूपा गुप्ता	75
२७.	नवलजी मेरे साहित्यिक गुरु	राजेन्द्र कानूनगो	77
२८.	पृथ्वी पर नवल होना	राजेश्वर वशिष्ठ	82
२९.	भावोद्वेलन के सूक्ष्म और सफल चितेरे नवल जी	रामेश्वर नाथ मिश्र 'अनुरोध'	85
३०.	संवेदना, सौहार्द तथा आत्मीयता का गुंफन : कवि नवल	डॉ० लखबीर सिंह निर्दोष	93
३१.	उदात्त संवेदना के परमाणुओं से निर्मित व्यक्तित्व : नवल	डॉ० वसुमति डागा	97
३२.	वो हिन्दी का पूरा मोहल्ला था कलकत्ता का	विजय बहादुर सिंह	101
३३.	स्मृतिशेष : कवि नवल उर्फ जयप्रकाश खत्री	डॉ० शंभुनाथ प्रसाद	104

३४. नवल : हर एक का दुख बयां करनेवाला - एक संजीदा, सरल और जिंदादिल इंसान!	सुधा अरोड़ा	107
३५. नवल की याद में : क्या भूलूँ क्या याद करूँ	सिद्धेश	111
३६. नवल यादों के आईने में	श्रीनिवास शर्मा	114
३७. एक व्यक्ति है नवल	हर्षनाथ	116
३८. A letter for star always shining	Pushp Raj Singhvi	118
शब्द, शब्द को रचकर देता अर्थ नया सा		
३९. रचनाकार का सत्य	डॉ० इन्दु जोशी	122
४०. नवल जी सचमुच भले मानुष थे	नीलम श्रीवास्तव	132
४०. कविताओं में भाव संसार	परशुराम	135
४०. एक मिशनरी कवि : सुहृद-नवल	विमल वर्मा	143
कविता मुझको माँज रही है		
१. इस कठिन समय में		150
२. गुजार दिया अपना कीमती वक्त		150
३. नाखूनों को तराशते हुए		150
४. धरती की परत दर परत		151
५. झरबेरी जैसी परतें होती हैं मन की		151
६. मजहब, मुहब्बत		152
७. तुमने जैसा चाहा है, मैंने वैसा ही किया है		152
८. क्या तुम्हें पता है		153
९. तुम कौन हो		153
१०. तुम्हारा सच		153
११. तुम मुझे निर्वासित यक्षिणी की तरह लगती हो		154
१२. तुमने तो थोड़ा सा ही सच बोला था, मृत्युंजय		154
१३. आनन्दधारा बहिछे भुवने		155
प्रियम्वदा शक्ति का नया अवतार है		
१. बच्चों की हँसी को बचाना है, प्रियम्वदा!		158
२. चलो यही सही		159
३. कभी - कभी मैं सोचता हूँ		160
४. दो अपना हाथ		161
५. तुमने धारण कर लिया है पुष्पाकार		162
६. जब पूरा विश्व		163
७. प्रकृति समान होती है स्त्री		164
८. अब जब सूर्योदय होगा		165
९. विन्दु जैसा आभास देती है		166
१०. तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब हूँ मैं, प्रियम्वदा!		167
११. तुम्ही को याद कर रहा हूँ, प्रियम्वदा!		168
१२. तुम जब सूरज को जगाती हो		168

मुझे रच गया राम

१.	काम बनाए ना बनें	170
२.	बजती हरदम रागिनी	170
३.	अहंकार डगमग करे	170
४.	मन मन्थन से लग रहा	170
५.	रमता आँसू पोंछ ले	170
६.	मौज मलाई चाटता।	170
७.	मन चाहा सब कर लिया	170
८.	माया जपती राम है	170
९.	रमता उलटी रीत।	170
१०.	सबका सच तो अलग है	170
११.	जीवन नाटक मंच पर	170
१२.	समय बीतता जा रहा	170
१३.	तेरे कारन नाचता	170
१४.	अब तो पर्दा खींच ले	170
१५.	द्विधारहित वो, प्रेम के	171
१६.	शून्य शून्य को रच रहा	171
१७.	बजती हरदम रागिनी	171
१८.	भाव अदेही आत्मा	171
१९.	पगली दरपन हाथ ले	171
२०.	क्या देखा, क्या सुन लिया	171
२१.	एक राज दरबार में	171
२२.	राम अविचलित भाव है	171
२३.	रामकृष्ण तो ध्यान है	171
२४.	बंजारिन है जिंदगी	171
२५.	जीवन नदिया धार में	171
२६.	आँख खुले तो वो दिखे	171
२७.	राम कृपा तो आईना	171
२८.	राम रमा रस रमन में	171
२९.	लोहा कंचन हो चले	171
३०.	राम कृपा से गा रहा	171
३१.	हम तो खुद ना जानते	171
३२.	हम तो अनबोली कथा	171
३३.	हम तो पँछी डाल पर	171
३४.	राम नाम तो लहर है	171
३५.	बूंद बूंद सागर बना	171
३६.	हम तो बहती धार थे	171
३७.	हरपल है जो ध्यान में	171
३८.	रमता धरम अधरम सा	171
३९.	पंडित ज्ञान उछालते	171
४०.	राम नाम ऐसा नशा	171
४१.	जितना पानी डालिए	172
४२.	उपदेश सब, बदल सके	172
४३.	धूरत गाते राम धुन	172
४४.	आँखन झोंके धूल है	172
४५.	जग की चिन्ता छोड़कर	172
४६.	नहीं हमेशा चाँदनी	172
४७.	जो अपने को जानते	172
४८.	रमता चढ़या पहाड़ तो	172
४९.	मुझ को मुझ पर छोड़कर	172
५०.	श्याम नयन काजर	172
५१.	राम कृपा में शक्ति है	172
५२.	राम कृपा जब तक रहे	172
५३.	आकर्षण का अन्त है	172
५४.	राम-नाम से धुल गया	172
५५.	मन को जितना मारता	172
५६.	ऊँचाई ऊँची हुई	172
५७.	राम कृपा नापन चला	172
५८.	राम कृपा सागर विरल	172
५९.	लंगड़ा रमता चल रहा	172
६०.	राम नाम तो गीत है	172
६१.	राम सहारा हो गया	172
६२.	होनी होकर ही रहे	172
६३.	प्रबल काल के वेग में	172
६४.	लात मारता राज को	172
६५.	चुम्बक लोहा खींचता	172
६६.	राम कृपा से लग रहा	172
६७.	मैं जिसको था ढूँढता	173
६८.	नदियाँ नाले पारकर	173
६९.	राम कृपा ऐसी हुई	173
७०.	राम परस हो कर गया	173
७१.	लोक लाज ऐसे बढ़े	173
७२.	जीवन यदि संग्राम है	173
७३.	जो चमके सोना नहीं	173
७४.	स्वप्न निरन्तर चल रहा	173
७५.	पैसा चिता प्रदाह है	173
७६.	बड़े-बड़े भी हारते	173

७७. जिस तिस को देखन चला 173
७८. राम कृपा से जग मिला 173
७९. राम हृदय में बस गया 173
८०. रटता रहता रात दिन 173
८१. मैं उसको ही बोलता 173
८२. जतन सभी निष्फल हुए 173
८३. गूँगा भी है बोलता 173
८४. मन चाहे तो बाँट लो 173
८५. पग-पग बन्धन जकड़ते 173
८६. मन का सच तो अलग है 173
८७. सोचे तो मन में हँसी 173
८८. अनपढ़ अन्धी वासना 173
८९. जीवन जब रूखा हुआ 173
९०. राम राम थे रट रहे 173
९१. राम सूर्य सा तप रहा 173
९२. राम कृपा सन्धान है 174
९३. पाथर पाथर नाम है 174
९४. पल-पल जिसका ध्यान है 174
९५. रमता मन घट चिकना 174
९६. धूप खिली तो खिल गया 174
९७. नन्हीं प्यारी नींद को 174
९८. सुबह प्रकाशित हो गयी 174
९९. नन्हीं प्यारी नींद को 174
१००. सखी साँझ से कह रही 174
१०१. नन्हें शिशु सा देखता 174
१०२. कुछ ही दिन की बात है 174
१०३. छन्दों के सुर ताल में 174
१०४. खिले मोर को देखकर 174
१०५. सभी ओर सब प्राणमय 174
१०६. रमता वे निश्चिंत जो 174
१०७. सहज रूप जब बन सके 174
१०८. याद तुम्हारी चाँद सी 174
१०९. रमता छूटे लोग भी 174
११०. बड़े भाग्य रमता मिलें 174
१११. दूर दूर तक कास वन 174
११२. उदित हुआ है बाल रवि 174
११३. नयी सुबह के साथ ही 174
११४. नन्हें शिशु सा देखता 174
११५. रमता जीवन क्षण मधुर 174
११६ रमता विस्मय से भरा 174
११७. जवा पुष्प है कह रहा 174
११८. हवा हँसी सुलझा रही 174
११९. जीवन की लंबी डगर 175
१२०. खिल-खिल खिल शिशु सा हँसे 175
१२१. लाख अँधेरा हो मगर 175
१२२. एक अकेला सूर्य ही 175
१२३. लाख अंधेरी रात हो 175
१२४. तेरे कारन हो गया 175
१२५. रमता अचरज से भरा 175
१२६. जो भरमों को जानते 175
१२७. ये छूटा अपना सोचना 175
१२८. हवा चले न सोचकर 175
१२९. माया रचती राम है 175
१३०. बदल बदल कर चेहरे 175
परिशिष्ट 176

स्वयं स्मृति बन गये स्मृतिलेख लिखते लिखते

■ डॉ० अभिज्ञात

'सन्मार्ग' में एक साहित्यिक पृष्ठ के सम्पादन का जिम्मा मिला तो मेरी योजनाओं में एक ऐसा भी था, जिसमें कोलकाता से जुड़े साहित्यकारों के व्यक्तित्व व लेखन तथा योगदान की चर्चा हो। स्तम्भ का नाम तय किया 'वे दिन वे लोग'। इसके लिए उपयुक्त जो पहला नाम मेरे दिमाग में कौंधा वह था नवल जी का। नवल जी से तीन दशक से खट्टे-मीठे सम्बंध रहे थे। वे लेक गार्डेन्स में रहते थे, जहां डॉ. इलारानी सिंह रहती थीं। उन दिनों मैं इला जी के निर्देशन में कलकत्ता विश्वविद्यालय से पीएच.डी कर रहा था। इस सिलसिले में अक्सर लेकगार्डेंस जाना होता था। मेरी साहित्यिक दिलचस्पी को देखते हुए इला जी ने बताया कि पास ही में कवि नवल जी और दूरदर्शन की हिन्दी कार्यक्रम प्रभारी सुशील गुप्ता रहती हैं। फिर एक दिन मैं इला जी के साथ नवल जी के घर भी पहुंच गया। यह मेरी नवल जी से पहली मुलाकात थी लेकिन उसके बाद कई मौके आये जब हम साथ थे। एक बार तो मेरी पत्नी प्रतिभा सिंह से भी वे मिले थे और आशीर्वाद दिया था। किसी काम से उन्होंने फोन किया था मिलने के लिए तो मैंने कहा कि मैं थिएटर रोड के आसपास हूं और साथ पत्नी भी है तो उन्होंने गणगौर बुला लिया। बहुत प्रेम से नाश्ता करवा और मेरी पत्नी को बिटिया कहा। उनकी यह आत्मीयता कहीं न कहीं याद रही मन में। हमारी घनिष्ठता और बढ़ी जब प्रतिभा अग्रवाल जी के प्रोत्साहन से कोलकाता नामक वार्षिक संग्रह के लिए नवल जी ने आग्रह पूर्वक मेरी कविताएं लीं। फिर तो कई सम्पादक बदले किन्तु उस संग्रह में स्थान मिलने लगा।

एक बार पंडित भीमसेन जोशी से जुड़े एक कार्यक्रम में मैंने नवल जी को देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ क्योंकि वहां हिन्दी साहित्य से जुड़ा कोई व्यक्ति नहीं था। तब मुझे पता चला कि वे विविध कलाओं से जुड़ी हस्तियों से जुड़े हुए हैं। चाहे श्यामानंद जालान हों या अन्य। चेतना जालान ने तो उनकी कविताओं पर अग्नि नामक नृत्य नाटिका तैयार की थी। बिड़ला मंदिर प्रेक्षागृह में उसकी प्रस्तुति मैंने देखी थी। वह किसी भी कवि के लिए गौरवशाली प्रस्तुति थी। नवल जी ने प्रतिध्वनि प्रकाशन शुरू किया था और कई लेखकों को सुंदर व सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रकाशित किया। कुछ दिनों के लिए महिलाओं की एक पत्रिका भी निकाली थी, जिसमें डॉ. इन्दु जोशी सम्पादक थीं। नवल जी की हैंडराइटिंग बेहद खूबसूरत थी। उनकी हस्तलिपि में पूरा एक कविता संग्रह ही प्रकाशित हुआ था, वह देखकर मैं प्रभावित हुआ था। उनकी कविताओं में संगीत व सौंदर्य दोनों हैं और एक खास तरह की नमनीयता है। वे स्वप्नद्रष्टा थे। बड़ी योजनाओं को सलीके से अंजाम देने में पारंगत थे। वे स्वयं एक संस्थान थे, यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं। नवल जी ने एक ऐसा कार्यक्रम शुरू किया था जिसमें कोई कवि एकल काव्य-पाठ के लिए आमंत्रित किया जाता है, उसमें उन्होंने मुझे भी बुलाया था।

कोलकाता में नब्बे के दशक में मैं कोलकाता आया था। उन दिनों चांदनी मेट्रो स्टेशन के पास उडिपि दक्षिण भारतीय रेस्त्रां के आसपास लेखकों का हर शनिवार को जमावड़ा लगता था। वहां कई बार नवल जी से मुलाकात होती। नवल जी श्रीनिवास शर्मा और कपिल आर्य जी के साथ पंजाब नेशनल बैंक में कार्यरत थे। वे दोनों भी वहां प्राय: साथ होते। कई बार छविनाथ मिश्र, शंकर माहेश्वरी और आलोक शर्मा भी। बुलबुल सराय में उन दिनों अक्षय उपाध्याय भी होते और बड़े बेतकल्लुफ ढंग से नवल जी को लेकर हंसोड़ गल्प सुनाते और हम खूब ठहाके लगाते।

जब मैं अमर उजाला में पंजाब चला गया तो जालंधर एक पुस्तिका सम्भवत: कलम नाम से भेजते थे। जब मैं वेबदुनिया इंदौर और दैनिक जागरण जमशेदपुर में था तब भी उनसे सम्पर्क बना रहा। फिर कोलकाता में वापसी के बाद तो मुलाकातें और बढ़ गयीं। डॉ. विजय बहादुर सिंह जब भारतीय भाषा परिषद में निदेशक बन कर आये तो उनसे भी मुलाकातें बढ़ीं।

मुझे पता था कि वे हिन्दी के तमाम संस्कृतिकर्मियों से बेतरह जुड़े हुए हैं सो उनसे मैंने सन्मार्ग में 'वे दिन वे लोग' लिखने का प्रस्ताव दिया और लम्बी जिरह के बाद वे तैयार हुए। यह काम इसलिए भी बड़ा था क्योंकि अनिवार्यत: हर सप्ताह लिखना था। इन लेखों के लिए मैं अक्सर उन्हें परेशान करता। सप्ताह में दो-दो तीन दिन लम्बी बातें होतीं। क्या ठीक बना क्या और जोड़ना है वक्त पर देना है आदि-आदि। बातें कई दौर में इसलिए भी होतीं क्योंकि मुझे उनके लेख में काटछांट करनी होती थी और यह भी कोशिश रहती थी कि वे बुरा भी न मानें। कई बार मैं कटु भी हो जाता तो वे मना लेते। मैं उनसे बार-बार कहता दूसरों पर जो लेख लिख रहे हैं उसमें आप स्वयं कम से कम रहिए दूसरे पर फोकस करिए। केवल उतने भर से काम नहीं चलेगा कि आप अमुक से कब कब मिले और आपके बारे में उनसे क्या बातें हुईं बल्कि उनके जीवन के विविध पहलुओं को उजागर करने पर जोर दीजिए। वे दिन वे लोग के केन्द्र में वह होना चाहिए जिस पर लेख लिखा जा रहा है। उनके लेखों में उन लोगों को जीवन की बातों के तथ्य कम होते जो हमारे टकराव के बिन्दु बनते। मेरी बातों को अंतत: वे मान जाते थे और इन्हीं वजहों से बाद के दिनों में मुझे गुरुजी कहने लगे थे। मुझे नहीं पता था कि यह प्रकारान्तर में उन्हीं की आत्मकथा बनने जा रही है और वे बस कुछ ही दिनों के मेहमान हैं। कई बार तो मैं जिस पर लिखने को कहता वे किसी दूसरे पर लिखने का मन बना चुके होते। कई बार विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने लिखा। वे मोबाइल फोन पर लिखते। कई बार तो ऐसा हुआ कि लिखा हुआ उड़ गया और उन्हें फिर टाइप करना पड़ा। मेरी बेटी ने जब मुझे आईपैड दिया तो फेसबुक पर उसकी तस्वीर देखकर उन्होंने कहा– अभिज्ञात मैं एक दिन तुम्हारे यहां अपना एटीएम कार्ड लेकर आ जाता हूं तुम चलो और मुझे खरीद दो। फिर मुझे चलाना भी सिखा देना और मेरा ईमेल आईडी भी बना दो और मेल करना सिखा दो। इस बीच मेरा उन दिनों प्रकाशित कविता संग्रह 'कुछ दुख कुछ चुप्पि' भी लेने वे आने वाले थे। १३ मार्च २०२० को मेरे प्रिय साथी वह फिल्मकार कवि हृदयेश पाण्डेय पर उन्होंने सन्मार्ग के लिए लेख दिया था। वे हृदयेश पर लिखने में विलम्ब कर रहे थे तो मैं नाराज था। खैर लॉकडाउन के कारण सन्मार्ग के साहित्यिक पत्रों के प्रकाशन में कुछ कमी की गयी जिसके कारण वह साहित्यिक पेज नहीं प्रकाशित हो रहा है और वह लेख नहीं छप पाया। वरना इस कड़ी में यह उनका अंतिम लेख होता। वे दिन वे लोग के सारे लेख स्मृति लेख हैं। इन लेखों के बारे में उनकी योजना थी कि पुस्तकाकार प्रकाशित होंगे। उन्होंने इस तरह के लेख पहले भी

अन्य अखबारों में लिखे थे। अब यह उनके उत्तराधिकारियों की जिम्मेदारी बनती है कि उनके लेख व्यवस्थित रूप से प्रकाशित हो जायें। सन्मार्ग में लेखन के दौर में ऐसा भी आया जब वे विषम परिस्थितियों से जूझते हुए लिख रहे थे। एक दिन कहा– मेरे समधी जी गुजर गये हैं। घर में लिखने बैठने की एकदम स्थिति नहीं बन पा रही है किन्तु मैंने मन कठोर और एकाग्र कर लिखने के लिए तैयार कर ही लिया ताकि लेखों के प्रकाशन का सिलसिला न टूटे।

एक दिन उन्होंने बताया कि मैं तुम्हारा फोन नहीं उठा पाया क्योंकि मैं कपड़े धो रहा था। हमने घर में काम बांट लिये हैं। कुछ काम मैं करता हूं कुछ काम पत्नी करती हैं। उन्होंने यह भी बताया था कि मैं तो अंग्रेजी का आदमी हूं किन्तु मेरी पत्नी हिन्दी से एम.ए हैं।

वे रह-रह कर कहते अभिज्ञात श्यामानंद पर लिख दूं.. कला के क्षेत्रों के लोगों से जुड़ी स्मृतियों का खजाना उनके पास था, पर मुझे पता नहीं था कि वे अपना खजाना लिये चले जायेंगे। २४ अप्रैल २०२० की शाम साढ़े चार बजे हृदयाघात से उनका निधन हो गया। एक माह बाद वे ८० के हो जाते। लेकिन मेरे लिए लिए चिर युवा साथी रहे। मैंने उनसे जब भी बात की बेतकल्लुफ की और उन्होंने भी यह एहसास नहीं कराया कि हमारे बीच करीब २४ सालों का फासला है।

•

कलकत्ता का सबसे आत्मीय लेखक : कवि नवल

■ अशोक सिंह

कल रात में प्रभात पांडेय के फेसबुक पोस्ट से कवि नवल के निधन का अप्रत्याशित समाचार मिला। अविस्मरणीय कविता की पत्रिका 'काव्यम्' के संपादक के पोस्ट पर विश्वास करना ही पड़ा।

लॉकडाउन के पहले नवल जी से फोन पर लंबी बातचीत हुई थी। उनके पास अभी भी बहुत कुछ करने की योजना थी। वे उस समय 'सन्मार्ग' के रविवार में लगातार कलकत्ता के लेखकों पर लिख रहे थे। रविवार को ही वे फेसबुक पर पोस्ट करते थे। उनकी याददाश्त बहुत तेज थी। उनके पास साहित्य ही नहीं, संगीत, नाटक, सिनेमा से जुड़ी अनेक स्मृतियाँ थीं, उस दिन कोई संस्मरण पोस्ट नहीं हुआ था। उस रविवार का सन्मार्ग खरीद कर देखा कि नवल जी का संस्मरण नहीं छपा है। अगले दिन फोन पर उन्होंने बताया था कि किसी कारण से प्रकाशित नहीं हुआ है। चूँकि नवल जी का काम सिनेमा के कैमरे की तरह था जो पूरी फिल्म में कहीं दिखायी ही नहीं पड़ता था। उन्होंने बताया था कि अभिज्ञात ने लिखने का प्रस्ताव दिया था वे अच्छा लिख रहे थे। मुझे महसूस होता था कि वे पूरी बात लिख नहीं रहे हैं। इसका कारण उन्होंने बताया था। वे सन्मार्ग से संतुष्ट नहीं थे। अभिज्ञात की अपनी सीमाएं थीं। नवल जी के नाम और चेहरे से परिचय बहुत पहले से था। १९८० से जनवादी लेखक संघ बनने की प्रक्रिया के दौर से कलकत्ता, हावड़ा और उत्तर २४ परगना के हिन्दी के लेखकों से परिचय का दायरा बढ़ रहा था। यहाँ के लेखकों के पास अभिव्यक्ति के माध्यमों की कमी थी। अनियमित लघु पत्रिकाओं का दायरा सीमित था। कोई प्रकाशन नहीं था। ऐसे माहौल में नवल जी ने प्रकाशन के क्षेत्र में जो काम किया, वह अविस्मरणीय है।

कलकत्ता को तीसरी दुनिया के संघर्ष और सपने के शहर के रूप में याद किया जाता है। सिनेमा और नाटक के क्षेत्र में ऋत्विक घटक, सत्यजित राय, मृणाल सेन, बुद्धदेव दासगुप्त, गुल बहार सिंह, उत्पल दत्त, अरुण मुखर्जी, नीलकंठ सेनगुप्त, उषा गांगुली जैसी अविस्मरणीय हस्तियाँ इस शहर की देन हैं। इनका रचना संसार एक बेहतर दुनिया के निर्माण का संघर्ष है। कलकत्ता को छोड़कर इनकी कल्पना करना असंभव है। मृणाल सेन की फिल्मों के सबसे महत्वपूर्ण नायक का नाम ही कलकत्ता महानगर है। कलकत्ता के हिन्दी साहित्य की सबसे बड़ी त्रासदी है– नास्टेल्जिया का अभाव, दक्षिणपंथी शक्तियाँ इस क्षेत्र में बहुत शक्तिशाली हैं। वामपंथी सरकार के समय पश्चिम बंग हिन्दी अकादमी से इतिहास को बड़ी उम्मीदें थीं लेकिन साहित्य और संस्कृति की दुनिया में बनियों के हाथ में नेतृत्व होता है तब वे अपने व्यक्तिगत फायदे के लिए इस्तेमाल करते हैं।

इस वस्तुगत स्थिति को समझने के बाद ही कवि नवल की विलक्षण साहित्य संगठक की भूमिका को याद करना जरुरी है।

उनसे मेरी पहली बातचीत १९८८ में दक्षिण कलकत्ता की मशहूर सड़क पर हो गयी थी उस समय आरंभ, नया दौर और स्टूडेंट्स हेल्थ होम की सांस्कृतिक गतिविधियों से मैं जुड़ा था। उनके पास पूरी खबरें थीं। स्टूडेंट्स हेल्थ होम के बारे में काफी जानकारी थी।

६ दिसम्बर, १९९२ को बाबरी मस्जिद ढहाये जाने के बाद जब कलकत्ता महानगर के कुछ इलाकों में दंगे की परिस्थितियाँ थीं तब कलकत्ता दूरदर्शन पर मुख्यमंत्री ज्योति बसु का भाषण प्रसारित हुआ था। उसमें उन्होंने सांप्रदायिक शक्तियों को कड़ी चेतावनी दी थी। उसके तुरंत बाद ज्योति बसु के भाषण का हिन्दी अनुवाद नवल जी पढ़ रहे थे। उनके पढ़ने का तेवर ज्योति बसु के भाषण से मिल रहा था। कुछ समय बाद ज्ञान मंच में 'प्रतिध्वनि' के एक आयोजन में राजेन्द्र यादव, मनमोहन ठाकौर की आत्मकथा 'अंतरंग' के लोकार्पण के लिए आये थे। राजेन्द्र यादव को दूसरी बार सुन रहा था। मनमोहन ठाकौर की आत्मकथा 'अंतरंग' पढ़ने के बाद नवल जी से मिलने की इच्छा हुई थी पार्कस्ट्रीट में उनके बैंक में जाकर मिला तब से लगातार संवाद बना रहा। मैं प्राय: प्रत्येक शनिवार को उनके बैंक जाया करता था। तब कपिल आर्य भी वहीं थे। कवि नवल अपनी कविता के बारे में बहुत कम लेकिन संस्था की योजना पर बात करते थे। वे अपने एक गुरु की चर्चा बराबर करते थे। उसीका असर था कि वे कभी भी किसी संस्था के पदाधिकारी नहीं रहे।

कलकत्ता के हिन्दी साहित्य और साहित्यकारों के प्रति उन जैसा लगाव मैंने किसी में नहीं देखा। वे पहले साहित्यकार थे जो कलकत्ता की नास्टेल्जिया को जीते थे। यहाँ के कुछ लोग स्थानीय साधनों का उपयोग कर अखिल भारतीय बनने की मानसिकता में रहते हैं।

साहित्यप्रेमी मदन मोहन अग्रवाल (प्रतिभा अग्रवाल के पति) की याद में कलकत्ता के एक लेखक को प्रति वर्ष 'मदन मोहन अग्रवाल स्मृति समारोह' में पुरस्कृत किया जाता था। इस अवसर पर कलकत्ता के रचनाकारों की उस वर्ष प्रकाशित रचनाओं का संकलन प्रकाशित किया जाता था। प्रत्येक वर्ष एक संपादक को जिम्मेदारी दी जाती थी। एक समिति निर्णय लेती थी जिसमें प्रतिभा अग्रवाल, विष्णुकान्त शास्त्री, कृष्णबिहारी मिश्र के साथ नवल जी भी होते थे। नवल जी का प्रभाव सबसे ज्यादा था। यह कलकत्ता का सबसे प्रतिष्ठित सम्मान था। हर्षनाथ, छेदीलाल गुप्त, अवध नारायण सिंह जैसे प्रगतिशील लेखकों को इस सम्मान से सम्मानित किया गया। यह वही दौर था जब पश्चिम बंग हिन्दी अकादमी के गवर्निंग बॉडी के सदस्य आपस में ही पुरस्कार ले रहे थे। राज्य में वाममोर्चा की सरकार थी लेकिन हिन्दी अकादमी के पुरस्कार समारोह की उपस्थिति कभी भी नवल जी द्वारा आयोजित समारोह की बराबरी नहीं कर सकी। कलकत्ता संकलन के बारे में मेरी राय थी कि महानगर की साहित्यिक गतिविधियों की पूरी सूचना नहीं होती थी। 'कलकत्ता - ९५' की आधी से ज्यादा सामग्री मैंने दी थी। कलकत्ता की साहित्यिक गतिविधियों पर मैंने एक रिपोर्ट दी थी। नवल जी ने प्रतिध्वनि के माध्यम से एक साथ ग्यारह पुस्तकों के एक साथ प्रकाशन और भव्य लोकार्पण की योजना बनायी थी। अपने पी. एफ. से लोन लेकर उन्होंने काम शुरू कर दिया था। वे किसी भी योजना में पूरी तरह डूबकर काम करते थे। इसी योजना में कलकत्ता के कई लेखकों की पहली पुस्तक प्रकाशित हुई थी और भव्य लोकार्पण हुआ था। जनसत्ता में अमित सिंह समाचार संपादक थे। साहित्यिक कार्यक्रमों को जनसत्ता ने जिस महत्व के साथ प्रकाशित किया वह अविस्मरणीय है।

'सामरथ' के माध्यम से पार्क सर्कस के पाम एवेन्यू में अपने मित्र के एक प्लैट में वे प्रत्येक शनिवार को किसी एक लेखक पर केन्द्रित कार्यक्रम करते थे। यह बहुत लोकप्रिय हुआ। नवल जी के साथ प्रतिध्वनि में प्रभात पांडेय की जुगलबंदी ने साहित्य की सफलता का नया इतिहास रचा। कविता पर केन्द्रित 'काव्यम्' पत्रिका प्रकाशित हुई। यह पत्रिका पूरे देश में चर्चित हुई। कलकत्ता पुस्तक मेला की अन्तर्राष्ट्रीय पहचान थी।

प्रभात पांडेय की पहल पर प्रतिध्वनि ने विशाल बुक स्टॉल लगाया जहाँ रोज गोष्ठियाँ होती थीं। पहली बार कलकत्ता की किसी साहित्यिक संस्था के स्टॉल के साथ लगातार गोष्ठियों का आयोजन किया था।

देव आनंद की तरह नवल जी हमेशा सक्रिय रहते थे। मैं उनके लेक गार्डेन्स घर पर बहुत बार गया हूँ। उनके परिवार के सदस्यों से परिचित था। वे घर और बाहर दोनों मोर्चों पर सफल थे। लेक गार्डेन्स में वे जहाँ रहते थे वह किराया का घर था अपना निजी फ्लैट नहीं था। लेकिन वे पूरे स्वाभिमान के साथ पूरी मस्ती के साथ जिन्दगी जीनेवाले थे। कभी भी किसी बात की कमी का उन्होंने जिक्र नहीं किया। उनके व्यक्तित्व का पूरा असर उनकी बेटी अदिति में दिखाई पड़ता है। आत्मविश्वास से दमकता हुआ चेहरा, अदिति के बारे में वे बड़े गर्व से चर्चा करते थे।

नवल जी के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता थी कि वे किसी भी व्यक्ति के नकारात्मक पक्ष को जानते हुए भी उसके सकारात्मक पक्ष पर ज्यादा जोर देते थे।

अंतिम बातचीत में उन्होंने अपनी एक इच्छा व्यक्त की थी। उन्होंने कहा था– 'एक बार तुम डी वाई एफ आई पश्चिम बंगाल की अध्यक्ष मीनाक्षी मुखर्जी से मिला दो।'

मैं उनकी इच्छा पूरी नहीं कर सका।

उषा गांगुली के बाद अब नवल जी के न रहने से एक शून्यता का अहसास होता है जिसे निकट भविष्य में भरना मुश्किल है।

वे स्मृतियों में बने रहेंगे।

हार्दिक श्रद्धांजलि।

•

कवि नवल

■ आलोक शर्मा

मेरे जीवित रहते नवल पर मुझे कोई संस्मरण लिखना पड़ेगा, यह बात मेरी कल्पना से भी परे है। सन १९५८ में मेरी उनके साथ पहली मुलाकात हुई थी। उन्हीं दिनों मेरा पहला उपन्यास "उसे क्षमा करना" प्रकाशित हुआ था और वह हमारे एक साझे मित्र रामप्रकाश कपूर के साथ मुझसे मिलने तथा मेरी पुस्तक लेने आये थे और तभी मैंने उनके मुख से उनकी पहली कविता सुनी थी।

"हम जो मात्र अहम हैं/टकरायेंगे/ क्या हुआ/ कंगूरे हमारी अट्टालिका के ध्वस्त हो जायेंगे/हारेंगे नहीं निर्लज्ज हो/नयी-नयी योजनायें फिर बनायेंगे।" उनदिनों नवनीत जैसी अनेक पत्रिकाओं में उनकी रचनायें प्रकाशित हो चुकी थीं।

इस मुलाकात के बाद जो मित्रता की शुरूआत हुई तो वह लगभग बासठ साल तक चलती रही। इतनी लंबी मित्रता के बावजूद वह मुझे बिना अलविदा कहे चले गये। जबकि मिलने पर बिना गले लगाये, वह कभी नहीं रहते थे। उनकी सबसे बड़ी विशेषतायें थीं, उनका मुस्कराना, हमेशा बड़े या छोटे कार्य में नेपथ्य में रहना, हर व्यक्ति के काम के गुणों की प्रशंसा करना, नई-नई योजनाएँ बनाना। पुस्तकों तथा पत्रिकाओं का प्रकाशन करना, अप्रस्तुत जैसे काव्य संकलन का ऐतिहासिक प्रकाशन करना, नए पुराने लेखकों की एक सौ ग्यारह पुस्तकों को एक साथ प्रकाश में लाना। बहुत सारी ऐसी बातें हैं जिन्हें इस ताजा जख्म के साथ लिख पाना मेरे लिए कठिन हो रहा है। बाकी बातें फिर भी लिखूँगा वैसे नवल का पूरा नाम जयप्रकाश खत्री 'नवल' था। चूँकि मैं उनसे चार साल बड़ा था, इसलिए वह लाख मना करने पर भी मुझे प्रणाम किया करते थे, आज मैं उसकी अमर आत्मा को शत् शत् प्रणाम करता हूँ। एक कविता के माध्यम से ही कहना चाहता हूँ।

महायात्रा

नवल!
तुम जिस महायात्रा पर निकले हो
वह यात्रा आरंभ से आरंभ न होकर अंत से आरंभ होती है
क्योंकि जब सब कुछ जलकर हो जाता है खाक
और शेष रह जाती केवल राख तो देह की सद्गति के लिए
उसे किसी नदी के प्रवाह में विसर्जित कर दिया जाता है
और यहीं से आरंभ होती है यह महायात्रा।

और तब यह राख नदी के प्रवाह के साथ बहकर
किसी महासागर के जल में समाहित हो जाती है
और तपते सूरज के प्रखर प्रकाश की प्रचंड ऊर्जा में
वाष्प के साथ आंशिक रूप में एकात्म होकर

बहुत ऊपर आकाश में बादलों के साथ जा मिलती है
परंतु यह यात्रा शनैः शनैः यहां से भी आगे बढ़ जाती है।

और तब यह वर्षा ऋतु गरजते मेघों के साथ एकाकार हो
सूखे खेतों पर बरस पड़ती है तथा माटी में मिल जाती है
परंतु यह यात्रा यहाँ भी नहीं रुकती है
सुबह की गुनगुनी धूप में जब वर्षा से भींगी माटी पर
नई फसल का पहला अंकुर फूटता है तो उसके
अंतस से पनपी सुनहरी बालियों के दानों में बिखर जाती है।

परंतु यह यात्रा यहां से भी आगे बढ़ जाती है
और क्रमशः यह राख रूपी भस्म अन्न के दानों के द्वारा
उनके अंतस तक जा पहुंचती है जो इसे एक
जैविक प्रक्रिया के माध्यम से धातु धारण करने के बाद
उस संतति को जन्म देते हैं
जो अपने जीवन की यात्रा आरंभ से आरंभ करते हैं।

•

सबके प्यारे नवल हमारे

■ डॉ० कमला प्रसाद द्विवेदी

आदर देंगे तभी आदर पायेंगे। जैसी ध्वनि होगी वैसी ही प्रतिध्वनि होगी। हमारे जयप्रकाश जी खत्री ऐसे स्वभाव के थे कि जो भी उनके सम्पर्क में आया उसने उनको अपना अंतरंग बना लिया और वे सबको प्यारे लगने लगे। नवल जी ने यथायोग्य सबको स्नेह, श्रद्धा, सम्मान और सौहार्द दिया इसलिये वे सबके प्यारे थे नवल हमारे थे।

विरोध उनका सैद्धान्तिक होता था। सभी को पता है कि तत्कालीन साहित्य में जो उपेक्षित हो रहा था, उसे प्रस्तुत करने के लिए नवलजी ने 'अप्रस्तुत' (१९६७-७१) का सम्पादन किया और चर्चा में आये। उन्होंने कई जाने-माने सशक्त कवियों को प्रस्तुत किया। सृष्टि गुणदोषमयी है। यहाँ दूध का धोया कौन है? लेकिन सूप के स्वभाववाले नवल जी दोष के थोथा को उड़ा देते थे। व्यक्ति के गुण से ही नवल जी का वास्ता था। जिसका पाप है, वह स्वयं ढोये। यही वजह है कि गुणग्राही नवल जी का साक्षात्कार सदा स्मित-मुख में ही होता था।

नवल जी से मेरी निकटता सन १९९६ से डॉ० प्रतिभा अग्रवाल के यहाँ बढ़ी। साहित्यकारों के संरक्षक प्रतिभा जी के पति मदन मोहन अग्रवाल की स्मृति में 'कलकत्ता' नाम से गत ५-६ वर्षों से पुस्तकाकार रूप से वार्षिकी निकल रही थी। नवल और मनमोहन ठाकौर इससे पहले से ही जुड़े थे। इस वर्ष इसमें एक नया विषय जोड़ा गया – 'साहित्य संकलन एवं हिन्दी साहित्य : कलकत्ता ऐतिहासिक संदर्भ' इसका प्रारूप देने के लिए जो बैठक हुई, उसमें प्रो० कल्याणमल लोढ़ा, डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र, डॉ० प्रतिभा अग्रवाल, नवल, मैं और मनमोहन ठाकौर शामिल थे। मिश्र जी को महानगर की पत्र-पत्रिकाओं का विवरण देना था। उन्होंने विवरण लिखकर भेज दिया। मुझे राष्ट्रीय पुस्तकालय से प्राचीन मुद्रणालयों, संस्थाओं और साहित्यकारों का विवरण देना था। बाकी काम सारा नवल और ठाकौर साहब को पूरा करना था, इसलिए तीन वर्षों में निर्धारित समय पर हम तीनों अनेक बार मिले। इस अवधि में नवल और ठाकौर जी ने साहित्यकारों के ऐसे-ऐसे संस्मरण सुनाये, जिन्हें मैंने कभी नहीं सुना था। सन १९९९ का अंक संस्थाओं के बारे में निकलना था किन्तु अपरिहार्य कारणों से यहीं विराम लग गया।

एक प्रसंग की और भी यहाँ चर्चा करूंगा। आचार्य कल्याणमल लोढ़ा अचानक अस्वस्थ हो गये। 'वेलव्यू' में गहन चिकित्सा कक्ष में भरती थे। सायं ४-६ बजे तक देखने का समय था। तल कक्ष में प्रवेश करते ही नवल जी की आवाज आई – आइये, आइये! देखो इन्दु पंडित जी भी आ गये। डॉ० किरन लोढ़ा ने हमें लोढ़ा जी से मिलने का समय दिला दिया। हम तीनों एक साथ आचार्य प्रवर जी को देखने गये। एक्साइड मोड़ तक साथ-साथ पैदल भी आये। इन्दु से परिचय तो तब से ही था, जब वे अपने शोध के लिए राष्ट्रीय पुस्तकालय में पढ़ने आती थीं।

उस समय तक नवल जी अर्धांगबात से ग्रस्त हो गये थे। पैदल चलने में कठिनाई होती थी लेकिन शारीरिक कष्ट को भूलकर वे अपने स्वभाव में रचे-बसे रहते थे।

डॉ. इन्दु जोशी 'मेरी माँ' का सम्पादन कर रही थीं। इस ग्रंथ के साथ मैं भी जुड़ा था। इन्दु जी के बुलाने पर 'नोपानी प्रेस' मेरा भी जाना होता था। यहीं नवल जी से मेरी प्राय: भेंट होती रहती थी। प्रेस का माहौल बदल चुका था। अब शिवकुमार नोपानी चाचा नहीं संजय नोपानी प्रेस देखते हैं जो अपने पिता की भाँति ही दिल के बादशाह हैं और साहित्यकारों के आदरातिथ्य में नहीं चूकते। नवल जी और संजय जब दोनों एक साथ रहते

हैं तब तो इस आदरातिथ्य की बात ही निराली हो जाती थी। कहना यह है कि आत्मीयता और खान-पान का माहौल होता था।

नवल जी निजी बातें भी बताया करते थे। एक बार उन्होंने कहा था कि हमारे खानदान को एक जागीर मिली थी। हमलोग कुंवर कहे जाते थे। बचपन में मेरे नाम के साथ लोग कुंवर लगाते थे किन्तु बड़े होने पर मैंने इस दासता की उपाधि से स्वयं को पृथक कर लिया।

एक दिन उन्होंने कहा– 'द्विवेदी जी, कराची की उर्दू पत्रिका 'जायजा' के एक विशेषांक (अनुमानत: १९६०-६१) में उपमहाद्वीप की दस श्रेष्ठ कहानियों का संग्रह छपा था। उसमें मेरी कहानी 'दर्द आयेगा दबे पाँव' छपी थी। यदि राष्ट्रीय पुस्तकालय से मेरी कहानी की जीरॉक्स प्रति उपलब्ध करा दें तो अति कृपा होगी। मैंने उर्दू विभाग के अपने साथियों से इसकी खोज कराई किन्तु 'जायजा' के कुछ अंक मिले जो विभाजन के पूर्व के थे। खेद है कि इसे पाने की उनकी लालसा पूरी न हो सकी।

नवल जी से एक बार मैंने कहा– 'हिन्दी पुस्तक एजेन्सी' बंद हो गई और 'हिन्दी प्रचारक संस्थान' बनारस चला गया। यहाँ प्रकाशन का अकाल पड़ गया। ऐसे में आप और इन्दु जोशी ने 'प्रतिध्वनि' से पुस्तकें छाप कर बहुत सराहनीय कार्य किया। वे हाथ झाड़कर निकल गये। बोले– इसमें मेरा क्या है? 'प्रतिध्वनि' तो इन्दु की है। यह सब तो इन्दु का है। मैं दंग रह गया और सोचा कि यह तो ईश्वरीय गुण है जिसके लिए गोस्वामी जी ने कहा था– सबई मानप्रद आप उरमानी।'

डॉ० लखबीर सिंह 'निर्दोष' के व्यक्तित्व और कृतित्व पर कुँवर वीरसिंह मार्तण्ड ने 'साहित्य त्रिवेणी' का विशेषांक निकाला था। जीवनानन्द सभागार में उसका लोकार्पण था। सभाकक्ष में लगभग ४० साहित्यकार थे। सभा आरम्भ होने के लगभग २० मिनट पूर्व नवल जी ने प्रवेश किया और पीछे से तीसरी पंक्ति में बैठ गये। मैं उनके पास पहुँचा। मैंने कहा– आज तीन समस्थानीय विभूतियों के संगम का सुयोग है। उन्होंने कहा– कैसा सुयोग? मैंने कहा– विश्वम्भर जी नेवर आज की सभा के मुख्य अतिथि हैं। आप अध्यक्षता करेंगे। आपके नाम का मैं प्रस्ताव करूँगा। आप, नेवर जी और निर्दोष तीनों चंडीगढ़ से हैं। उन्होंने झट हाथ जोड़ लिया– काफी समय से मैं किसी सभा की अध्यक्षता नहीं करता। मुझे उनकी निस्पृहता पर आश्चर्य हुआ फिर भी मैंने उन्हें प्रधान वक्ता के रूप में प्रस्तुत किया।

जीवन के अन्तिम वर्ष में नवल जी गुड़गाँव अपने छोटे बेटे के पास चले गये और वहाँ से फेसबुक पर छाये रहे। न जाने कहाँ-कहाँ से अति मनोरम प्राकृतिक छवि खोज लाते थे। इन्हीं में इस प्रियंवद (प्रिय बोलनेवाले) की प्रियंवदा भी थी। एक दिन उनका फोन आया कि 'सन्मार्ग' के रविवासरीय अंक में मेरे व्यक्तिपरक लेख छपेंगे। मुझे कुछ दिवंगत लोगों के जन्म-मृत्यु और कृतित्व का विवरण चाहिए। बाकी तो मैं मनोविज्ञान का विद्यार्थी रहा हूँ, अपने ढंग से लिखूँगा। उन्होंने तीन नाम बताया – नथमल केड़िया, सन्हैयालाल ओझा और श्यामलाल उपाध्याय। मैंने उनके व्हाट्स एप पर तीनों का विवरण प्रेषित कर दिया। मैं सन्मार्ग ही मँगाता हूँ। उनके लेखों को मैं पढ़ता रहा हूँ। इन संस्मरणों को पढ़ने में रोचकता है।

मैंने उनसे कहा भी था कि आप के मनोवैज्ञानिक संस्मरणों का स्वाद अलग है। इसे कभी पुस्तकाकार छपाइयेगा। उन्होंने कहा– 'हाँ आप को अभी कुछ और नाम बताऊँगा। पुस्तक भी छपेगी और आप के बारे में भी लिखूँगा। मैंने सोचा कि ये महानुभाव तो दिवंगत लोगों के बारे में लिख रहे हैं। मेरे बारे में क्या लिखेंगे? उसे तो मैं पढ़ नहीं पाऊँगा किन्तु कहाँ का नाम और कहाँ का लेख? विधि के लेख को कौन जानता है। मुझसे छ: वर्ष छोटे थे। पहले ही चले गये– 'मन की मनहीं माँहि रही।'

मैं उनकी कितनी प्रशंसा करूँ? किसी ने ठीक कहा था – कुछ इंसान इतने प्यारे होते हैं कि उनको जितना भी याद किया जाये, कम होता है।

•

चिराग की तासीर का व्यक्तित्व लिए कवि नवल

■ डॉ० कमलेश जैन

अप्रैल २२/२०२० को नवल जी ने एक पोस्ट फेसबुक पर डाली थी कि 'आप कैसे लगते हैं सोते वक्त'। उसमें वे आगे लिखते हैं कि नींद में अच्छे - अच्छे के छक्के छूट जाते हैं। ....लेकिन बकरे की माँ खैर मनाएगी कब तक! नींद तो एक दिन दबोचेगी ही। मन अनमना हो गया। उसी दिन उन्होंने एक और पोस्ट किया

"कुछ भी
करने के लिए न हो
तो आदमी
जरूरत से ज्यादा थक जाता है।"

इच्छामृत्यु को साकार करने वाले नवल जी दो दिन पहले से ही कुछ-कुछ आभास करके थकावट व मौन को अपने जेहन में उतार चुके थे। इसीलिए वे सबसे विच्छिन्न हो गए और किसी को Like करने का उपक्रम नहीं किया। मैंने बांधवी वसुमति डागा से इसपर चर्चा की क्योंकि लॉकडाउन के कारण कोरोना जैसी महामारी से आतंकित सभी को घर की चारदीवारी में ही कैद रहने को विवश होना पड़ा था। अत: फोन पर ही साहित्यिक संदेशों पर चर्चा और आपसी संवाद घंटों होता रहता था।

२४ अप्रैल की सुबह अनमने मन से फेसबुक को ज्योंही मैंने खोला तो नवल जी के महाप्रयाण का समाचार पढ़कर जी धक् से रह गया। आँख से आंसुओं की धार बह निकली – सोच ही नहीं पाई कि हठात् ये क्या हो गया!!! कहीं 'फेंक' न्यूज तो नहीं। बार-बार लोगों की श्रद्धांजलि व नमन पढ़कर विश्वास करना ही पड़ा कि अनहोनी का आभास करने वाले ने चिर-निद्रा में ही अपने को विलीन कर लिया था। रात के साढ़े दस बज गये थे इतनी रात किसी को फोन करना शिष्टता नहीं हैं पर स्वयं को रोक नहीं पाई और वसु को फोन किया वह भी हतप्रभ। उनके विषय में बहुत सी बातें आधी रात तक होती रही, नींद काफूर थी। ऐसी अनुभूति हुई कि इस महामारी में आशा की किरण जगाने वाले सुप्रभात का संदेश बिना सुबह का स्वागत अब कैसे होगा?

"क्या इस तरह
कोई जाता है
जैसे तुम चले गये?
बिना कुछ बोले
बिना कुछ बताये।
वैसे तो तुम घंटों
बतियाते थे
कभी दूरभाष पर
कभी व्हाटसएप पर

दो चार पंक्ति लिखकर
तुम्हारी टिप्पणियां
लाजवाब होती थी–"

सुहृदय मित्र अनुरोध जी ने श्रद्धांजलि देते हुए उन्हें ऐसा उलाहना दिया कि उसका किसी के पास कोई जवाब नहीं है। नवलजी ने १७ अप्रैल को लिखा था–

"जिन्दगी एक अबूझ पहेली है, मेरे हमसफर
जिसे धीरज से समझा
और पार किया जा सकता है
कागज की नाव के सहारे भी।"

७ अप्रैल को वे अपने प्रिय प्रतीक 'प्रियम्वदा' का आह्वान करते हुए एक महामारी से निजात पाने के लिए महामृत्युंजय मंत्र को सिद्ध करने की मिन्नत करते हुए कहते हैं–

जब पूरा विश्व
एक दु:स्वप्न को जी रहा है
मैं तुम्हारा आह्वान कर रहा हूँ
प्रियम्वदा!
समस्त विश्व के परित्राण की भूमिका रचो,

अवांछित कारावास में वे लोगों को जीने का हौसला देते हुए कहते हैं–

पहला चरण
तीसरा चरण, चौथा चरण
छोड़िए
केवल प्रभु के
दो चरणों पर विश्वास रखिए
और अपने चरणों को घर पर रखिए।।

आस्थावादी कवि का जीवन-दर्शन सबकी सलामती और मंगल कामना करते हुए कहता है–

"जहां हो, जैसे हो, वहीं....
वैसे ही खुश रहना "दोस्तों"
तुमसे मिलना जरूरी नहीं
तुम्हारा होना ही काफी है!"

जिन्दगी में दोस्ती नहीं, दोस्तों में जिन्दगी ढूंढ़ने वाले जां निसार, हर दिल अजीज, अजातशत्रु नवल जी स्वयं अपना प्रतिमान थे। उनका व्यक्तित्व चिराग की तासीर सा रोशन था– आदरणीय रंगकर्मी मदन सूदन जी प्राय: कहा करते थे–

"जहाँ रहेगा, वहीं रोशनी लुटाएगा
चिराग का अपना कोई मकां नहीं होता"।

नवल जी का सौम्य, सजीला आध्यात्मिक संस्पर्श से ऊर्जस्वित शारीरिक सौष्ठव अपनी उम्र को धता बताकर १६ साल के फुर्तीले कर्मठ व स्वप्नों से भरपूर कैशोर्य को दीप्तिमान करता था। चश्मे के पीछे से झाँकती रतनारी आँखें अन्तर्मन को भेदकर लोगों के भीतर छुपे हुए आवेग व भाव-प्रवाह को तुरंत पढ़ लेती और वे दीपक की लौ की तरह अपने चतुर्दिक प्रकाश का निर्झर प्रवाहित कर देते।

फेस-बुक की आभासी दुनिया के माध्यम से वे अपने भावोद्गारों को व्यक्त करते थे, करीबन २-३ सालों से उनके भाव-जगत का साक्षात्कार मैंने बहुत निकटता से किया। 'सुप्रभात से आरंभ उनकी दैनिक गतिविधि प्रत्येक दिन के माहात्मय पर्व त्योहार, ह्रास, उल्लास देशभक्ति शहीदों की स्मृति व अन्यान्य तिथियों की याद दिलाकर प्रफुल्लित कर देती थी। उनकी पारखी आँखें प्राकृतिक सुषमा को जिस तरह से उजागर करती उसमें परमपिता की छवि अनायास ही झिलमिला उठती – नदी नाले पर्वत झरने तालाब उदित व अस्तगत सूर्य पशु-पक्षी, भित्तिचित्र और न जाने कितने तरह-तरह के पुष्पित-पल्लवित व सुवासित फूलों की मनोहर छवि से 'फेसबुक' की बॉल चमक उठती थी। उसी के परिप्रेक्ष्य में लिखी गई उक्तियां एक नया सबक सिखा जाती थीं। उनके दो पसंदीदा शब्द आयाम थे। 'रमता' व 'प्रियम्वदा' इसी को संदर्भित कर उन्होंने आध्यात्मिक संस्पर्श की जिन ऊँचाइयों को छुआ, वही कविता की रसप्रवाहिणी पीयूष धारा बन गई। 'साकार से निराकार', 'स्थूल से सूक्ष्म', 'हर्ष से विषाद', 'शोक से आश्वासन' व 'मरण से जीवन' तक के इस पड़ाव में चैतन्यता प्रखर से प्रखरतर होकर 'अस्तित्व' की सार्थकता तलाश करने लगी थी। नवल जी नई-नई प्रतिभाओं की कविताएँ और चित्रांकित छवि को पुर्नप्रस्तुति के जरिये स्वीकार्य बनाते थे।

बहुआयामी प्रतिभाशाली नवल जी की आध्यात्मिकता में वैदिक ऋषि मुनियों की अन्तर्दृष्टि की प्रखरता परिलक्षित होती है–

२ जनवरी २०२० को उन्होंने बीसवीं सदी को रेखांकित करते हुए एक नारी की छवि अंकित की जिसके बाल खुले हैं व आँखों के इर्द-गिर्द लटें बिखरी हैं जिसमें अनगिनत ख्वाब लहरा रहे हैं और तब लिखते हैं–

"कल तक उन्नीस की थी
आज चढ़ा है बीसवाँ साल मुझे।
बीसवाँ लगने से
क्या हो जाता है?

बेहद एहतराम के साथ स्वागत करती हूँ
क्रिएटिव लोगों का
और नान पाजिटिव लोग!
उन सबको बताना है
कि इक्कीसवीं सदी को
जब लगता है बीसवाँ साल
तब क्या-क्या हो सकता है।"

भविष्यद्रष्टा कवि ने २०२० की मनहूसियत को शायद पहले ही भाँप लिया था कि आज क्या-क्या हो सकता है। ठीक इसके पहले वे लिखते हैं कि आप साल बदलते देख रहे हो, हमने साल भर लोगों को बदलते

देखा है और तब सांत्वना देते हुए कहते हैं कि जब तुम अपनी समस्या का कोई समाधान नहीं पाते हो तो समझो कि यह समस्या सुलझाने की नहीं है यह एक सत्य है जिसे स्वीकारना ही होगा।

और आज जो वह घटित होता दिख रहा है। उससे रूह कांप उठती है प्राकृतिक प्रकोप का तांडव, बाढ़, झंझावात, हिम-स्खलन, भूकंपन, सूखा, भीषण शीत व ताप की प्रचंडता से जीवन तहस-नहस हो रहा है तो कोविड १९ महामारी की विभीषिका ने संपूर्ण विश्व को तबाही के गर्त्त में ढकेल दिया है। शिक्षा, चिकित्सा, आर्थिक विकास रोजगार व जीविका विहीनता समस्या अपने चरमस्वरूप में है। मानवीय मूल्यों का ह्रास व आसुरी शक्तियों के विकास के मध्य आम जन जीवन व शासकीय सत्ता कर्त्तव्यविमूढ़ है।

नवल जी ने सूक्ति के माध्यम से एक मंत्र भी देते हैं– "है जिन्दगी तो अपने हैं अपने हैं तो जिन्दगी है।" प्यारी सी लाइन उल्टी या सीधी कैसे भी पढ़ो।

नवल जी से मुलाकात की वह घड़ी याद आती है जब बांधवी डॉ० वसुमती डागा के आवास पर आकाशवाणी, दूरदर्शन व साहित्यिक जगत की विशिष्ट हस्तियों के बीच नवलजी अपनी वाग-विदग्धता से व अपने मधुरिम व्यक्तित्व से सबसे अलग दिख रहे थे तभी उनका परिचय मदनसूदन जी ने 'छुपे रुस्तम' के रूप में दिया। उनके व्यक्तित्व की बारीकियों को तभी पकड़ने की चेष्टा पर मारने लगी। जीवन-पथ पर संघर्ष के थपेड़े खाती सुश्री डागा को उन्होंने जो जीवंत मंत्र दिया उसकी गूंज मेरे दिल को आज भी झंकृत करती है–

"शख्स बनकर नहीं
बल्कि शख्सियत बनकर जिओ,
क्योंकि
शख्स एक दिन विदा हो जाता है
लेकिन शख्सियत जिंदा रहती है।"

उनके पास भावी परिकल्पनाओं का अद्भुत पिटारा था और उसके बहुमूल्य रत्न वे यथाअवसर वितरित करते रहते थे। प्रेम, प्रकृति, पथ, पगडंडी, दोस्त-दोस्ती, भूख, अभाव, लालसा, अतृप्ति, कैशोर्य, यौवन व वार्धक्य वगैरह-वगैरह भावों को मूर्त रूप देना उनकी फेसबुक वॉल की विशिष्टता थी।

उनका कवित्व रूप जितना विस्तृत, संतुलित व बोधगम्य था, गद्य लेखक के रूप में आत्मीय संस्पर्श, तीक्ष्ण दृष्टि व व्यक्तित्व की बारीकी की स्पष्टता भी उतनी ही मोहक प्रभावी व ऊर्जस्वित थी।

सुशील गुप्ता, सुकीर्ति गुप्ता, विद्या भंडारी, श्रीनिवास शर्मा, छविनाथ मिश्र, सिद्धेश, निर्भय मल्लिक, कवि हर्ष, स्वदेश भारती व मानिक बच्छावत जैसी विशिष्ट विभूतियों के साथ उनका स्नेहिल संपर्क व तहजनित एकात्मकता से भरपूर संस्मराणात्मक गद्य अद्भुत किस्सागोई का आनंद देते हैं। मृत्युंजय उपाध्याय को याद कर वे लिखते हैं–

"एक महान रचनाकार का दु:ख
यही तो होता है
कि उसे वैसा नहीं समझा गया
जैसे वह खुद को समझता है।"

आलोचक श्रीनिवास शर्मा के जन्मदिन पर उनकी साहित्यिक व व्यक्तिगत विशिष्टता का उल्लेख करते

हुए नवल जी लिखते हैं– "सम्भवत: इसीलिए श्रीनिवास व्यक्तिगत या वैचारिक स्तर पर कभी इतने अपने लगते हैं कि उनमें शिशु सुलभ सरलता नजर आती है और कभी इतने अजनबी कि उनमें बिगड़ैल बैल नथुने फुलाता नजर आता है।

दूरदर्शन की निर्देशिका सुशील गुप्ता की भावमूर्ति को प्रतिष्ठित करते हुए वे कहते हैं कि– "लेकिन हर बार वह मुझे उस फूल की तरह लगी जो बिना किसी रख-रखाव के उगता है हवा जिसे झुलाती है और आकाश जिसे मस्तक ऊँचा रखने की प्रेरणा देता है।

व्यक्तित्व के इस विरोधी घालमेल को नवल जी बहुत सुंदर ढंग से उभारते हैं। नवल जी की जिन्दगी जीने का अपना एक अलग फलसफा है – वे मानते हैं 'जीवन में समस्या तो हर दिन खड़ी है, जीत जाते हैं वो जिनकी सोच बड़ी है।

कवि सिद्धेश जी के विषय में नवल जी लिखते हैं कि सिद्धेश अपने समकालीनों में वही बाबू मोशाय है "उनकी मोहकता हिना की सुगंध की तरह है जो धीरे-धीरे किसी कल्पनालोक में पहुंचाती भी है ताजगी भी देती है।

ऐसे अनगिनत उद्धरण उनकी पारखी दृष्टि के पुख्ता प्रमाण है। 'नारी मंच अपूर्वा' व 'अप्रस्तुत' काव्य संकलन के द्वारा युवा वर्ग की प्रतिभा को तराशने का उन्होंने अद्‌भुत कार्य किया।

अपने कुछ निकटस्थ आत्मीयजनों की दिनचर्या को भी उन्होंने साहित्यिक पटल पर बहुत कुशलता से उभारा है जो एक अभिनव पहल है यथा समाजसेवी पवन कुमार, रंगकर्मी मित्रा सेन मजूमदार, टिंकू दीप ठाकौर (मनमोहन ठाकौर के बेटे) वगैरह वगैरह।

कवि मित्र ज्योतिषाचार्य वास्तुशास्त्री विन्दु शिंगारी की एक कविता 'मुक्त होने की कोशिश में हूँ' को नवल जी ने जैसे अपनी यात्रा के गंतव्य को निर्धारित मानकर पहले ही उसका दिव्यदृष्टि से दर्शन कर लिया था और तभी वे आगे लिखते हैं–

"जन्म निश्चित है
मरण निश्चित है
अगर
कर्म अच्छे हैं तो
स्मरण निश्चित है।"

आभासी दुनिया के सरताज नवल जी का हर दिन

"मैं भी तर गया
मैं भीतर गया।"

जीवन की सरिता को पारकर आप परम धाम चले गए पर आपकी कमी बहुत खल रही है।

•

ध्रुवतारा की तरह सदा साहित्य जगत में जगमगाता रहे

■ कालीचरण गुप्त 'सय्याद'

८ जुलाई १९७६ : नीलम आये थे घर। नीलम के साथ आये रुद्रजी। नीलम एक पत्रिका का प्रकाशन करना चाहते हैं, १५ अगस्त के दिन 'पत्रिका' प्रकाशित होकर आ जायेगी। नवल जी का पूरा सहयोग है। वह हमेशा परोक्ष में रहकर सेवा करने में विश्वास रखते हैं।

७ जनवरी १९७७ : नवल के पास गया था। कल वो लोग रानीगंज जायेंगे। साथ जाने का मन हो गया। नवल ने भरे मन से साथ जाने को कहा भी मगर ठाकौर साहब ने फोन पर एक ऐसी हाँ..... की जिसका सीधा अर्थ होता है नहीं।

१९ अप्रैल १९७९ : बहुत दिनों बाद नवल और आलोक शर्मा मिल गये थे। नवल में तो बहुत परिवर्तन दिखाई दे रहा है। आजकल 'दोहा' लिख रहे हैं– धुन सुनाते भी डूबकर हैं। लगता है राममय हो गये हैं।

२८ मार्च १९८३ : अभूतपूर्व समारोह – डॉ. प्रभाकर माचवे, मनमोहन ठाकौर और नवल के प्रयास से एक बहुत ही सुन्दर साहित्यिक समारोह संपन्न हुआ। डॉ. सराफ (नेत्र चिकित्सक) के उद्यान में श्री शिवकुमार जोशी की अध्यक्षता में हास्य-विनोद-व्यंग्य भरी उक्तियों से कलाकार कवि-लेखक का सम्मान। प्राय: सभी हिन्दी - उर्दू के (हिन्दी ही ज्यादा) उपस्थित थे। चौपटानन्द के नाम से लिखी गयी कुण्डलियाँ नवल द्वारा, मदनसूदन की संगत में सुनायी गयीं। शिवकुमार जोशी की आरती उतारी गयी। सर्वप्रथम मुझे ही मंच पर बुलाया गया – टोपी पहनायी गयी, आरती उतारी गयी, फूल बरसाये गये, घण्टी बजायी गयी और शंखध्वनि की गयी। दो घण्टे तक मस्ती का आलम रहा।

२३ अप्रैल १९८३ नवल की पुस्तक 'साँप और सीढ़ी' पढ़ी। हर पन्ने पर लगता है कि एक चिनगारी फैली हुई है। मगर वह न राख बन पाती है न शोला। आज का ईमानदार कवि और लिख भी क्या सकता है चारों तरफ वातावरण में जो विषाक्त धुआँ उठ रहा है उससे सारी मानवता का दम घुटा जा रहा है। अभावग्रस्त जीवन, अनाचार-अविचार, स्वार्थपरता, रिश्तों का मजाक हृदय की सहज अनुभूतियों का लोप होते जाना। अपनी संस्कृति, अपने देश, अपने खून से किसे प्यार नहीं होता और जब कोई इनकी तरफ उँगली उठायें तो क्या मन करता है।

११ मई १९८३ : राजस्थान क्लब में अनामिका की ओर से नवल की काव्य-पुस्तक 'साँप और सीढ़ी' का नाट्य-मंचन हुआ। अपने आप में अनूठा। अनामिका इसके लिए धन्यवाद की पात्र है। विमल लाठ के दिग्दर्शन में मंच अभिनेताओं द्वारा कुछेक कविताओं के भाव को बामुजस्सम दिखाना। दृष्टि-काव्य।

नवल बहुत ही मिलनसार लड़का है, बहुत अच्छा इन्सान, बड़ा अच्छा कवि।

२३ मई १९८५ : नवल की कोई नयी पुस्तक प्रकाशित हुई है। उसका विमोचन हुआ। उसकी कविता पर भावनृत्य भी पेश किया गया। मैं उन दिनों अस्वस्थ था। भगवान करे, नवल ध्रुवतारा की तरह सदा साहित्य जगत में जगमगाता रहे।

९ मई १९८६ : कवि गुरु रवीन्द्रनाथ को उनकी १२५वीं साल-गिरह के अवसर पर कलकत्ते की श्रद्धांजलि। देखने लायक अद्वितीय। प्रभातफेरी, चलते-फिरते नाटक आवृत्ति। फूलों से सजी पाड़ की रेशमी साड़ियाँ पहने हुए कवितायें रास्ते चलते मंत्रमुग्ध कर रही हैं, छायी जा रही हैं सारे अस्तित्व में, शंखध्वनि, गुरु प्रतिमा की पूजा-अर्चना।

जोड़ासाँकू स्थित उनके जन्म स्थान पर उस पावन, भव्य भवन में असंख्य नर-नारियों की भीड़ श्रद्धांजलि हेतु। धूप-तेज धूप में पंक्तिबद्ध श्रद्धालुओं के चेहरे और भी ज्यादा तेजस्वी लग रहे हैं।

अखिल भारतीय भाषा परिषद में 'स्वर-समवेत' की तरफ से सप्ताह व्यापी रवीन्द्र जयन्ती का पहला दिन, 'नवाग्रह' नाम की पुस्तक का विमोचन। नवल, नीलम वाला ग्रुप, सारे कलकत्ता को समेट कर एक जगह लाकर खड़े कर देने पर उतारू है ताकि फिर कोई काम असाध्य न रह जाये।

आओ - आओ, नगरवासियों स्वागत है।

नवल को और उसकी टीम को बधाई।

७ सितम्बर १९९३ : घटना २१ नवम्बर की है। श्री मनमोहन ठाकौर की तीन पुस्तकों का प्रकाशन किया है 'प्रतिध्वनि' ने। आज समारोह है 'ज्ञानमंच' में ११ बजे।

'अग्नि' नवल की एक कविता पर नृत्य-नाट्य चेतना जालान और 'पदातिक' की अभिनेत्रियों द्वारा। 'अग्नि' के सार्वभौम अस्तित्व पर यह कविता है। अग्नि ही है जो जीवन देती है जो प्रेम, लालसा मृत्यु सब का कारण है। साहित्य को समर्पित प्रतिध्वनि के सदस्यों ने ३० महीने में २१ या २३ पुस्तकों का प्रकाशन सीमित साधनों के बावजूद कर दिया बहुत ही प्रशंसनीय है।

१८ जनवरी १९९४ : नीलम की विदा की तैयारी कर रहा हूँ– क्या बोलूंगा, कैसे बोलूंगा उस दिन स्टेज पर। यह नवल, यार एक न एक मुसीबत खड़ी कर देता है।

अब मेरी पुस्तक प्रकाशित करायेंगे। अब कहते हैं साहित्य संस्मरण लिखूँ। पचास वर्षों से उन साहित्यिकों के साथ जिन्दगी में ऐसी-तैसी करा रहा हूँ। लिख दूँगा कि सब स्वार्थी हैं। अपना-अपना उल्लू सीधा करते हैं और चलते बनते हैं।

३० जुलाई १९९४ : आये दिन चर्चे होते रहते हैं मेरी पुस्तकों का प्रकाशन हो जाये। मेरे अपने सभी चाहते हैं, मगर ऊपर वाले की मर्जी नहीं है। जब समाज वाले ही ज्यादा आर्थिक सहयोग देंगे तो फिर पुस्तक छापने में क्या जोर आता है यह तो रेवती भाई कहते हैं। ठाकौर साहब, मृत्युंजय सब चाहते हैं, मगर कौन नहीं चाहता यह मालूम नहीं? तभी तो कोई बात बन नहीं रही है। नवल बेटा, तुम पुस्तकें तो मेरी प्रकाशित करोगे ही, पर मेरे चले जाने के बाद। कोई बात नहीं वहाँ से नजारा देखेंगे। विमोचन के दिन हाजिर रहूँगा चाहे चन्द्रलोक से ही आना पड़े।

२४ जनवरी १९९५ : नवल को मेरी पुस्तक प्रकाशन की बहुत चिन्ता है। यह उसका प्यार है मेरे लिए, उसका सम्मान है, श्रद्धा है, कुछ भी समझ लो।

१ अप्रैल १९९५ : एक सरप्राइज दिया नवल ने कि छविनाथ जी ने अपनी एक पुस्तक आपको समर्पित की है। मेरे तो रोंगटे खड़े हो गए सुनते ही। हे ईश्वर, क्या मैं इस योग्य हूँ कि ये संन्यासी कवि अपनी साधना के बाद लिखी गयी कविताओं को सचमुच मुझे समर्पित कर दे। मैं इस काबिल नहीं छविनाथ। तुम सचमुच पागल ही हो खैर।

और दूसरी बात नवल ने बतायी कि नौ अप्रैल को ही प्रतिध्वनि यह घोषणा करेगी कि सितम्बर में वरिष्ठ कवि कालीचरण गुप्त 'सय्याद' की पुस्तकें प्रकाशित कर प्रतिध्वनि उनका आशीर्वाद प्राप्त करेगी।

नवल, छविनाथ, मृत्युंजय आनेवाले हैं। निश्चित समय पर धीरे-धीरे तीनों आ गये।

ये लड़के, ये मेरे साथी मेरे लिए कितना कर रहे हैं, कितना करना चाहते हैं। मेरी रचनायें आज को देखते हुए उतनी ऊँची नहीं है फिर क्यों इतना स्नेह, इतनी श्रद्धा, इतनी ममता है मुझसे इन लोगों को।

(कहा अनकहा सच) से साभार उद्धृत

कवि जो नेपथ्य नायक था : नवल

■ कपिल आर्य

नवल से मेरी पहली मुलाकात १९५८ के सितम्बर में हुई। पंजाब नेशनल बैंक के चौरंगी स्क्वायर ब्रांच में। हमारी यह मुलाकात आगे चलकर दोस्ती में बदल गयी जो आजीवन बनी रही।

हां, यह बताना तो मैं भूल ही गया कि पहली मुलाकात में मैं जिस व्यक्ति से मिला था वह कोई 'नवल' नहीं था बल्कि जयप्रकाश खत्री था। उसका जन्म अमृतसर में ११ मई १९४० में हुआ था। बाद के दिनों में वह अमृतसर से दिल्ली कानपुर होता हुआ कलकत्ते पहुंचा था १९५७ में और यहां बैंक में नौकरी करने लगा था। तब वह मेरा सहकर्मी था। नौकरी की शुरूआत में हम दोनों ने ६ महिनों तक ४० रुपए के मंथली स्टायपेंड पर क्लर्क की ट्रेनिंग ली थी। बाद में हमदोनों को ११२ रुपए का मासिक वेतन मिलने लगा था।

कुछ ही दिनों में मेरा ट्रांसफर चौरंगी ब्रांच से डलहौसी के ऑफिस में हो गया और नवल का साथ छूट गया। फिर सिर्फ टेलीफोन से उसके साथ 'हाय हेलो' होती रही।

नवल जन्म से पंजाबी और उसके व्यक्तित्व में पंजाबियत का रंग भरा था। वह एक जिंदा दिल इंसान था। आपसी नोंकझोंक में वह मुझे चुगद और मैं उसको अहमक कहता था। लेकिन वह अहमक नहीं बुद्धिमान था। चतुर, चालाक और हंसमुख था। खूब हंसता, हंसाता और अपनी मखौल भी उड़ाता था। लेकिन अगर दूसरा कोई उसकी मखौल उड़ा देता तो जवाब में वह उसको धूल चटा देता था। मैंने यह भी देखा था कि बड़े-बड़े कवि-लेखकों को धमका देना उसकी फितरत में शामिल था। दोस्तों के बीच बातचीत में वह बहुत मुखर और बतरस का बादशाह था।

जब पहली बार उसने कलकत्ते की साहित्यिक दुनिया में अपना कदम रखा तब देखते-देखते वह एक साथ कई भूमिकाओं में सक्रिय हो गया और कई महत्वपूर्ण कार्य कर डाले। वह बहुमुखी प्रतिभा का धनी लेखक था। उसने एक साथ कई विधाओं में लिखा जिनमें कविता, कहानी, संस्मरण आदि शामिल थे। उसकी कई पुस्तकें प्रकाशित हैं जिनमें आधी रात का शहर, कालाहांडी और थरथराती नदी पर पुल, सांप-सीढ़ी, तुमसे अलग नहीं और अपात्र उल्लेखनीय हैं।

कलकत्ते में जब कभी कहीं काव्य-पाठ का कार्यक्रम होता वह मुझे अपने साथ जरूर ले जाता। बस, ट्राम, टैक्सी का भाड़ा खुद ही देता। चाय-पानी का पैसा भी मुझे नहीं देने देता और इस तरह तत्काल मेरा अघोषित गार्जियन बन जाता। हमदोनों का एक दूसरे के घर आना - जाना था जब कभी लेक गार्डेस उसके घर गया खाना खाकर ही लौटा। वह खुद भी भोजन रसिक था।

उसे पैसों का लालच नहीं था। कवि था– नाम वाम का रहा हो तो रहा हो। वैसे कवि के रूप में उसका बहुत नाम हुआ। वह कलकत्ते का सर्वाधिक लोकप्रिय कवि था। कलकत्ता ही क्यों पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, झारखंड, छत्तीसगढ़ तक उसका नाम फैला था। पता नहीं क्यों बाद के दिनों में उसने आकाशवाणी और दूरदर्शन के कार्यक्रमों में जाना छोड़ दिया था।

हां, एक बात और आप लोगों को बताना चाहता हूं। मेरे साथ आपसी बातचीत में नवल अपने किन्हीं 'गुरु' का हवाला बार-बार देता था। उन्हीं गुरुजी ने उसको दीक्षा दी थी कि तुम कभी सामने मंच पर नहीं आना।

नेपथ्य में रहना और जो करने का मन करे, करते रहना, जिसका नवल ने अपने साहित्यिक जीवन में पूरा-पूरा निर्वाह किया। खुद कभी मंच पर नहीं आया। उसने बहुत काव्य-गोष्ठियों का आयोजन किया। हॉल के अंदर मंच पर कविगण अपना-अपना काव्य-पाठ करते रहते और वह बाहर गेट पर चुपचाप बैठा रहता।

हां, नवल का मेरी पत्नी उषा के साथ रोज सुबह-सवेरे 'सुप्रभात' होता था। यह मुझे दो महानगरों- कोलकाता और मुंबई के बीच संस्कृति के आदान-प्रदान जैसा लगता था।

नवल ने चौपटानन्द, खड़ेश्वर बाबा, श्रीधर बाबू, बांके बिहारी जैसे कितने ही छद्मनामों से भी लिखा। जब उसने 'अप्रस्तुत' का प्रकाशन आरंभ किया तो उसकी शृंखला में अनेकानेक रचनाकारों को छापा। एक दशक में लगभग ३०० सौ नयी पुस्तकें और अनेक लेखक सामने आए। अप्रस्तुत के अलावा नारी मंच अपूर्वा, स्वर-सामरथ, साहित्य बुलेटिन, काव्यम् आदि पत्रिकाओं के पीछे उसी का हाथ था।

बाद में 'अपात्र' नाम से उसका एक कहानी-संग्रह भी आया। कुल मिलाकर उसका साहित्यिक अवदान बहुत बड़ा था।

फिर एक दिन ऐसा भी आया कि नवल अपने पीछे अपना रचना संसार छोड़कर अचानक २४ अप्रैल २०२० को इस दुनिया से चले गए। मेरी दृष्टि में तो कवि नवल नेपथ्य नायक ही था।

•

शहतूत का बगीचा

(कवि मित्र नवल जी के लिए)

■ कुलदीप थिंद

उसकी आँखों में साईबेरिया से अलीपुर चिड़ियाखाने तक
उड़कर आते हुए पक्षी नजर आते हैं
वो पक्षी तो मौसम के अनुसार जगह बदला करते हैं
परन्तु ये नजर आने वाले पक्षी अपनी
चेतना की जमीन को
एक ठोस धरातल देने के लिए
यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ उड़ा करते हैं
वो अपने दोनों कंधों को मजबूती से जकड़ लेता है
उसके कदमों के नीचे
विश्वास की चादर
हमेशा अपने आप बिछती रहती है
उसकी कोई भी मंज़िल सिर्फ अपने लिए ही निश्चित नहीं की हुई
वो तो काफ़ला लेकर चलने में विश्वास रखता है
और काफ़ले का तो हमेशा से ही
कोई न कोई मकसद हुआ करता है
मकसद का मतलब उसके लिए
एक सदाचार भरी ज़िंदगी को हाथ में लेकर जीना
वो कभी भी अकेला नहीं
परन्तु कभी-कभी उसके साथ अकेलापन आ चिपकता है
मुट्ठी में से सरकती हुई रेत अपने लिए रख ली है उसने
परिवार की तरफ रुचि तो रखता है
परन्तु उसमें अपने आप को गुम नहीं होने दिया
उसने निरलेप कर लिया है अपना आप
परन्तु ये निरलेपता
एक झरने का कल-कल करता पानी है
जिसमें तरह-तरह के पक्षी
अपनी-अपनी चोंच डालकर प्यास बुझा रहे हैं
उसको अभी भी किसी 'सोमना' का इन्तज़ार है
जो वक्त-बे-वक्त उसे फोन करे
या रास्ते में अचानक ही सामने से आ टकराए
कल कहाँ थे आप
कई जगह ढूँढा मैंने
दरअसल वह हर एक के लिए हर जगह है
और कभी-कभी किसी के लिए किसी जगह नहीं
उसे अपनी खामोशी बहुत ही प्यारी है।

●

शब्द-फूल

■ कुसुम जैन

बहुत कम ऐसे शख्स होते हैं जो जाने के बाद भी बेतहाशा याद आते रहते हैं। वे होते हैं कुछ ऐसे जिन्हें उम्मीद और सपनों ने अपने हाथों से गढ़ा हो। नवल जी उम्मीदों और सपनों की एक खूबसूरत लिखावट थे। हँसी के उजास और जीवन के उल्लास से दमकता उनका चेहरा मुझे उस ड्राइंग की याद दिला देता है जिसे बचपन में प्राय: सब ने बनाया होता है। ऊपर नीले आसमान में चमकता हँसता हुआ सूरज, उड़ती चिड़ियाएँ और नीचे बाग-बगीचे में हरे पेड़-पौधे, घास, रंग-बिरंगे फूल आदि आदि। ड्राइंग में चित्रित हँसते हुए सूरज की मानिंद था नवल जी का चेहरा।

लगभग ४५ साल पहले पहली बार एक कार्यक्रम में नवल जी को देखा था। चेहरे पर वही सदाबहार हँसी विद्यमान थी थोड़ी घटत-बढ़त के साथ। नीलम श्रीवास्तव भी उनके साथ थे। दोनों की दोस्ती पूरे महानगर में एक उदाहरण थी। हालाँकि निभाने में बाजी नवल जी ने ही मारी। नीलम जी ने सेवानिवृत्त होने के बाद पहले कोलकाता छोड़ा और बाद में चले गए ऊपर।

शुरू के वर्षों में मिलना-जुलना ज्यादा नहीं होता था। इंदु जोशी के संपादन में अपूर्वा का प्रकाशन हुआ जो अपने आप में अपूर्व थी। सामग्री और साज-सज्जा दोनों के लिहाज से स्तरीय थी। हमेशा अगले अंक का इंतजार होता था। समय-समय पर अपूर्वा के तत्वावधान में छोटी-मोटी कवि गोष्ठियों का आयोजन होता रहता था जिनमें अक्सर किसी भी कवि को एकल पाठ के लिए और उस पर टिप्पणी या आलोचकीय वक्तव्य के लिए किसी साहित्यकार को भी आमंत्रित किया जाता था। उसमें नवल जी हमेशा रहते थे। नवल जी के लिए कभी कोई छोटा होता ही नहीं था। सम्मान उन्हें बहुत प्रिय था, देना भी और लेना भी। माँ और सम्मान उन्हें सबसे प्रिय थे।

मेरा दूसरा संग्रह 'कविता : एक दुख की नदी' राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित हुआ, तो उस संग्रह को पढ़ कर उन्होंने एक कविता लिखी थी। उक्त संग्रह का भारतीय भाषा परिषद में लोकार्पण हुआ था। गीतेश जी के कारण कोलकाता महानगर के अधिकांश दिग्गज और शीर्षस्थ आलोचकों और रचनाकारों की उपस्थिति से मैं अत्यंत अभिभूत थी और थोड़ी नर्वस भी। नवल जी ने गीतेश जी को पहले ही कह रखा था कि सबसे पहले उन्हें ही बोलने के लिए आमंत्रित किया जाए। उन्होंने कविता क्या पढ़ी, बोलने का सुर ही बदल दिया था। पहले पहल बोलने के पीछे उनका मंतव्य भी यही था।

संभवत: अप्रैल महीने की बात है। लॉकडाउन हो चुका था। अक्सर व्हाट्सएप पर अपनी कविताएँ भेजते थे। फेसबुक पर नहीं हूँ इसलिए। एक दिन फोन पर बोले – आपको मैं अपनी कविताएँ भेजूँगा और आप उन पर अपनी टिप्पणी लिखेंगी। मैंने कहा – आपकी कविता पर मैं टिप्पणी लिखूँ! यह क्या कह रहे हैं आप। जवाब में बोले – हाँ, रोज मैं आपको कविता भेजूँगा और आप उस पर टिप्पणी लिखेंगी। उन्होंने कविताएँ भेजी और मैंने उन पर टिप्पणी लिखी। टिप्पणी पर उनकी प्रतिक्रिया थी– आप पर मेरा विश्वास सही था।

शब्द-फूल

■ कुसुम जैन

बहुत कम ऐसे शख्स होते हैं जो जाने के बाद भी बेतहाशा याद आते रहते हैं। वे होते हैं कुछ ऐसे जिन्हें उम्मीद और सपनों ने अपने हाथों से गढ़ा हो। नवल जी उम्मीदों और सपनों की एक खूबसूरत लिखावट थे। हँसी के उजास और जीवन के उल्लास से दमकता उनका चेहरा मुझे उस ड्राइंग की याद दिला देता है जिसे बचपन में प्राय: सब ने बनाया होता है। ऊपर नीले आसमान में चमकता हँसता हुआ सूरज, उड़ती चिड़ियाएँ और नीचे बाग-बगीचे में हरे पेड़-पौधे, घास, रंग-बिरंगे फूल आदि आदि। ड्राइंग में चित्रित हँसते हुए सूरज की मानिंद था नवल जी का चेहरा।

लगभग ४५ साल पहले पहली बार एक कार्यक्रम में नवल जी को देखा था। चेहरे पर वही सदाबहार हँसी विद्यमान थी थोड़ी घटत-बढ़त के साथ। नीलम श्रीवास्तव भी उनके साथ थे। दोनों की दोस्ती पूरे महानगर में एक उदाहरण थी। हालाँकि निभाने में बाजी नवल जी ने ही मारी। नीलम जी ने सेवानिवृत्त होने के बाद पहले कोलकाता छोड़ा और बाद में चले गए ऊपर।

शुरू के वर्षों में मिलना-जुलना ज्यादा नहीं होता था। इंदु जोशी के संपादन में अपूर्वा का प्रकाशन हुआ जो अपने आप में अपूर्व थी। सामग्री और साज-सज्जा दोनों के लिहाज से स्तरीय थी। हमेशा अगले अंक का इंतजार होता था। समय-समय पर अपूर्वा के तत्वावधान में छोटी-मोटी कवि गोष्ठियों का आयोजन होता रहता था जिनमें अक्सर किसी भी कवि को एकल पाठ के लिए और उस पर टिप्पणी या आलोचकीय वक्तव्य के लिए किसी साहित्यकार को भी आमंत्रित किया जाता था। उसमें नवल जी हमेशा रहते थे। नवल जी के लिए कभी कोई छोटा होता ही नहीं था। सम्मान उन्हें बहुत प्रिय था, देना भी और लेना भी। माँ और सम्मान उन्हें सबसे प्रिय थे।

मेरा दूसरा संग्रह 'कविता : एक दुख की नदी' राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित हुआ, तो उस संग्रह को पढ़ कर उन्होंने एक कविता लिखी थी। उक्त संग्रह का भारतीय भाषा परिषद में लोकार्पण हुआ था। गीतेश जी के कारण कोलकाता महानगर के अधिकांश दिग्गज और शीर्षस्थ आलोचकों और रचनाकारों की उपस्थिति से मैं अत्यंत अभिभूत थी और थोड़ी नर्वस भी। नवल जी ने गीतेश जी को पहले ही कह रखा था कि सबसे पहले उन्हें ही बोलने के लिए आमंत्रित किया जाए। उन्होंने कविता क्या पढ़ी, बोलने का सुर ही बदल दिया था। पहले पहल बोलने के पीछे उनका मंतव्य भी यही था।

संभवत: अप्रैल महीने की बात है। लॉकडाउन हो चुका था। अक्सर व्हाट्सएप पर अपनी कविताएँ भेजते थे। फेसबुक पर नहीं हूँ इसलिए। एक दिन फोन पर बोले – आपको मैं अपनी कविताएँ भेजूँगा और आप उन पर अपनी टिप्पणी लिखेंगी। मैंने कहा – आपकी कविता पर मैं टिप्पणी लिखूँ! यह क्या कह रहे हैं आप। जवाब में बोले – हाँ, रोज मैं आपको कविता भेजूँगा और आप उस पर टिप्पणी लिखेंगी। उन्होंने कविताएँ भेजी और मैंने उन पर टिप्पणी लिखी। टिप्पणी पर उनकी प्रतिक्रिया थी– आप पर मेरा विश्वास सही था।

मुझ पर इतना भरोसा गीतेश जी के बाद नवल जी ने ही किया। वे चाहते थे मैं लिखूँ। मैं थी कि घरेलू व्यस्तताओं और आलस से ऊपर ही नहीं उठ पा रही थी। हाँ, अब इनसे ऊपर उठने की कोशिश जरूर करुँगी।

यहाँ लिखा एक-एक शब्द एक-एक फूल है जिसे मैं नवल जी पर चढ़ा रही हूँ, जो जितने बड़े कवि थे उससे बड़े खाँटी इंसान थे। खरी-खरी कहने वाले खरा सोना।

यूँ तो बहुत बातें है प्यारे एहसासों से भरी। सब को लिखना संभव थोड़े ही है। बस मन उनकी खुशबू से हमेशा महकता रहे। उनको मेरी दो कविताएँ शब्द फूल के रूप में समर्पित है–

कवि, याद करते हुए तुम्हें

आँखें नम है
आवाज नम है
भीतर - बाहर
सब कुछ नम है
यादों में लिपटी
साँसें नम है
बेबाक हँसी की
मस्ती नम है
फूलों की महकती
खुशबू नम है
स्वप्नों की
आँखें नम है
आकाश नम है
धूप नम है
बादल नम है
प्रियंवदा की
थाथी नम है
और तो और
महाकाल की
छाती भी नम है

याद, आते हो बेपनाह

हर रोज भेजना
गुलाब का फूल
और हाथ जोड़े
लिख भेजना
'सुप्रभात कवि'
अपनी हँसी के साथ

लिखती रहा करो
रोज कुछ न कुछ
कुछ न सही एक
छोटी सी टिप्पणी
या कुछ नोट्स
अर्से बाद फूटा है
एक झरना
बिखर उठी है कविताएं
तुम्हारी हँसी की तरह।

•

परिवार, रिश्तेदार और दोस्तों की दुनिया को आलोक मुखर किये रहते थे नवल जी

■ डॉ० कृष्णबिहारी मिश्र

डरावने सन्नाटे को उल्लास मुखर करनेवाले बुलबुल सराय की चहक यकायक चुप हो गयी। पंजाब नेशनल बैंक में कार्यरत जयप्रकाश खत्री से मेरा परिचय कराते हुए उनके सहकर्मी मित्र और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के मेरे कक्षा बन्धु कामेश्वर नाथ मिश्र ने किंचित् विशेष महत्व देते हुए कहा था, 'नवल नाम से कविता भी लिखते हैं, जयप्रकाश जी इसलिए आपके सजातीय हैं और नितान्त मूल्यवान था यह क्षण, जब हम सहज रूप में अंतरंग मैत्री भाव में जुड़ गये और चित्तरंजन एवेन्यू स्थित कॉफी हाउस, जो उनके कार्यालय से सटा था में बैठ कर पहली मुलाकात में नवल जी ने अपनी कुछ नयी कविताएँ सुनायी थी उनकी प्रतिभा उद्भावना ने मुझे आकृष्ट किया था यह हमारी मैत्री की शुरुआत थी जो सहज रूप में प्रगाढ़तर होती गयी। गहरी आत्मीयता और अंतरंगता के बावजूद नवल जी से बोलते - बतियाते मैं 'खत्री साहब' संबोधन का प्रयोग करता था, यद्यपि वह मुझसे वय-कनिष्ठ थे।

कॉफी हाउस की अपनी मित्र गोष्ठी को नवल जी ने 'मद्रासी रेस्तरा', 'गुरु निवास' में स्थानांतरित कर दिया था जो 'एंबेसी होटल' के समीपस्थ चित्तरंजन एवेन्यू पर अवस्थित था और जिसे नवल जी ने नया नाम दिया था 'बुलबुल सराय' नवल जी प्रधान नायक थे बुलबुल सराय के, जिनके आकर्षण में साहित्यिक मित्रों का अड्डा जमता था। 'गुरु निवास' यानी 'बुलबुल सराय' में और इस प्रकार नवल जी की सामाजिक संसक्ति का दायरा बड़ा होने लगा था। रुचि और परिकल्पना भी बदलने-बढ़ने लगी थी।

उनका मैत्री-सूत्र अपनी युवा पीढ़ी से लेकर प्रौढ़ विद्या और पद विशिष्ट पीढ़ी से जुड़ गया था और मित्रों की रचनाधर्मिता को ऊँची और व्यापक जमीन उपलब्ध कराने के लिए नवल जी प्रकाशन परिकल्पना में प्रवृत्त हो गये थे और परिकल्पना को कायदे से रूपायित करने के लिए बुलबुल सराय से उठकर अंतरंग सहयोगियों के साथ बड़ाबाजार आकर सुराना प्रेस और शिवकुमार नोपानी के प्रेस में वह अपनी महफिल उल्लासित करने लगे थे, जहाँ मित्रों की संगति के आकर्षण में मैं भी अक्सर शाम को यहाँ पहुँच जाता था। शाम होते ही बड़ाबाजार के प्रेस में नवल जी के साहित्यिक मित्रों की महफिल जमने लगती थी। इस प्रकार उनकी लोकप्रियता में समृद्धि आई जो उन्हें काम्य थी पर उनका रचना-धर्म किंचित् शिथिल हो गया। इस प्रकार अपनी सर्जनशील ऊर्जा का नवल जी ने आत्मीयजन के दरवाजे रोशनी जगमगाने में नियोजित कर दिया। लोकेषणा का यह ऋण पक्ष है, जो नवल जी के लिए क्षतिकर सिद्ध हुआ। अतिरिक्त लोक संभक्ति का नवल जी के धर्म धरातल और स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और यह असह्य त्रासदी जिसकी करीब के लोगों को भी तनिक आशंका नहीं थी यकायक घटित हो गयी।

कायिक बाधा के कारण पहले जैसा मिलना-जुलना तो संभव नहीं था मगर दूरभाष के माध्यम से कुछ देर बतियाने का आग्रह हमदोनों के मन में बराबर बना रहता। पिछले कुछेक सालों से खत्री साहब अपनी कटि पीड़ा और सांस की तकलीफ की चर्चा अपनी नैसर्गिक प्रसन्नता के विपरीत किंचित् उदास स्वर में करने लगे

थे। मन में दुश्चिंता का जगना स्वाभाविक था मगर उनकी जीवन-यात्रा की अवधि इतनी छोटी है, इसकी आशंका मुझे तो क्या उनके निजी चिकित्सक डॉ० कादिर जिनकी प्रतिभा के कायल थे नवल जी, उन्हें भी नहीं थी। उनकी सदा मुस्कराती रहनेवाली जीवन-चर्या और यथोचित गत्वरता उनकी दुर्बलता को छिपाये रहती थी, जो उनके स्वास्थ्य के बारे में भ्रम की सृष्टि करती थी मेरे आत्मीय बंधु नवल जी के चरित्र का सर्वाधिक उज्ज्वल आयाम था विद्या जगत से लेकर अपने परिजन के प्रति उनका प्रगाढ़ प्रेम। आज के आत्म-केंद्रित, विलासप्रिय कठकरेजी समय में वृद्ध माता - पिता के प्रति वैसी गहरी निष्ठा कम दिखाई पड़ती है। बहुत करीब से मैंने देखा है। अपने पापा से उनका व्यवहार अंतरंग दोस्त जैसा था और माता की सुख-सुविधा के प्रति अत्यन्त संवेदनशील, पूरे परिवार, रिश्तेदार और दोस्तों की दुनिया को नवल जी आलोक-मुखर किये रहते थे।

मेरे स्नेहभाजन और नवल जी के प्रति सम्मानशील कवि श्री रामेश्वर मिश्र 'अनुरोध' ने जब मुझे फोन से बेवक्त मुझे फोन से नवल जी के आकस्मिक निधन की सांघातिक खबर दी तो मैं विस्मित और विषाद-भार से श्लथ होते हए किसी तरह डॉ० इन्दु जोशी से नवल जी की लाडली बिटिया अदिति का फोन नंबर लेकर अपना नाम बताया नाम सुनते ही उसका रोदन फूट पड़ा मेरी स्पर्श कातर प्रकृति के लिए असह्य था वह विषाद राग कठिन था उससे बात करना तथापि उसे संबोधित किया 'अरे बेटा, बंद करो यह राग, तुम्हारे पापा रोना जानते ही नहीं थे। विषाद को उल्लास में रूपांतरित करनें की कला उनमें सिद्ध थी और बेटा, तुम्हें पहली बार नर्सिंग होम में देखते ही तुम में देव माता के दर्शन किए थे। यह रोदन राग बंद करो बेटा, मां को देखो फिर फोन करुँगा तो माँ से बात कराना। अदिति किंचित् स्वस्थ होकर आत्मीय आवाज में बोली– आपने ही मेरा नाम रखा था अदिति पापा ने बताया था। अदिति को फोन करने का आश्वासन तो दिया पर फोन करने की हिम्मत नहीं जुटा पाया। अपनी लाचारी के लिए बिटिया रानी से जरा मनस्थ होने पर माफी माँगूंगा, आश्वस्त हूँ, अदिति मेरी संवेदना और दुर्बलता को समझेगी।

•

नवल के धनी नवल

■ गिरिधर राय

कहानीकार कपिल जी आर्य का फोन अक्सर महीने-दो महीने में एक-दो बार तो मेरे पास आ ही जाता है – आप कैसे हैं राय साहब? मैं मजे में हूँ, इधर कोई कार्यक्रम किया आपने? मैं अभी बम्बई आया हूँ, कोलकाता आते ही आप से मिलूँगा। आपकी काव्य-लहरी बहुत सुन्दर चल रही है। अखबारों में पढ़ने को मिलता रहता है। बड़ी ही सरलता और सहजता से कह देते हैं।

ऐसे ही उनका फोन उस दिन भी शाम को आया। मैंने समझा रूटीन फोन है। दुआ-सलाम के बाद बोले – रायसाहब! एक बहुत ही दुखद समाचार है। मेरे पूछने पर कि क्या हुआ? कपिल जी भर्राई आवाज में बोले – नवल जी नहीं रहे.. फोन कट। मैं यह भी नहीं पूछ पाया क्या हुआ? कैसे हुआ?

मैं कुछ भी सोच नहीं पा रहा था कि डॉ० प्रेमशंकर त्रिपाठी जी का फोन आया और उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा – कुछ सुना आपने? मैंने कहा – जी। थोड़ा रुक कर वे बोले – विधि का विधान देखिए, नवल जी की अंतिम यात्रा में हम लोग सम्मिलित भी नहीं हो सकेंगे।

फोन रखने ही जा रहा था कि फोन की घण्टी फिर बजने लगी। इस बार बरेली से डॉ० राहुल अवस्थी का कॉल था – राय साहब! क्या सुन रहा हूँ यह? मैंने कहा – न्यूज सही है। नवल जी नहीं रहे। नवल जी के बारे में उनसे अभी बात हो रही थी कि दूसरे फोन पर श्यामा सिंह जी, जीवन सिंह जी, सुरेश चौधरी जी के कॉल आये। अवस्थी जी से बात करते हुए ही दूसरे फोन पर सबसे बातचीत हुई। किसी ने सूचना दी किसीने कन्फर्म किया। अवस्थी जी सब सुनते रहे।

नवल जी के नाम से विख्यात साठोत्तरी पीढ़ी के सशक्त हस्ताक्षर का पूरा नाम जयप्रकाश खत्री बहुत कम लोग ही जानते रहे होंगे। कलकत्ता (कोलकाता) स्थित उस पंजाब नेशनल बैंक को छोड़कर जहाँ वे बीस साल पहले तक कार्यरत थे। याद ही नहीं आ रहा है कि नवल जी से पहली बार कब और कहाँ मिला था। हो सकता है बड़ाबाजार लाइब्रेरी, कुमारसभा पुस्तकालय, भारतीय भाषा परिषद या परिवार मिलन के किसी कार्यक्रम में या फिर कलकत्ता पुस्तक मेले में।

कोलकाता के सभी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में आपको बड़े ही सम्मान के साथ मुख्य अतिथि विशिष्ट अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाता था और वे बड़ी प्रसन्नता के साथ हर कार्यक्रम में शिरकत करते थे लेकिन वहाँ जाकर सबसे पीछे की कतार में किसी सीट पर बैठ जाते थे। आयोजकों के लाख प्रयत्न के बावजूद भी वे मंच पर नहीं जाते थे और यदि गए भी तो थोड़ी देर बाद वापस आकर फिर पिछली कतार की सीट पर बैठ जाते थे। मुझे याद है कई बार उन्हें देख कर के मैं उनके पास बैठ जाता था थोड़ी देर बात करने के बाद वे बोलते थे – कविवर, अब आप आगे जाइए क्योंकि आपको तस्वीरें लेनी हैं, फोटो खींचना है, कल अखबार में देना है, यहाँ से साफ तस्वीरें नहीं आएँगी और मुझे जाना ही पड़ता था।

परदे के पीछे रहकर आयोजनों को सफल बनाना और लोगों को आगे बढ़ाना उनका स्वभाव था। मिलने पर दोनों हाथों से अंकवार में भर लेते थे और पीठ पर थपकियाँ देते थे। किसी को भी छोटा महसूस नहीं होने देते थे। वे केवल कवि-साहित्यकार के रूप में ही नहीं अपितु एक जिन्दादिल इन्सान के रूप में लोकप्रिय थे!

मुझे याद है एक बार डॉ० अरुण प्रकाश अवस्थी जी के साथ परिवार मिलन के एक कार्यक्रम में बेहला स्थित सेवा सदन में गया था। वहाँ देखा तो नवल जी पहले से ही उपस्थित थे। काफी देर तक अवस्थी जी से बात होती रही।

अवस्थी जी जब मंच पर काव्य पाठ के लिए गए तो उस समय नवल जी मेरे कंधे पर हाथ रखकर बोले – कविवर जानते हो, मैं तुम्हें इतना प्यार क्यों करता हूँ? मैंने कहा – मुझे कैसे मालूम! तो बोले – इसलिए कि अरुण प्रकाश अवस्थी मेरे दोस्त हैं और तुमको बहुत मानते हैं। अच्छा लिखते हो लिखते रहो। अजीब विश्वास था उनको अरुण प्रकाश अवस्थी जी पर।

अपने परिचितों के साथ प्रात:कालीन सुप्रभात संदेश का आदान-प्रदान खूब करते थे। वे सोशल मीडिया पर काफी सक्रिय थे। अगस्त २०१९ में नवल जी ने बहुत ही करीबी मित्रों को लेकर 'मेरी सुबह' के नाम से फेसबुक पर एक कॉलम शुरू किया था। काफी लोगों ने उसमें भाग लिया। चित्रों पर दोहे और कविताएँ लिखना तो जैसे उनकी आदत थी। अगस्त २०१८ 'ओ मेरे समुद्र' शीर्षक से उनकी यह कविता देखिए–

ओ मेरे समुद्र!
तुम्हारी थाह पाने के लिए ही
तो मछली की तरह
उछाल मारता हूँ
अथाह जल-राशि में!

एक बूँद को जानकर ही
तो जानना चाहता हूँ
असंख्य बूँदों का रहस्य!

और जितना जान पाता हूँ
उससे भी अधिक
रह जाता है निराकार सा!

रह जाता है
उतने का उतना ही तुम्हारा सौंदर्य!

आ जाता हूँ
फिर से आरम्भिक बिन्दु तक!

सागर में रहकर भी
रह जाती है मछली
प्यासी की प्यासी!

अथाह हो तुम प्रियम्वदा
समुद्र की तरह!

फेसबुक पर किसी मित्र की पोस्ट को लाइक करना और तुरंत जवाब देकर उसे उत्साहित करना वे भूलते नहीं थे। मेरे द्वारा लिखी कुण्डलियों की तारीफ अक्सर किया करते थे। एकबार तो मेरी एक कुण्डलिया

'अच्छे दिन' के जवाब में तुरंत एक कुण्डलिया लिखकर भेजी। आप स्वयं देखें–

अच्छे दिन के नाम पर फंड कर दिया बंद
एनजीओ मुश्किल-पड़े, कहाँ मिले मकरंद
कहाँ मिले मकरंद, गया है निकल दिवाला
नजरें जिनकी बुरी, हुआ मुँह उनका काला
कहते गिरिधर राय, सुनो हे कपटी बच्चे
तुम क्या, इससे ठीक हो गये अच्छे-अच्छे

इसके जवाब में नवलजी की कुण्डलिया देखिए –

अच्छे दिन के नाम पर, खुली ढोल की पोल!
बकझख जितनी भी करें, कहीं मगर है झोल!
कहीं मगर है झोल, बना है खूब तमाशा!
झूठ कभी न ढँका, बाँट लो भले बताशा!
कहत चौपटानन्द, सुनो हे प्यारे बच्चे!
पड़े समय की मार, लोटते अच्छे-अच्छे!

फेसबुक पर आज भी ये दोनों कुण्डलियाँ ज्यों की त्यों मौजूद हैं। कुल मिलाकर नवल जी नवांकुरों को आगे बढ़ाने में हमेशा तत्पर रहते थे। भारतीय भाषा परिषद द्वारा आयोजित काव्य-लहरी में कवियों की चयन प्रक्रिया में आपकी भी महत्वपूर्ण भूमिका होती थी। काव्य लहरी की सफलता में आपका बहुत बड़ा योगदान था। कुमारसभा पुस्तकालय एवं बड़ाबाजार लाइब्रेरी के कार्यक्रमों में आपकी गरिमामय उपस्थिति जरूर रहती थी।

वे भाग्यशाली रहे होंगे, जिन्होंने नवल जी को काव्यपाठ करते हुए देखा होगा। बड़ाबाजार लाइब्रेरी की द्वैमासिक काव्य-गोष्ठी में वे अक्सर आया करते थे और कुछ खास लोगों को आमंत्रित करने के लिए मुझे निर्देशित भी करते रहते थे। उनमें परम मित्र बड़ाबाजार लाइब्रेरी के पूर्व अध्यक्ष श्री विमल लाठ जी, श्री आलोक शर्मा जी एवं डॉ० कादिर का नाम अवश्य रहता था। कार्यक्रम की अध्यक्षता के लिए वे हमेशा विमल लाठ जी का नाम लेते थे। आदरणीय विमल लाठ जी ने तो उनकी कविताओं को नाटिका के रूप में मंच पर भी प्रस्तुत किया था।

उनकी एक और गजब की आदत थी। कार्यक्रम के उपरांत जब मैं उन्हें छोड़ने जाता था तो मुझे लौटा देते थे। कहते थे क्या समझते हो मैं अकेले नहीं जा सकता हूँ। यही नहीं, कभी मैं व्यस्त रहता था और रमाकांत सिन्हा या किसी अन्य कवि को उन्हें छोड़ने के लिए या गाड़ी में बैठाने के लिए भेजता था तो उससे भी यही कह कर लौटा देते थे। अपनी यह आदत उन्होंने अंत तक नहीं छोड़ी। अपनी अंतिम यात्रा में भी किसी को शामिल नहीं होने दिया। अकेले चले गये और गये भी तो ऐसे समय गये कि लॉकडाउन की वजह से कलकत्ते का साहित्य समाज न तो अंतिम दर्शन कर सका ना ही अंतिम यात्रा में शामिल हो सका। जाने का दिन भी क्या चुना २४ अप्रैल राष्ट्रकवि दिनकर जी की पुण्य तिथि।

●

नवल, कवि नवल, नवल नवल

■ गीतेश शर्मा

चितपुर रोड स्थित फूलकटरा में सुराना प्रिंटिंग प्रेस होती थी। शुरूआती दौर की मेरी एक-दो पुस्तकें वहाँ छपीं। हर शाम को वहाँ लेखकों-कवियों का अड्डा होता था जहां कवि नवल प्राय: जाया करते थे। मैंने एक पुस्तक लिखी और नवल जी से पूछा कि इसका नाम आप दीजिये। उन्होंने नाम दिया– पंजाब : सुलगता सवाल। पुस्तक खूब बिकी। चर्चा भी हुई।

नवल जी से इधर हाल के वर्षों में मेरी हफ्ते में दो बार बातचीत होती थी। हर वाक्य के बाद कहते– दो मिनट और लूँगा। अंतत: चालीस मिनट बाद कहते थे– ठीक है भाई साहब! फिर और बात करेंगे। ईमानदारी से कहता हूँ कि उनकी बातों से ज्ञानवर्धन होता था। उनके अचानक चले जाने से मन में कई सवाल उठे और उनका जवाब भी मिला। निष्कर्ष यह निकला कि उनके टक्कर का कोई भी व्यक्ति हिंदी लेखन जगत में नहीं है। मैं इसमें सारे हिन्दुस्तान को समेटता हूँ।

पचास-पचपन वर्षों में मैंने उनके चेहरे पर कभी कोई तनाव या उदासी नहीं देखी। हमेशा हंसमुख चेहरा। कभी किसी की न निंदा की न किसी ने उनकी निंदा की। अजातशत्रु शब्द शत-प्रतिशत उनके व्यक्तित्व पर लागू होता है।

उनकी कविताओं में रोमांस और विद्रोह दोनों का संगम है। उनकी एक खास बात और थी जो उन पर ही लागू होती है और वह यह कि वे लोगों को आगे लाते थे और खुद पर्दे के पीछे रहते थे। मंच पर औरों को सम्मान दिलाते थे। खुद कभी कोई पुरस्कार नहीं लिया।

हाल के वर्षों में मेरी अंतरंगता उनसे कुछ ज्यादा ही बढ़ गई थी। हम सभी जोर देकर उनको मुख्य अतिथि बनाते थे और कविता की शुरुआत उनकी कविताओं से करते थे। उनका तकियाकलाम था– भाई साहब! आप ये गलत कर रहे हैं। यह गलती हम बार-बार करते थे और अपने आपको गौरवान्वित महसूस करते थे।

शुरूआती दौर में मैं उनको सेठिया संप्रदाय का कवि मानता था। प्रतिभा अग्रवाल, श्यामानंद जालान, मदन मोहन अग्रवाल आदि का उनको वरदहस्त प्राप्त था। जब करीब आया तो पता लगा कि उन्होंने कभी किसी से कोई लाभ नहीं उठाया। चाहते तो जितना लिखा उसको छपा सकते थे लेकिन ऐसा नहीं करके उन्होंने औरों की किताबें छपवाईं। उनको लेखक, कवि के रूप में पहचान दी।

दद्दा यानि छविनाथ मिश्र ने वेदों का अनुवाद हिंदी में किया, काव्यात्मक। उनकी दो मोटे खण्डों की पुस्तक नहीं छपती अगर नवल नहीं होते। उनकी काव्ययात्रा के तीन चरण हैं– पहला नवल, दूसरा कवि नवल और तीसरा नवल नवल।

वो अपनी पहचान के लिए कभी प्रयत्नशील नहीं रहे। पर न जाने क्यों कलकत्ता के हिंदी जगत ने भी उनको वह पहचान नहीं दी जिसके वे हक़दार थे।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है उन्होंने कभी कोई पुरस्कार नहीं लिया। हमने जनसंसार की गोष्ठी में उनको बिना बताये एक प्रशस्ति पत्र और एक शाल ओढ़ाकर उन्हें पुरस्कृत किया। मेरे आग्रह को स्वीकार तो कर लिया लेकिन बहुत नाराज हुए। उन्होंने कहा– भाई साहब! और कोई होता तो मैं नहीं लेता लेकिन आपके सम्मान की रक्षा के लिए ले रहा हूँ।

ऐसे थे हमारे नवल, कवि नवल, नवल नवल....

●

'स्वान्त: सुखाय तुलसी'

■ गोविन्द फतेहपुरिया

नवल से
परिचय कैसे हुआ कब हुआ क्यों हुआ
इसका जवाब तो
पचास के दशक में जाकर
खोजना पड़ेगा।
और मैं उसकी जीवनी या संस्मरण
या फिर साहित्यिक नीलांजन भी नहीं
कर रहा हूँ
और न ही उसके योग्य हूँ
फिफ्टि के दशक में मैं कॉलेज में था
और
वहाँ के बंगाली लिटरेरी सोसाइटी के
देखा-देखी
मैंने एक हिन्दी लिटरेरी सोसाइटी की
स्थापना की
जिसका मैं सेक्रेटरी था
और
कलरव नाम से एक
हिन्दी मैगजीन का भी
प्रकाशन किया गया।
जिसकी रोजमर्रा की व्यवस्था की
तलाश में
उदयभान मिश्र से मुलाकात एक
साहित्यिक समागम में हुई
उदयभान ने
अपनी एक पुस्तक दी
जिसमें उस पुस्तक को समर्पित किया था
उस पंजाब मेल को
जिसने मुझे
हावड़ा स्टेशन लाकर पटक दिया।
और भी था
पर
बात अटक गई
काम का भार सौंप दिया गया
क्योंकि
मैगजीन का काम था
और
यूँ भी साहित्य में मेरी
एक रुचि थी।
तो यहीं से एक सिलसिला
चल पड़ा।
छोटी - मोटी गोष्ठी हो
या
किसी आए हुए कवि से मिलना हो सके
या
सुनना हो तो
साथ में जाना इत्यादि
और इसी तरह
हमलोग कुछ स्टूडेण्ट बंगीय हिन्दी परिषद में
इन्वाइट करने गए
उदयभान के सुझाव पर
और
अभी तक याद है
चेन स्मोकर
काले कलूटे
परम ज्ञानी
बहुत प्यार से
हमलोगों से बात

और
आने की हामी
इस तरह का सिलसिला चल पड़ा
कोई भी कवि
कलकत्ता आता
तो
हमलोग उन्हें कॉलेज में बुलाते
जहाँ तक
याद आता है
इसी मिलने - जुलने में
उदयभान के कारण नवल से
मुलाकात हुई।
जब - तब बैठ जाते थे
कभी कॉफी-हाउस
कभी घर पर
उदयभान रेडियो और टेलिविजन में
स्टेशन डायरेक्टर बन कर चला गया।
पर
नवल से मेरा मिलना-जुलना
होता रहा।
क्योंकि
उस वक्त के सांस्कृतिक संस्थान से
मेरा और उसका
जुड़ाव
बराबर-बराबर था।
अनामिका
भाषा परिषद
संस्कृति संसद में
नवल का
वैचारिक और कार्य-कलाप दोनों में
जुड़ाव था।
ये सारी संस्थाएं
उस वक्त जड़ पकड़ चुकी थीं
और
पनपने लगी थी।
इसके समानान्तर था
कवि-सम्मेलनों का कार्यक्रम
एक ही बार
निराला जी कलकत्ता आए
और
लक्ष्मीकांत झुंझुनवाला के
घर पर
उनके दर्शन
और
सामने - आमने
सुना।
राम की शक्तिपूजा
और
वह तोड़ती पत्थर
इलाहाबाद के पथ पर।

दिनकर जी को
सत्यनारायण पार्क में
'मेरे नगपति मेरे विशाल'
'परशुराम की प्रतीक्षा'
बच्चन की
'दिन में होली रात में दिवाली'
शिक्षायतन हॉल में
भवानी भाई को
एक ही बार
सुना
'जी हाँ, हुजूर मैं गीत बेचता हूँ'
और
जेल में
'आज बहुत पानी बरसा होगा'
और भी
दिग्गज कवियों को सुना।

इन सब के बीच मिलना-जुलना
नोंक-झोंक
चलती रही।
'सवासी' लिखी तो
श्रोताओं में
मेरा भी नाम अव्वल दर्जे पर था।

अफसोस
इस बात का है कि
नवल
मंचीय कवि नहीं थे
लोक-लुभावना
नहीं लिखा
'स्वान्तः सुखाय तुलसी'
और
ना ही कोई
राजकीय सम्मान
फिर वही तुलसी
'संतन को सीकरी सो कहाँ काम'
बाबू हरिश्चन्द्र
शायद इन जैसों के लिए
कहकर गए थे
'सेवक गुनी जन
क्या चाकर राधा
रानी क्या
हरिचंद नगद दामाद
अभिमानी क्या'

•

मर्म को स्पर्श करने वाले कलमकार-नवल जी

■ जयकुमार 'रुसवा'

मिलने - बिछुड़ने की प्रक्रिया से गुजरते हुए जीवन-यात्रा सतत गतिमान रहती है। इस यात्रा में न जाने कितने ही मुसाफिरों से हमारी मुलाकात होती है। अधिकतर ऐसे मुसाफिर होते हैं जिनके साथ दुआ-सलाम हुई, तनिक सा हँसे-बोले-बतियाए फिर वह अपने रास्ते और हम अपने रास्ते, परन्तु कुछ मुसाफिर ऐसे भी होते हैं जो मन के होते हैं। उनके साथ बैठकर उस मुलाकात को पड़ाव बनाने का मन करता है। उनके साथ मन के उद्‌गारों को बाँटने का मन करता है। उस मुलाकात को स्मृति के कोष में संजोए रखने की अभिलाषा होती है। नवल जी से मिलना मेरी जीवन-यात्रा का उल्लेखनीय पड़ाव है। उनका कद भले ही छोटा था पर बहुत बड़ी सोच रखने वाला, मिलनसार, हंसमुख और खुले हृदय के एक दिव्य व्यक्तित्व का नाम रहा है– 'नवल'। उनका जादुई स्नेहिल और मृदुल व्यवहार किसी भी मिलने वाले को अपना मुरीद बनाने में सक्षम रहा है। मुक्तछंद काव्य और दोहा विधा में नवल जी का सृजन बहुत ही अनूठा और प्रभावशाली रहा है। मैं उनसे मुक्तछंद काव्य की बारीकियाँ सीखने हेतु सदैव लालायित रहा। कई बार मैंने सहज रूप से कहा भी है कि – दादा! चेला बना लो। तो हँसने लगते और कहते– रुसवा! मंचों पर धूम तो मचाए हुए हो, 'कलकत्ते के काव्य जगत की पहचान बने हुए हो'। तुम्हें क्या चेला बनाऊँ। गुरु बने हुए हो तुम तो। इस बात पर हम दोनों हँस पड़ते हैं।

बहुत सारी ऐसी मुलाकातें हैं नवल जी के सान्निध्य की जिनकी स्मृति अंतर्मन को पुलकित कर जाती है। यह मेरा सौभाग्य भी है कि कई कवि सम्मेलनों में नवल जी ने मुझे सुना, कई काव्य गोष्ठियों में मुझे उनका साथ मिला और कार्यक्रम की समाप्ति पर उन्होंने मेरी पीठ ठोकी और कई बार तो यह भी कहा – मंच पर बढ़िया नौटंकी कर लेते हो रुसवा! पर मुझे तुम्हारी गंभीर कविताएं अधिक पसंद हैं। मैंने हर बार उनके इस स्नेहिल वाक्य को उनका आशीर्वाद समझा और कह भी देता – दादा! गंभीर काव्य सृजन मेरी साधना है और यह नौटंकी मेरा उद्योग। नवल जी मुस्कुरा कर कहते – जानता हूँ। ऐसी मुलाकातें ही वह मुलाकातें होती थी जो मेरे अंतर्मन में नवल जी के प्रति आदर भाव जागृत कर देती थी। सुखद और सरस मुलाकातों का सिलसिला वर्षों चला पर प्रथम मुलाकात कैसे हुई यह उद्धृत किए बिना मुझे मेरी अपनी बात अधूरी प्रतीत होगी। महेश पुत्र समाचार पत्र के साहित्यानुरागी संपादक स्व० गंगादास जी बिन्नानी एक दिन कलाकार स्ट्रीट मोड़ पर मिले तो पूछ बैठे– कहाँ की सैर पर निकले हो रुसवा?

मैंने नमस्कार करके कहा– कहीं नहीं दादा! यूँ ही घर में बैठा था तो मूड बदलने के लिए थोड़ी सी तफरीह करने निकल पड़ा। थोड़ा इधर-उधर भटकूँगा, पान पत्ता खाऊँगा और लौट जाऊँगा वापस घर।

सुनते ही बिन्नानी जी बोले – इसका मतलब फुर्सत में हो।

मैंने कहा – आप ऐसा ही समझ लीजिए।

यह सुनते ही वे फौरन बोले – तो फिर आ जाओ मेरे साथ, अच्छा समय काटना है तो। मैंने पूछा – कहाँ चल कर महफिल जमाएँगे दादा? बिन्नानी जी बोले– चलते हैं चाचा नोपानी की प्रेस में वहाँ और भी साहित्यकार मिलेंगे। तुम्हें अच्छा लगेगा।

मैंने कहा – तो फिर चलिए 'आज की शाम आपके नाम'।

यह घटना कब की है यह तो मुझे याद नहीं पर उस समय मैं साहित्य क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने हेतु सतत प्रयत्नशील था। फलतः साहित्यकारों से मिलने की लालसा हर समय मन में रहती थी, तो चल पड़ा गंगादास जी के साथ और आ गया माहेश्वरी भवन विद्यालय के निकट शोभाराम बैशाख स्ट्रीट में आदरणीय चाचा की प्रेस में। वहाँ श्री चाचा नोपानी, श्री आलोक शर्मा, श्री राजदेव सिंह कौशल, श्री छविनाथ मिश्र एवं नवल जी मौजूद थे। उस समय के कोलकाता साहित्य जगत के देदीप्यमान नक्षत्रों से मेरी पहली मुलाकात इस तरह हुई थी। बहुत देर तक साहित्य और हास-परिहास की चर्चाओं का आनंदमय वातावरण रहा। समस्त विद्वत्जनों की गहन साहित्य साधना से उनके प्रति मेरे हृदय में आदरभाव जागृत होना स्वाभाविक था। उसके पश्चात श्री राजदेव सिंह जी कौशल एवं श्री आलोक शर्मा जी से कम ही मिलना हो पाया। परन्तु नवल जी एवं छविनाथ जी से अक्सर भेंट हो जाती थी। नवल जी का आत्मिक स्नेह मुझे हर मुलाकात में मिला। हर मुलाकात नयी अनुभूतियों से सजी होती थी। हर मुलाकात में नवल जी ने मुझ से मेरी नई कविताएं सुनी और मेरा उत्साहवर्द्धन किया। मैं आदर से नवल जी को दादा ही कहता रहा हूँ।

नवल जी गूढ़ बातों को भी जिस तरह सहज और सरल ढंग से अपनी कविताओं में व्यक्त करते थे उनका वह अद्‌भुत शब्द शिल्प उनकी गहन साहित्य साधना का ही द्योतक रहा। मर्म को स्पर्श करने वाली अभिव्यक्ति के कलमकार नवल जी के नाम का उल्लेख किए बिना कोलकाता के हिन्दी साहित्य का इतिहास कभी भी पूर्ण नहीं हो सकता।

•

नवल जी

■ दिनेश चंद्र प्रसाद 'दीनेश'

सौम्य पुरुष थे नवल धवल
वाणी मीठी थी अति कोमल

११ मई १९४० को धरा पर आये
२४ अप्रैल २०२० को धरा से गये।

अमृतसर में जन्में उनकी जन्मभूमि
दिल्ली कानपुर कलकत्ता कर्मभूमि।

जयप्रकाश खत्री से बने नवल जी
भोजन रसिक थे कमल नवल जी।

बैंक कर्मी से बने वो साहित्यकार
दोस्तों बंधुओं से पाए अपार प्यार।

एक साथ कई विधा में लिखते
साथ में कई पत्रिकाएं निकालते।

अप्रस्तुत को आपने प्रस्तुत किया
प्रतिध्वनि प्रकाशन स्थापित किया।

अपूर्वा, स्वर सामरथ का प्रकाशन किया
साँप-सीढ़ी, कालाहांडी, आधी रात का शहर दिया।

हिंदी पंजाबी भाषा बोलने वाले
बड़े कवियों को भी धमकानेवाले

कवि नवल जी को अर्पित श्रद्धा सुमन
'दीनेश' करता उन्हें आज सादर नमन।

नवल जी : हँसता हुआ नूरानी चेहरा

■ दिनेश वडेरा (ठक्कर)

(निर्देशक - मुद्रा आर्टस, कोलकाता)

आदरणीय नवल जी जीवन पर्यंत हँसते-मुस्कुराते रहे। कभी एक छोटे-से बच्चे की तरह तो कभी एक बहुत समझदार बुजुर्ग की तरह। उनकी कविताओं के बहुसंख्यक चहेतों को आज भी उनका नूरानी चेहरा याद होगा।

फरवरी में उनसे मेरी मुलाकात हुई थी। वहीं उनके पसंदीदा कॉफी के अड्डे 'उडिपी' में अन्य साहित्यकारों के साथ। प्राय: प्रत्येक के साथ उनकी कोई न कोई पुरानी कहानी थी, साथ ही उनकी आदत के अनुसार टांग-खिंचाई भी। सभी हँसते रहे किन्तु उनके उन्मुक्त हास्य का रेला मुझे हमेशा याद रहेगा। हमने मार्च में एक कार्यक्रम करने की भी चर्चा की थी उनकी सहमति भी मिली किन्तु इसी बीच एक अकर्मण्य अवांछित लॉकडाउन टपक पड़ा वह कार्यक्रम नहीं हो पाया, अफसोस रहेगा। स्मरण है कि पिछले एक-डेढ़ वर्ष से प्रतिदिन सुबह पाँच बजे के आसपास 'सुप्रभात कवि' के व्हाट्स-एप मेसेज मिल रहे थे, बहुत अच्छा लगता था कि सुबह-सुबह आशीर्वाद मिल गया किन्तु अचानक एक दिन इस प्रियवर रमता योगी ने कुछ अलग-सा संदेश भेजा। मुझे इतना ही समझ में आया कि वे इस वर्चुअल दुनिया को तिलांजलि दे रहे हैं किन्तु क्या पता था कि इस मेसेज से वे अपनी स्प्रीचुअल यात्रा की सूचना दे रहे थे और वे प्रयाण कर गए। हमने नवल जी की मुखरेखाओं में एक मस्त शरारती शिशु की खिलखिलाहट और एक विषादवीर सज्जन का संयम दोनों को एकसाथ देखा है। एक निर्मोही कवि का यह व्यवहार सदैव याद रहेगा। मेरी दृष्टि से असल में वे एक संत प्रकृति के रचनाकार थे। उनकी काव्यमय अभिव्यक्ति स्वयं आकर्षक रही जिसे कलादृष्टि से देखें तो सर्वथा मौलिक और सामान्य भावक के लिए सरल। उनकी आध्यात्मिक ओजस्विता उन्हें एक उत्कृष्ट पहचान देती है। उनके फेसबुक पोस्ट के तो बहुत से दीवाने रहे। बड़ी खूबी से थोड़े से शब्दों से जीवन के किसी एक हिस्से को छू कर आगे निकल जाते थे। रमता राम रह-रह कर याद आता है। उन्होंने 'कवि मित्र' में जब मेरी कविता पोस्ट की तो मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। उनकी छोटी-सी टिप्पणी भी सारगर्भित होती थी। वे गुजराती समझते थे। मुझे सदैव प्रोत्साहित किया। कवि गोष्ठी में मिलते तो कहते– तुम्हारा नाम पढ़ कर आया हूँ, तुम्हें सुनने आया हूँ, तुम्हारा अंदाज बिल्कुल अलग है, तुम्हारी आवाज गूँजती है। अनामिका के एक नाटक 'घर अपने-अपने' में मेरे अभिनय को बारम्बार याद करते और अन्य मित्रों के सामने प्रशंसा करते, मुझे प्रोत्साहन मिलता– एक कलाकार को और क्या चाहिए? मुझे लगता है, मेरे जैसा अनुभव बहुत से लोगों का होगा। उनकी मुस्कुराती हुई आँखें बहुत कुछ कह देती।

वे कला मर्मज्ञ थे, हमारे समय के सशक्त हस्ताक्षर थे, वे साक्षर थे, माँ शारदा के वरद पुत्र थे, वे संयोजक थे, समन्वयक थे, एक सेतु थे, वे प्रेरक थे, प्रेरणा थे, अच्छे साथी थे, मार्गदर्शक थे, स्पष्टवक्ता थे और अति संवेदनशील मानव थे। जो उनसे मिला उनका हो गया, जिनसे वे मिले उन्होंने बहुत कुछ पाया।

पाया मैंने भी, प्यार और प्रोत्साहन, वो मेरे जीवन की सौगात है। उनके इस अनोखे व्यक्तित्व का आत्मीय स्पर्श मेरे लिए अमूल्य निधि है।

●

नेपथ्य के नायक

■ देवदीप

तीसरी बार कलकत्ता और वाग्देवी

****

आकाश में अगरु और धूप की गंध का धुआँ धुआँ.. गुलाबी ठंड.. वाग्देवी की आराधना में बंग भूमि..
संभवतया १९८५ का कोई एक दिन रहा होगा.. दो चार दिन बाद ही सरस्वती पूजा..
मेरी यह महज तीसरी बार की कलकत्ता यात्रा थी और उनसे पहली मुलाकात.. पहली मुलाकात सिर्फ औपचारिक थी..
ज्यादातर समय लघु पत्रिका "कविता" और भागीरथ भार्गव को केन्द्र में रखते हुए..
डॉ. जयसिंह नीरज और भागीरथ भार्गव के संपादन में अलवर से प्रकाशित लघु पत्रिका "कविता" ने तब राष्ट्रीय स्तर पर एक साहित्यिक मुकाम पा लिया था.. कलकत्ता प्रस्थान के पूर्व भागीरथ जी ने उनका संदर्भ देते हुए कहा था "नवल से मिल लेना.. हमारे अच्छे मित्र और सशक्त कवि हैं".. इत्तफ़ाक से जिस बैंक की शाखा में वे थे, उसी शाखा में मेरे एक दोस्त भी पदस्थ थे.. उस समय उनसे महज दो या तीन बार की मुलाकात रही.

******

१९९८ साल का पहला महिना

****

१९८७ साल से दिसम्बर महीने का शेष सप्ताह.. अलवर से एक अदद बैग लेकर कलकत्ता की अपनी नई नौकरी के लिए प्रस्थान.. अगले ही साल के पहले महीने में टी-बोर्ड के पास उनकी शाखा में मिलता हूँ..
यहां आकर नौकरी ज्वायन करने की मेरी बात सुनकर बेहद खुश हुए थे वे..
लगभग पांच महीने बारासात की पोस्टिंग के बाद मेरा तबादला डलहौजी स्थित प्रधान कार्यालय में होने से प्राय: ही मिलना जुलना लगा रहता.. समय लंच टाइम..
उन्हीं दिनों, उनकी ही शाखा में कार्यरत श्रीनिवास जी से भी परिचय.. लंच के दौरान उनका पसंदीदा रेस्टोरेन्ट गुजराती स्कूल के विपरीत, जो लगभग उनकी शाखा के पिछवाड़े.. कभी टोस्ट तो कभी डोसा तो कभी दक्षिणी पुलाव... आपकी जेब से पर्स निकला कि उनकी आंखों की भाषा बदल जाती थी.. इससे यह हुआ कि इतने सालों में एक भी बार पर्स निकालने की हिम्मत नहीं हुई.. इसी रेस्टोरेन्ट के पास ही एक गुजराती मिठाई और नमकीन की दुकान है जहां पर बालूशाही, जलेबी की लत भी उन्हीं की देन.. इस पूरी प्रक्रिया के बीच-बीच में कविता और साहित्य पर अनौपचारिक बातचीत..

❖❖❖❖❖❖❖❖

मदन सूदन और आकाशवाणी

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

धीरे धीरे कलकत्ता के हिन्दी साहित्य परिसर में उनकी अंगुली थाम आवाजाही शुरु हुई.. दादा छविनाथ मिश्र, कृष्णबिहारी मिश्र से लेकर युवतर सृजनकर्मियों से भेंट मुलाकात का सिलसिला उन्हीं की सहजता से लब्ध हो सका.. उनके बहुत ही निकट रहे मदन सूदन के साथ उनकी नोंक-झोंक का साक्षी रहा हूं.. उन्हीं के आग्रह पर मदन जी के साथ आकाशवाणी में तीनेक बार कविता की रिकार्डिंग.. वहीं पर चुपचाप अपने काम में मशगूल प्रीतम जी और प्रिय अनिल से परिचय का सिलसिला बना...

❖❖❖❖❖❖❖

कैमरा, लाइट और कविता के साथ सुशीलदी

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

अगली सीढ़ी... वे साथ ले चले दूरदर्शन पर.. बहुत ही अपनेपन से सुशील दी ने तब कलकत्ता के कतिपय बड़े कवियों के साथ मंच साझा करने का सुअवसर दिया.. कहना न होगा कि वे भी मेरे साथ रहे उस मंच पर...

उनकी आवृत्ति, यानि कि कविता पढ़ने का अपना एक अलग अंदाज था.. गुरु गम्भीर स्वर का उतार चढ़ाव, प्रक्षेपण और सुस्पष्ट उच्चारण...

सुशील दी भी नहीं रहीं पर उनकी स्मृति आज भी साथ है...

❖❖❖❖❖

लौटती हुई आवाज़ के घेरे

❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖❖

अपने इस संस्मरण में उनके कविता संसार पर आलोचना नहीं करूँगा.. वह फिर कभी पर इतना जरूर कहना चाहूंगा, उनकी कविताओं को वह राष्ट्रीय फलक और सम्मान नहीं मिला जिसके वे हकदार थे.. जब कि उनसे निकृष्ट लिखकर भी कलकत्ता के कुछ तथाकथित कवियों ने अपनी राष्ट्रीय पहचान बनाई..

❖❖❖❖❖

'घर फूंक तमाशा देख' का सिलसिला शायद ताउम्र ही रहा हो पर मेरे साक्ष्य में वह विरल घटना थी जब एक एक बार में कभी ग्यारह तो कभी छह-सात पुस्तकें प्रकाशित होती रही.. प्रतिध्वनि के मंच पर कलकत्ता के युवतर से लेकर वरिष्ठ रचनाकारों की पुस्तकें एक साथ.

और यह शुरु हुआ उनके पी एफ लोन से...

मुझे याद है मेरी पांडुलिपि के लिए लगातार उनका आग्रह, डांटने में बदल गया था.. फिर कविताओं को तरतीब से व्यवस्थित कर, साथ साथ अंतिम प्रूफ देखने तक वे मेरे बगलगीर रहे...

फिर वह दिन सम्मुख था.. पुस्तक प्रकाशन के इस प्रथम क्रम के अंतिम सोपान में हम पांच कवियों के संसार का परिदृश्य व्याप्ति पा रहा था.. भारतीय भाषा परिषद के खचाखच भरे सभागृह में विद्या भंडारी, हृदयेश पांडेय, सुशील गुप्ता और मैं... पुस्तकों का लाकोर्पण किया आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री ने और समारोह की अधयक्षता का भार था कल्याणमल लोढ़ा पर.. प्रतिध्वनि के अध्यक्ष दादा छविनाथ मिश्र भी मंच पर थे.. यह एक अविस्मरणीय संध्या थी.. इन्दु जोशी और नोपानी जी की सक्रिय सहयोगिता को भुलाया नहीं जा सकेगा...

और फिर बीसवीं शताब्दी में ऐतिहासिक पदक्षेप..

कविता पर केन्द्रित लघु पत्रिका "काव्यम" का प्रकाशन.. यहां भी वे घेरे के बाहर.. पर एक एक रचना को लेकर कठिन परिश्रम, इकार से लेकर नुक्ते तक.. दरअसल, हिन्दी के साथ साथ अंग्रेजी और उर्दू पर उनका पूरा अधिकार रहा.. मुझसे हिन्दी में ही बतियाते पर जब किसी बांग्ला भाषी व्यक्ति से बातचीत करते तो बहुत सहजता से बांग्ला भाषा उनकी जुबान से चाशनी की तरह टपकती... भाषा को लेकर उनके परफेक्शन पर आश्चर्य चकित रह जाना पड़ता था.. और उनकी कलम से निकले कागज पर उतरे शब्द मोती की तरह जड़े हुए.. साठ के दशक में हस्तलिखित पत्रिका भी निकालते रहे..

******

थर्ड बेल के अंधेरे में गुनगुन नेपथ्य संगीत

****

कविता से नाटक..

साल १९९५.. कई साल से घुमड़ रहे कथानक ने नाट्य आलेख "रामकथा रामकहानी" को जन्म दिया.. यह कृत्य भी ठीक आषाढ़ के एक दिन और लहरों के राजहंस की तरह लेखक - निर्देशक का सह बंधन और समन्वय ही रहा होगा.. पदातिक द्वारा श्यामानंद जालान के निर्देशन में इस नाटक पर कहानीकार विजय शर्मा ने अपने ब्लॉग में लिखा है.. "कवि नवल का 'राम कथा राम कहानी' का स्प्लेंडर और स्पेक्टेकल हिंदी रंगमंच की अप्रतिम शोभा है.."

अगर वे रंगकर्म से ही जुड़े रहते तो निश्चित ही आज देश के नामचीन रंगकर्मियों में शुमार होते.. एक अद्भुत किस्म की दृष्टि थी.. बोलती हुई.. पूरे समूचे शरीर से बतकही करने का माद्दा रखते थे..

******

किसी भी नाटक को देखते हुए आपके जेहन में वे ही किरदार रहते हैं जो मंच पर अभिनय कर रहे होते हैं.. आप यह नहीं महसूस करते कि उनके पारदर्शी और पारंगत अभिनय में मेकअप, पोशाक, प्रकाश, संगीत और मंच सज्जा की भी बड़ी भूमिका रहती है.. निर्देशक की बात छोड़ दें.. वह तो गेम चेंजर के रूप में रहता ही है.. एक और महत्वपूर्ण सेक्टर होता है जो प्रचार प्रसार और जब जैसी जरूरत हो, वह चीज मुहैय्या कराता रहता है....

******

मंच पर जितने लोग कवायद करते हैं उसी अनुपात में मंच के बाहर, नेपथ्य में भी एक सशक्त व बड़ी टीम की जरूरत होती है.. यह टीम, किसी भी नाटक में सपोर्ट सिस्टम का काम करती है और उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितनी मंच पर उपस्थि टीम..

******

रंगकर्म की तरह, नेपथ्य का यह सपोर्ट सिस्टम साहित्यिक क्रियाकलापों के लिए भी एक समान महत्वपूर्ण होता है, वह व्यक्ति थर्ड बेल के बजने तक अति व्यस्त रहता था.. उसके बाद उसे इत-उत ढूंढना पड़ता था.. यह व्यक्ति ऐसा ही था... दोस्तों और युवा रचनाकारों को मंच पर धकेलकर स्वयं हॉल के बाहर या अंतिम कुर्सियों पर विराजमान....

नेपथ्य के इस महानायक को मैंने तीन बार विवश किया मंच पर आने के लिए मेरे बैंक के कार्यक्रम में.. कोलकाता से लेकर सुदूर हुगली तक.. मेरे प्रति उनके अकूत स्नेह का प्रतिदान था यह...

✿✿✿✿✿✿

२० अप्रैल २०२० की कलम.. विविधवर्णा प्रियम्वदा

✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿

"अब जब सूर्योदय होगा
तो वह नहीं लाएगा केवल सुप्रभात
लाएगा एक ऐसा युग, साथ साथ
जिसमें मनुष्य जाति
एक साथ करेगी प्रार्थना
धरती के शस्य श्यामला बने रहने की!

यही प्रकृति है विविधवर्णा
तुम्हारी तरह प्रियम्वदा!!
© नवल

✿✿✿✿✿✿

कवि को लगभग चार पांच दिन पहले ही उसके आने का आभास हो चला था.. तब भी वे सकारात्मक बने हुए थे.. प्रकृति को प्रियम्वदा से एकाकार करते हुए धरती के शस्य श्यामला बने रहने की कल्पना, महाप्रस्थान से महज़ चार दिन पहले... !!!!

✿✿✿✿✿✿

अब जब आप नहीं रहे, एक स्नेहिल वट वृक्ष की छाया कोलकाता की जमीन से अवलुप्त हो गई..
उद्दात वह कंठ अब नहीं सुन पाऊंगा, जो निरन्तर मुझे प्रेरित करता रहा.. एक शहर में रहते हुए भी पांच छः साल नहीं मिल पाया.. बस फोन पर ही उनके उलाहने सुनता रहा.. फरवरी के किसी एक दिन का वह अंतिम फोनालाप याद है दादा जब आपने कहा था, "तुम नाटक लिखो देवदीप"...
होगा... करना ही होगा.. आपकी इस अंतिम इच्छा को मेरी कलम निश्चित ही आकार देगी किसी एक दिन...

✿✿✿✿✿✿

तब तक आप विश्राम करो दादा...

✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿

देवदीप

✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿✿

दे गया चकमा मुझे भी मेरा प्यारा चहेता खाँटी मानुष कवि नवल

■ ध्रुवदेव मिश्र पाषाण

हाय री आदमी की निरुपायता ?
असहायता

आज सबेरे से फेसबुक पर जिस के न दिखने पर दुखी हो रहा था – चिंतित हो रहा था – अब खुद भी नहीं दिखेगा वह मुझ को नहीं दुलारेगा, नहीं फटकारेगा – नहीं संभालेगा। सोच रहा था आज फिर एक नाटक कर रहा है वह – नवल – मेरा प्यारा नवल। हिन्दी का अपनी तरह का वह एक अकेला - अनूठा कवि नवल। हर तरह से मुझसे बड़ा था वह मुझ से, वह फिर भी कहता था मुझे बड़ा भाई अपना ? बड़े गरूर से। मैंने समकालीन कविता के इस महत्तम रचनाकार के नाम के रेखांकन का प्रस्ताव रखा था फेसबुक पर। आलोक, शैलेन्द्र शांत, सरला माहेश्वरी और स्वनिल श्रीवास्तव को शैलेन्द्र शांत ने खबर दी ? पाषाण जी हमारा एक सितारा और डूब गया। आपका अपना लाड़ला कवि नवल ? ....हाँ एक सितारा और यानी कल उषा गांगुली – आज नवल।"

नवल एक सितारा नहीं – हमारे लिए समकालीन हिन्दी कविता के आकाश का अनछुआ चन्द्रमा था। भरोसा मिलता रहेगा उसकी कविताओं से। नहीं .... वह गया नहीं – अमर है।

अपने प्रिय दुष्ट प्राणसखा नवल / जयप्रकाश खत्री के महाप्रयाण को प्रणाम। उसकी स्मृतियाँ साथ रहेंगी। अंधेरे को चीरती हुई। इत्यलम्।

•

नवल भैया एक प्रेरक व्यक्तित्व

■ प्रताप जायसवाल

हमारे जीवन में कुछ ऐसे लोग भी होते हैं जो अपने प्रयाण के बाद भी हमारे बीच जीवित रहते हैं। जीवित अवस्था की उनकी जीवंतता, उनकी उदारता, उनकी सहृदयता जो उन्हें एक विराट व्यक्तित्व प्रदान करती है, उन्हें अमर बना देती है। सुपुर्दे खाक होने के बाद भी उनकी स्नेहमयी सदाबहार आत्मीयता के मुस्कान से भरी उनकी जीवंत प्रतिभा हमारे दिलो दिमाग में कौंधती रहती है। यूँ लगता है कि वो अब भी हमारे बीच है।

ऐसे ही एक व्यक्तित्व है स्व. नवल भैया – कवि नवल। मेरा प्राथमिक परिचय उनसे बचपन से ही १२-१३ साल की उम्र से था। जब मैं कला, संस्कृति जगत से सर्वथा अनभिज्ञ-अपरिचित था। १२३ नं. वाराणसी घोष स्ट्रीट, कलकत्ता-७ करीब २०-२२ परिवार विशेष घर थे जो एक संयुक्त बड़े परिवार की तरह रहा करते थे। उनमें से एक थे हम सब बच्चों के बाबूजी स्व. मोती लाल कपूर। नवल भैया उनके करीबी रिश्तेदार थे और उनके यहाँ अक्सर आया-जाया करते थे। हम सब बचपन के साथी टिंगू के मामा – हमारे भी मामा थे। तब नहीं पता था कि वो कवि हैं–साहित्यकार हैं..... पता चलने जैसी उम्र भी नहीं थी। उसी समय उस २३ नं. में ही एक और साहित्य आकाश के नक्षत्र का उदय हो रहा था– वो थे अन्ना भैया.... कवि आलोक शर्मा जो मेरे चाचा जी जो पंजाब नेशनल बैंक में पदाधिकारी थे। बचपन से ही हम मकान से सारे बच्चे अन्ना भैया से बहुत डरते थे। उनकी बदमाशी करने पर हमें घूरना हमें अंदर तक कंपकंपा देता था। थोड़े समझदार होने पर हम समझने लगे उनका वह गुस्सा नकली हुआ करता था।

हाँ तो चूंकि अन्ना भैया भी साहित्यिक अभिरुचि के व्यक्तित्व थे तो संभवत: नवल भैया से उनका प्राथमिक परिचय प्रगाढ़ दोस्ती में परिणत हो गया और हमारे मकान में साहित्य गोष्ठी-कवि गोष्ठी ६० के दशक से ही शुरू हो गई अन्ना भैया के प्रयास से। निर्मल वर्मा सरीके साहित्यकार भी उन गोष्ठियों में शरीक हुआ करते थे शायद राजेन्द्र यादव का भी आना हुआ था जिसके आयोजन में नवल भैया का भरपूर सहयोग और सक्रियता अन्ना भैया को मिला करती थी। ये तब मैंने जैसा देखा और जैसा समझा उस अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ। यह था नवल भैया के साथ परिचय का प्रथम सर्ग जब वो हम बच्चों के मामा जी थे।

उनसे परिचय का दूसरा सर्ग हुआ ८० के दशक में जब मैं नाट्य कला जगत से जुड़ चुका था और प्रसिद्धि के सोपान पर बतौर अभिनेता-निर्देशक अपने पांव जमा चुका था। मैं संगीत कला मंदिर से जुड़ा हुआ था एवं अपनी संस्था के प्रति प्रतिबद्ध था। तब हम नियमन एक ही संस्था से जुड़कर काम किया करते थे। बहुसंस्था गामी परंपरा तब नहीं थी ऐसे में भैया (स्व. रवि दवे) जो अनामिका राष्ट्रीय नाट्य महोत्सव में भीष्म साहनी के नाटक 'हानूश' का निर्देशन करने जा रहे थे उन्होंने मुझे नाम भूमिका करने का आग्रह किया और मैंने अपनी संस्था की स्वीकृति से उनका प्रस्ताव स्वीकार किया। 'हानूश' के रिहर्सल के पहले ही दिन नवल भैया से वहाँ मुलाकात हुई जो रवि भैया के सहायक के तौर पर वहाँ अवतीर्ण हुए थे। उसी दिन से वे मामा से भैया बन गये मेरे लिए। मुझे उनका कवि स्वरूप नाट्यकर्मी के रूप में देख अचंभा भी हुआ और कुछ अविश्वसनीय सा लगा। परन्तु रिहर्सल के दौरान नाट्य विधा के प्रति उनका समर्पित स्वरूप सक्रिय भागीदारी और इस विधा पर उनकी पकड़ देख कर मैं अभिभूत भी हुआ और प्रभावित भी। हर बारीक से बारीक त्रुटि पर

उनकी नजर पड़ती और वे रवि भैया को मशवरा देते। जिन्होंने हानूश नाटक का मंचन, जिसकी एक ही प्रस्तुति हुई, देखा होगा वो उस नाटक, उसकी हर संरचना को भूल नहीं सकते। नवल भैया का सार्थक, सफल और दक्ष सहयोग इस नाटक की सफलता के मूल में था।

बाद में पता चला कि वो शुरुआती दौर से ही पदातिक और अदाकार से सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे। पदातिक में श्याम भैया द्वारा निर्देशित 'राम कथा राम कहानी' में उनका अवतरण पुनः नाट्यकार के रूप में हुआ और सफल नाट्यकार के रूप में।

नवल भैया के सखी सम्प्रदाय के अड्डों में उनकी जीवंतता, नाट्यकर्म में उनकी सक्रियता, उनका उदार बहुआयामी व्यक्तित्व इन सारी परतों को देखकर मैं प्रभावित ही नहीं होता आश्चर्यचकित भी रह जाता कि इस व्यक्ति में अद्भुत क्षमता है आत्मविश्वास है साथ ही इतनी सारी रुचियों को सफलता से सँभालने का खास सामर्थ्य भी है जो विरले ही हुआ करते हैं। उनका उन्मुक्त मृदुहास गंभीर से गंभीर परिस्थिति में उनका अदम्य साहस अनुकरणीय रहा है मेरे लिये। इन गुणों के साथ-साथ नवल भैया एक सूक्ष्मदर्शी, पारंगत नाट्य समालोचक भी थे। मेरे 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में मेरा अभिनय देखकर उन्होंने उक्ति दी थी कि "प्रताप के पाँव उसकी चाल भी संवाद बोलते हैं" इतनी सूक्ष्म बात किस सहज भाव से उन्होंने कह दी कि मैं हतप्रभ रह गया।

मेरे चाचा स्व. बंसल लाल जी पंजाब नेशनल बैंक के अधिकारी थे। एक बार मैं किसी काम से उनके पास उनके ब्रेबर्न रोड शाखा में गया तो वहाँ नवल भैया को देखकर हतप्रभ रह गया और जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि वो भी उसी शाखा में कार्यरत हैं। मैं भी बैंक कर्मी था और वो भी, एक और जुड़ाव गहराया। मुझे वहाँ देखकर वे आश्चर्यचकित थे। जब उन्हें पता चला कि मैं अपने पापा के पास आया हूँ तो उन्होंने मेरे चाचा से कहा कि आप बड़े भाग्यशाली हैं जो आपको ऐसा यशस्वी भतीजा मिला है और मैं शर्मशार था।

वैसे तो नवल भैया के सान्निध्य-स्नेह का अकूत खजाना है मेरे पास जिसकी अभिव्यक्ति बहुत लम्बी ही नहीं वरन् मेरे सामर्थ्य के बाहर भी है।

उनकी चिरंतन आत्मा ने तो चिर विराम ले लिया है पर उनका चिरंतन दुनीवाल व्यक्तित्व उनके प्रेरक प्रसंग की सुरभि, उनका अनुकरणीय आचरण सदैव हमारे जीवन में व्याप्त रहेगा।

•

उनकी नजर पड़ती और वे रवि भैया को मशवरा देते। जिन्होंने हानूश नाटक का मंचन, जिसकी एक ही प्रस्तुति हुई, देखा होगा वो उस नाटक, उसकी हर संरचना को भूल नहीं सकते। नवल भैया का सार्थक, सफल और दक्ष सहयोग इस नाटक की सफलता के मूल में था।

बाद में पता चला कि वो शुरुआती दौर से ही पदातिक और अदाकार से सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे। पदातिक में श्याम भैया द्वारा निर्देशित 'राम कथा राम कहानी' में उनका अवतरण पुनः नाट्यकार के रूप में हुआ और सफल नाट्यकार के रूप में।

नवल भैया के सखी सम्प्रदाय के अड्डों में उनकी जीवंतता, नाट्यकर्म में उनकी सक्रियता, उनका उदार बहुआयामी व्यक्तित्व इन सारी परतों को देखकर मैं प्रभावित ही नहीं होता आश्चर्यचकित भी रह जाता कि इस व्यक्ति में अद्भुत क्षमता है आत्मविश्वास है साथ ही इतनी सारी रुचियों को सफलता से सँभालने का खास सामर्थ्य भी है जो विरले ही हुआ करते हैं। उनका उन्मुक्त मृदुहास गंभीर से गंभीर परिस्थिति में उनका अदम्य साहस अनुकरणीय रहा है मेरे लिये। इन गुणों के साथ-साथ नवल भैया एक सूक्ष्मदर्शी, पारंगत नाट्य समालोचक भी थे। मेरे 'ध्रुवस्वामिनी' नाटक में मेरा अभिनय देखकर उन्होंने उक्ति दी थी कि "प्रताप के पाँव उसकी चाल भी संवाद बोलते हैं" इतनी सूक्ष्म बात किस सहज भाव से उन्होंने कह दी कि मैं हतप्रभ रह गया।

मेरे चाचा स्व. बंसल लाल जी पंजाब नेशनल बैंक के अधिकारी थे। एक बार मैं किसी काम से उनके पास उनके बेबर्न रोड शाखा में गया तो वहाँ नवल भैया को देखकर हतप्रभ रह गया और जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि वो भी उसी शाखा में कार्यरत हैं। मैं भी बैंक कर्मी था और वो भी, एक और जुड़ाव गहराया। मुझे वहाँ देखकर वे आश्चर्यचकित थे। जब उन्हें पता चला कि मैं अपने पापा के पास आया हूँ तो उन्होंने मेरे चाचा से कहा कि आप बड़े भाग्यशाली हैं जो आपको ऐसा यशस्वी भतीजा मिला है और मैं शर्मशार था।

वैसे तो नवल भैया के सान्निध्य-स्नेह का अकूत खजाना है मेरे पास जिसकी अभिव्यक्ति बहुत लम्बी ही नहीं वरन् मेरे सामर्थ्य के बाहर भी है।

उनकी चिरंतन आत्मा ने तो चिर विराम ले लिया है पर उनका चिरंतन दुनीवाल व्यक्तित्व उनके प्रेरक प्रसंग की सुरभि, उनका अनुकरणीय आचरण सदैव हमारे जीवन में व्याप्त रहेगा।

•

जब तक नवल जी हमारे दिल में है जिंदा है

■ प्रशांत अरोड़ा

नवल जी के बारे में कुछ लिखूँ। इससे पूर्व अपने बारे में भी कुछ कहना चाहूँगा कि न मैं कवि हूं और न ही साहित्यकार। मेरी दुनिया सुंदर दृश्य-बंध को अपने कैमरे में कैद करने की है। नवल जी और मेरे बीच 'कॉमन क्या है'? कुछ है। सीधा उत्तर है 'क्रिएटिविटी' यानी रचना-प्रक्रिया अर्थात् रचनात्मकता। एक लेखक की क्रिएटिविटी होती है लेखनी और फोटोग्राफर की क्रिएटिविटी है 'थ्रु लेंस'।

मैं एक फोटोग्राफर हूँ। पिछले चालीस वर्षों से फोटोग्राफी के क्षेत्र में कार्यरत हूँ। नवल जी से मेरा परिचय भी 'फोटोग्राफी' की वजह से रहा। मेरा एक 'फोटो म्यूजियम' है (Archieves)। इसकी खासियत यह है कि क्रिएटिविटी जगत से जुड़े जितने भी लोग हैं चाहे शास्त्रीय संगीत हो, नृत्य हो, साहित्य हो, थिएटर हो, पेन्टर हो। मैं समस्त कलाकारों की तस्वीर खींचता हूँ, प्रिंट लेता हूँ, वापस कलाकार के पास जाकर उनका हस्ताक्षर लेता हूँ। आज की तारीख में तीन हजार कलाकारों की हस्ताक्षरयुक्त तस्वीरें मेरे पास हैं।

बीस-पच्चीस वर्ष पूर्व की एक घटना है। नेताजी इण्डोर स्टेडियम में एक राष्ट्रीय कवि-सम्मेलन आयोजित था 'अदाकार संस्था' के द्वारा। नवल जोशी थियेटर जगत से जुड़े कला-प्रेमी व्यक्ति थे। स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में और १५ अगस्त को कवि-सम्मेलन कार्यक्रम रखा गया था। मंच पर कई ख्याति नाम कवि उपस्थित थे। वहाँ मंच पर नवल जी भी उपस्थित थे, नवल यानी कवि नवल की चर्चा मैं कर रहा हूँ। वे एक साधारण किस्म के इंसान थे। देखिए! राष्ट्रीय कार्यक्रम १५ अगस्त का दिन। पैंट-बुशर्ट पहनकर आए थे नवल जी। उनको ऐसा महसूस ही नहीं हुआ होगा कि आज कुर्त्ता-पायजामा पहनना चाहिए। आराम से बैठकर कविता-पाठ किया। मैंने उनका क्लोज अप लिया। यहाँ एक बात स्पष्ट करना चाहूँगा नीति है कि फोटोग्राफी ही नहीं हर कला में एक 'स्पेशलाइजेशन की माँग होती है। इंसान के पोटरेट की स्पेशलिटी की जैसे कलाकारों के क्लोज अप, मूडस केपचर, प्रिंट करके हस्ताक्षर आदि जब नवल जी का क्लोज अप लिया। प्रिंट बनाया परन्तु हस्ताक्षर लेने में काफी समय लग गया। हिचक थी कि कैसे मिलूँ, क्या बोलूँगा? अकस्मात् मुझे एक शादी में जाना पड़ा। वहाँ नवल जी भी आमंत्रित थे। वहीं मुझे पता चला कि वे पंजाबी हैं। नवल जी सर नेम में आगे-पीछे कुछ भी नहीं लिखते थे। मैंने आगे बढ़कर बातचीत करने की पहल की तो बहुत गर्मजोशी से मिले। मैंने अपना परिचय देने के साथ-साथ मेरी दीदी (मशहूर लेखिका) सुधा अरोड़ा की भी चर्चा की। बस उनकी खुशी दुगुनी हो गई। हमदोनों की दोस्ती का सिलसिला आरंभ हुआ।

तब से पचास से अधिक कार्यक्रमों में उनसे मुलाकात होती रही। विशेषकर साहित्यिक कार्यक्रमों में प्राय: ही मिलना होता था। मैंने एक ही फोटो पर नहीं, अलग-अलग समय पर, अलग-अलग मूडस को कैपचर करके उनसे हस्ताक्षर करवाए। फाइनली मैंने एक ओर काम किया कि यदि चित्रकार हैं तो उनसे कहा– अपनी फोटो पर चित्रकारी कर दो। कवि या लेखक से आग्रह रहता– दो पंक्तियाँ लिख दीजिए। नवल जी की एक फोटो थी। इसमें बेक-ग्राउंड भी व्हाइट है और उनका कुर्त्ता भी व्हाइट है।

जब तक नवल जी हमारे दिल में है जिंदा है

■ प्रशांत अरोड़ा

नवल जी के बारे में कुछ लिखूँ। इससे पूर्व अपने बारे में भी कुछ कहना चाहूँगा कि न मैं कवि हूं और न ही साहित्यकार। मेरी दुनिया सुंदर दृश्य-बंध को अपने कैमरे में कैद करने की है। नवल जी और मेरे बीच 'कॉमन क्या है'? कुछ है। सीधा उत्तर है 'क्रिएटिविटी' यानी रचना-प्रक्रिया अर्थात् रचनात्मकता। एक लेखक की क्रिएटिविटी होती है लेखनी और फोटोग्राफर की क्रिएटिविटी है 'थ्रु लेंस'।

मैं एक फोटोग्राफर हूँ। पिछले चालीस वर्षों से फोटोग्राफी के क्षेत्र में कार्यरत हूँ। नवल जी से मेरा परिचय भी 'फोटोग्राफी' की वजह से रहा। मेरा एक 'फोटो म्यूजियम' है (Archieves)। इसकी खासियत यह है कि क्रिएटिविटी जगत से जुड़े जितने भी लोग हैं चाहे शास्त्रीय संगीत हो, नृत्य हो, साहित्य हो, थिएटर हो, पेन्टर हो। मैं समस्त कलाकारों की तस्वीर खींचता हूँ, प्रिंट लेता हूँ, वापस कलाकार के पास जाकर उनका हस्ताक्षर लेता हूँ। आज की तारीख में तीन हजार कलाकारों की हस्ताक्षरयुक्त तस्वीरें मेरे पास हैं।

बीस-पच्चीस वर्ष पूर्व की एक घटना है। नेताजी इण्डोर स्टेडियम में एक राष्ट्रीय कवि-सम्मेलन आयोजित था 'अदाकार संस्था' के द्वारा। नवल जोशी थियेटर जगत से जुड़े कला-प्रेमी व्यक्ति थे। स्वतन्त्रता दिवस के उपलक्ष्य में और १५ अगस्त को कवि-सम्मेलन कार्यक्रम रखा गया था। मंच पर कई ख्याति नाम कवि उपस्थित थे। वहाँ मंच पर नवल जी भी उपस्थित थे, नवल यानी कवि नवल की चर्चा मैं कर रहा हूँ। वे एक साधारण किस्म के इंसान थे। देखिए! राष्ट्रीय कार्यक्रम १५ अगस्त का दिन। पैंट-बुशर्ट पहनकर आए थे नवल जी। उनको ऐसा महसूस ही नहीं हुआ होगा कि आज कुर्त्ता-पायजामा पहनना चाहिए। आराम से बैठकर कविता-पाठ किया। मैंने उनका क्लोज अप लिया। यहाँ एक बात स्पष्ट करना चाहूँगा नीति है कि फोटोग्राफी ही नहीं हर कला में एक 'स्पेशलाइजेशन की माँग होती है। इंसान के पोटरेट की स्पेशलिटी की जैसे कलाकारों के क्लोज अप, मूडस केपचर, प्रिंट करके हस्ताक्षर आदि जब नवल जी का क्लोज अप लिया। प्रिंट बनाया परन्तु हस्ताक्षर लेने में काफी समय लग गया। हिचक थी कि कैसे मिलूँ, क्या बोलूँगा? अकस्मात् मुझे एक शादी में जाना पड़ा। वहाँ नवल जी भी आमंत्रित थे। वहीं मुझे पता चला कि वे पंजाबी हैं। नवल जी सर नेम में आगे-पीछे कुछ भी नहीं लिखते थे। मैंने आगे बढ़कर बातचीत करने की पहल की तो बहुत गर्मजोशी से मिले। मैंने अपना परिचय देने के साथ-साथ मेरी दीदी (मशहूर लेखिका) सुधा अरोड़ा की भी चर्चा की। बस उनकी खुशी दुगुनी हो गई। हमदोनों की दोस्ती का सिलसिला आरंभ हुआ।

तब से पचास से अधिक कार्यक्रमों में उनसे मुलाकात होती रही। विशेषकर साहित्यिक कार्यक्रमों में प्राय: ही मिलना होता था। मैंने एक ही फोटो पर नहीं, अलग-अलग समय पर, अलग-अलग मूडस को कैपचर करके उनसे हस्ताक्षर करवाए। फाइनली मैंने एक ओर काम किया कि यदि चित्रकार हैं तो उनसे कहा– अपनी फोटो पर चित्रकारी कर दो। कवि या लेखक से आग्रह रहता– दो पंक्तियाँ लिख दीजिए। नवल जी की एक फोटो थी। इसमें बेक-ग्राउंड भी व्हाइट है और उनका कुर्त्ता भी व्हाइट है।

गीता के सन्दर्भ को मैं इस रूप में देखता हूँ– कलाकार कला के रूप में सदैव जीवित है। ठीक है, नवल जी ने नश्वर देह त्यागी किंतु कविता के माध्यम से अमर है, जीवित है। असल में इंसान मरता तब है जब आप उसके द्वारा रचित शाश्वत कर्म को भूल जाते हैं। जबतक नवल जी हमारे दिल में है, जिंदा है।

फोटोग्राफ़र को ईश्वर ने एक वरदान दिया है। फोटो क्लिक करते समय वह विशेष क्षणों को बाँधता है। रामायण और महाभारत सीरियल का स्मरण करें। महाभारत के 'टाइटल सॉग' में कृष्ण कहते हैं 'मैं समय हूँ' समय निरन्तर चलायमान है। निरन्तर गतिशील है। फोटोग्राफ़र को भगवान ने यही वरदान दिया है कि फोटो को क्लिक करो, अपने पास रखो। एक इंसान के पास तीन चीजें ऐसी होती है जो उसे अमर करती है। एक नाम, दूसरा काम, तीसरा चित्र। मेरे पास नवल जी का ऐसा चित्र है आप देख सकते हैं, नवल जी देखने में कैसे थे। उनका नाम हस्ताक्षर है और काम कविता भी लिखी हुई है। ये तीनों चीजें नवल जी को अमरत्व प्रदान कर रही हैं। फोटो देखिए, कितना मुस्कराता हुआ चेहरा है। आपको लगेगा ही नहीं, नवल जी अब नहीं रहे। ऐसा प्रतीत होगा कि नवल जी हमारे सामने ही है।

मेरे लिए वे आज भी जिंदा है। जब तक मेरे दिल में हैं जिंदा रहेंगे। हमेशा कहते थे १२५ वर्ष काम करूँगा। कवि और कविता के रूप में नवल जी सदैव जिंदा रहेंगे।

मेरे साथ प्रकाशन संबंधित कई साँझा काम संपन्न हुए। प्रतिभा जी का अभिनन्दन ग्रंथ में कवर फोटो और भीतर के पृष्ठ पर प्रकाशित फोटो मेरी थी। नाट्य शोध संस्थान ले गए। मुझे सहयोग मिला। कल्याणमल लोढ़ा अभिनंदन ग्रंथ पर छपी तस्वीर मुझसे ली थी। कवि छविनाथ मिश्र : समग्र का कवर-फोटो भी मेरे एलबम की थी। नवल जी का कहना था कि मैं जो भी काम करूँगा तुम्हारे साथ ही करूँगा। जब भी मिलते थे बहुत खुश होते थे। मेरा प्रोफेशन फोटोग्राफी का है, लोगों को खुशियाँ बाँटना है।

नवल जी मेरे फैन थे। वे कला-पारखी थे। एक कलाकार दूसरे कलाकार का जब सम्मान करता है तो एक आत्मिक अनुभूति मिलती है। खुशी का इजहार नेचुरली होता है बनावटीपन या कृत्रिमता समझ में आ जाती है। उनकी आत्मीयता में सहजता थी स्वाभाविक है कि मेरी भी प्रसन्नता में यही आत्मीय छुअन रहती थी। हँसी-खुशी मिलना उनका स्वभाव था। उनकी आत्मीयता अब सिर्फ स्मृति है। कहने के लिए बहुत कुछ है क्या इससे रिक्तता की भरपाई होगी ? नियाजी के प्रसिद्ध शेर से अपने दर्द को व्यक्त करना चाहूँगा।

अब किसी से मुहब्बत नहीं है
अब पहले सी हालत नहीं है
या खुदा यह क्या कयामत
कि दर्दे दिल तो जहां था - वहीं है।

•

नवलजी

प्रतिभा अग्रवाल

२४ अप्रैल सन् २०२०। शाम हो चुकी थी, धीरे-धीरे चारों ओर घरों में बत्तियां जलने लगी थीं और आंखों के सामने प्रकृति का अद्भुत मोहक रूपान्तर घटित हो रहा था तभी टेलीफोन की घंटी बज उठी। फोन उठाया तो उधर से आवाज़ आई – आपने सुना? नवल जी नहीं रहे। आप कौन बोल रही हैं? इन्दु, कलकत्ता से। नवल जी नहीं रहे। मतलब? तुम कह क्या रही हो? कब? कैसे? अभी, करीब दो घन्टा पहले। घर पर ही थे। सब लोग बैठे थे, बातचीत हो रही थी कि अचानक एक तरह की आवाज़ हुई और उनकी जीभ लटककर बाहर निकल आई। सब लोग देखते ही रह गये। फिर बिना देरी किये एम्बुलेन्स के लिए फोन कर दिया और उन्हें तुरन्त अस्पताल ले गये पर .....

उस समय तो और कुछ नहीं पूछ पाई क्योंकि मैं दिल्ली में थी किसी से मिलने देखने या कुछ करने का सवाल ही नहीं था। अच्छा, कल सुबह बात करेंगे कहकर फोन रख दिया और भारी मन से वहां से उठ आयी। कल और आज – दो दिनों में दो हादसे दो प्रिय जनों का बिना नोटिस दिये चुपचाप विदा ले लेना बहुत अखर रहा था। कल सुबह-सुबह दुखद समाचार मिला था सुप्रसिद्ध रंगकर्मी उषा गांगुली के निधन का और आज शाम नवल का। देश की वर्तमान स्थिति और कोरोना देवी की कृपा से न कोई अन्तिम दर्शन के लिए आ सकता है न कोई अपने श्रद्धासुमन किसी को अर्पित कर सकता है। मेरे निकट के २ साथी, प्रियजन पलक झपकते चले गये। उषा मेरी छात्रा थी और ४ साल तक रोज कॉलेज में भेंट हुआ करती थी। बाद में थियेटर में हम दोनों ने एक साथ काम तो बहुत कम किया पर उषा का आदर और प्रेम मुझे बराबर मिला। बड़े शौक से बाहर से लाकर उसकी दी हुई साड़ियां मेरी आलमारी के हैंगरों की शोभा बढ़ा रही हैं। उससे करीब ५० वर्षों का सम्बन्ध समाप्त हुआ। पर नहीं, ऐसे सम्बन्ध सहज ही समाप्त नहीं होते मेरे लिए तो जीवन भर बने ही रहेंगे।

नवल से परिचय भी करीब-करीब इतना ही लम्बा था पर उस परिचय के अनेक आयाम रहे। परिचय का आरम्भ हुआ उन्हें एक साहित्यकार या कवि के रूप में जानने से जो मदनजी की कॉफी हाउस की मित्रमंडली के सदस्य थे और जिनसे हमलोगों के पारिवारिक मित्र मनमोहन ठाकौर का अच्छा परिचय था। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मेरे लिए इतना जानना ही पर्याप्त था कि नवल जी मदन जी और ठाकौर साहब के मित्र हैं, यहां-वहां-जहां-तहां मिला करते हैं। उतने से परिचय में उनका हमारे घर आने या मेरा उनके घर जाने का कोई खास कारण नहीं था। एक दिन नवल जी को लेकर मित्रों के बीच कुछ चुहलबाजी के स्वर गूंजे तो कान खड़े हो गये – समझ में आया कि किसी लड़की के साथ बात चल रही है जो उनसे ज्यादा पढ़ी-लिखी है अत: ब्याह के बाद देखना कैसे-कैसे गुल खिलते हैं। खैर कई दिनों तक मित्रों में हंसी-मजाक चलता रहा, उधर भी सब कुछ नॉर्मल चलता रहा। समय पर विवाह हो गया और ऐसे में सबका जैसे चलता है उनका भी चलता रहा पर इस बीच मदन जी और नवल में निकटता बढ़ती गई थी। बैंक की नौकरी के साथ ही नवल को कुछ और काम भी करना चाहिए। कुछ महत्वपूर्ण काम करने की सम्भावना पर भी बात और विचार होने लगा। मदन जी ने अनजाने ही नवल के अभिभावक की बागडोर सम्हाल ली थी। अक्सर वे नवल को बैंक से बुला लेते (ड्राइवर

भेजकर) और घंटा-दो घंटा इधर-उधर, या कारखाने जाकर काम करने का नाम करके फिर गंगाघाट या साहित्यकारों के अड्डों में से किसी पर जा टपकना आम बात थी। कॉफी पीना-पिलाना खत्म करके पान के बीड़े गाल में दबाये सब अपने-अपने घर की ओर उन्मुख हो जाते। बीच-बीच में ठाकौर साहब भी साथ होते। दोनों ही नवल से उम्र में बड़े थे। काम करने का क्षेत्र, सुविधाएं, काम करने और सोचने के तरीकों में पर्याप्त अंतर होने के बावजूद ये एक-दूसरे की खामखयालियों को झेलते हुए अपनी-अपनी भूमिका का निर्वाह करते जाते थे। यह सब नवल के लिए सम्भव था क्योंकि वे स्वयम् बहुआयामी व्यक्ति थे, उनमें अपना वैविध्य था और सामनेवाले के वैविध्य का सम्मान करने की क्षमता थी। इस प्रकार बहस करते अपने-अपने दृष्टिकोण का खुलासा करते, परस्पर चुटकियां लेते ये आगे बढ़ सकते थे।

नवल मूलत: मित्र थे मनमोहन ठाकौर के, मदनमोहन अग्रवाल के तथा कलकत्ता के साहित्यकारों के। आवश्यकता पड़ने पर सामनेवाले की सहायता करने को नवल बराबर तैयार रहा करते थे। उनकी मुंहबोली बहनों की संख्या बहुत बड़ी भले न रही हो पर ईर्ष्या करने लायक अवश्य थी। मुझे नवल के सीधे सम्पर्क में आने का मौका मिला, बहुत बाद में और माता जी के रूप में। वैसे यह भूमिका मेरी नियति में शुरू से ही रही। नाटकों में मां या बड़ी बहन की भूमिका या फिर पुरुष भूमिकाओं के लिए मुझे चुना जाता रहा– मैं जब २५ की थी तब भी मां और जब ५५ की तब तो होना ही था। मैं सीधे नवल के सम्पर्क में आयी सन् १९८१ में, मदन जी की मृत्यु के साल-डेढ़ साल बाद जब मित्रों ने मिलकर उनके बारे में अपनी स्मृति मंजूषाके श्रद्धासुमन अर्पित करने का निर्णय किया। मनमोहन ठाकौर ने काम की अगुवाई करना स्वीकार किया और एक संस्मरण ग्रंथ निकालना तै हुआ। मैंने अपने आप को इससे अलग ही रखा। कारण सर्वथा व्यक्तिगत था। मदन जी के बारे में कुछ भी लिखने के लिए यह आवश्यक था कि उन्होंने जो कुछ अपने या औरों के बारे में स्वयं लिखा है उसे जाना जाय। इस जानकारी के लिए उपलब्ध थीं उनकी डायरियां (१९३८ से १९४५) तथा कुछ पत्र और अन्य कारण एक कपड़े में बँधे (जो मुझे मदन जी ने सुहागरात के दिन यह कहते हुए पकड़ाए थे कि – मैं जो हूं, जैसा भी हूं, सब इसमें लिखा है। बाद में पढ़ लेना मैंने पोटली ज्यों की त्यों उठाकर रख दी और पति के साथ बिताये ३५ वर्षों के काल में सिवाय झाड़-पोंछ करने के लिए न खोला न पढ़ा। मुझे बताया गया था कि किसी की डायरी नहीं पढ़नी चाहिए। वैसा करना असभ्यता मानी जाती है। सन् १९८२ में छपी पुस्तक कहानी मदन बाबू की के छपने में कौन-कौन साथ थे, मुझे आज कुछ याद नहीं। बाद में छपने पर पुस्तक को मैंने पढ़ा पर सब मिलाकर ऊपर-ऊपर से ही। असल में उसे पढ़ा मैंने सन् २०१६ में मदन जी की शतवर्ष पूर्ति के अवसर पर। ठाकौर साहब पहले ही जा चुके थे। नवल या दोनों बेटियों दिव्या और यामा पर इस आयोजन का पूरा दायित्व छोड़ना उचित नहीं लगा अत: ग्रंथ के सम्पादन का भार उठाया मैंने और मेरा पूरा साथ दिया बेटियों और नवल (जयप्रकाश खत्री) ने। इस बार मुझे लगा कि मुझे बंडल खोलकर मदन जी के मन और विचारों को समझना ही चाहिए अन्यथा उनके प्रति बड़ा अन्याय होगा। जिन्होंने २७ वर्ष की परिपक्व उम्र में एक १५ वर्ष की किशोरी के हाथों अपने को एक तरह से सौंप दिया था। उस समय उसका परिणाम कुछ भी हो सकता था। उस व्यक्ति ने मुझ पर विश्वास किया था और इस तरह मुझे भी विश्वास करने को प्रेरित किया था। उस विश्वास का प्रमाण था विवाह के ६५ साल बाद मेरा उस भेंटवाली पोटली को खोलने और उसमें ईमानदारी से संचित मदन जी की बातों और भावनाओं को जानने तथा समझने की कोशिश करना।

सबने मिलकर करीब साल भर तक काम किया। पढ़कर आश्चर्य हुआ मैंने अनुभव किया कि विश्वास एक अद्भुत मन:स्थिति भाव है – आप विश्वास करके किसी और का विश्वास अर्जित कर सकते हैं। मदन जी ने वह किया और मुझे भी करने को आश्वस्त किया। यह विश्वास हम दोनों के जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व रहा। व्यक्तिगत ही नहीं सार्वजनिक जीवन में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही।

यहां से शुरू होता है मेरे और नवल के बीच व्यक्तिगत स्तर पर बातचीत करने, किसी विषय पर खुलकर चर्चा करने और बीच-बीच में बातों की ऊपरी तह को भेदकर थोड़ा गहरे उतरकर अपने को झिंझोड़कर जानने-समझने का। वैसे बातें अधिकतर काम की बातों तक सीमित रहती थीं। बहुत व्यक्तिगत या व्यक्तिगत जीवन की बातें न नवल ने की और न मैंने। ऐसी स्थिति में सामनेवाले के बारे में कुछ भी कहना या लिखना बहुत कठिन लगता है। प्रस्तुत आलेख के लिखने भी इतने विलम्ब का कारण भी व्यक्तिगत सम्बन्ध का सीमित होना रहा। यहां तक कि नवल के लेख पिता को पढ़ने के पूर्व तक मुझे उनके और मदनजी के बीच की आत्मीयता और ऊष्मा का तनिक भी अंदाज नहीं था।

मेरे साथ नवल की घनिष्ठता की शुरुआत होती है सन् २०१६ के आसपास। पिछले २०-२५ वर्षों में उनके साथ काम करने या राय-सलाह लेने-देने का क्रम चलता रहा था पर भिन्न रूप में, भिन्न परिस्थितियों में। अब जोड़-भाग करनेवाले थे सुप्रसिद्ध निर्देशक श्यामानन्द जालान जिन्होंने सन् १९७१ में कलकत्ता की नाट्य संस्था अनामिका से अलग होकर पदातिक नामक संस्था की शुरुआत की थी और नवल को शुरू से ही उसमें जोड़ लिया था। अनामिका के साथ नवल थे ही, उसके तत्वावधान में उनकी कई कविताओं का मंचन विमल लाठ कर चुके थे। पदातिक के तत्वावधान में श्यामानन्द ने काशी की रामलीला को आज के नवीन परिवेश में नयी शैली में प्रस्तुत करने का निर्णय किया। इसके लिए आवश्यकता थी एक आलेख की जिसकी मूल आत्मा काशी की परम्परा शील रामलीला की हो पर और सब कुछ आधुनिक हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक ऐसे लेखक का साथ होना जरूरी था जो अपनी परम्परा से जुड़ा हो, काशी की रामलीला से परिचित हो, सुर-ताल नाच-गाने का रसिक हो और इतना लचीला हो कि हर पल निर्देशक की इच्छा के अनुसार अपने को मोड़ता चले और निर्देशक तथा कलाकारों को निरंतर दोनों क्षेत्रों में सहज विचरण करने की सुविधा और प्रेरणा देता रहे। इस काम के लिए निर्देशक ने चुना नवल को जो एकाधिक दृष्टियों से उपयुक्त थे। यद्यपि मैं पदातिक से नहीं जुड़ी थी पर श्यामानन्द मुझे भी इसमें घसीट लाये। कई दिनों रिहर्सल में गयी बनारस की होने के कारण वहां की नाना बातों और परम्पराओं से परिचित थी और अपनी बात बताती चलती थी रामकथा रामकहानी के दौरान मैंने भी बहुत-कुछ जाना सीखा। काम के दौरान नवल की लेखकीय क्षमता, कवित्व, संगीत की उनकी समझ तथा उनके सौन्दर्यबोध का अनुभव होता रहा, साथ ही निरन्तर निर्देशक की कल्पना के अनुसार बदलते रहने की मुलायमियत (फ्लेक्सिबिलिटी) भी देखने को मिली। यह सब घटित हुआ सन् १९९४-९५ में। खेद रहा कि रामकथा रामकहानी वैसी सफलता नहीं प्राप्त कर सकी जैसी आशा थी पर एक साहसिक प्रयोग के रूपमें यह कल्पनाशील प्रस्तुति उनके द्वारा सदा याद की जायेगी जिन्होंने इसे देखा था। नवल श्यामानन्द के साथ अगले कई वर्षों तक सक्रिय रहे। शेक्सपीयर के ए मिड समर नाइट्स ड्रीम आदि नाटकों का रूपान्तर किया और इस प्रकार कविता, अनुवाद और रंगकर्म आदि क्षेत्रों में चर्चित रहे। श्यामानन्दजी के अतिरिक्त नवल शहर की अन्यान्य संस्थाओं के साथ जुड़कर कविता पाठ, कविता-मंचन

आदि के आयोजनों में भाग लेते रहे पर उनके लेखन का वह तेवर जो केवल उनका ही था, अब यदा-कदा ही दिखलाई पड़ता। वैसे तो हर व्यक्ति किसी भी दूसरे व्यक्ति से अलग होता है विशिष्ट रहता है पर नवल में यह तत्व कुछ अधिक मात्रा में था और वे इस बात को समझाते थे। यह सही है कि किसी जमावड़े में नवल के पदार्पण के साथ ही वातावरण खुशनुमा हो जाता था, नवल खुद भी खुश। पिछले वर्षों में वे फेसबुक में नियमित रूप से लिखने लगे और हर दिन १०-२० नये पाठकों की प्रशंसा से समृद्ध होने लगे। इस के चलते नवल ने जमकर राम को केन्द्र में रखकर अत्यन्त सरस तथा सारवान दोहे लिखे, अन्य कविताएं लिखीं, गद्य में भी लिखने लगे और इस प्रकार फेसबुक के एक लोकप्रिय लेखक के रूप में प्रसिद्ध हो गये। कुछ लिखना और तत्काल उसकी स्वीकृति पा जाना एक ऐसा नशा होता है जो एक ओर लेखक का हौसला बढ़ाता है तो दूसरी ओर उसे हड़बड़ी में भी डाल देता है। नवल भी इसका शिकार होने लगे थे पर समय रहते उन्होंने अपने को सम्हाल लिया।

करते-करते आ गया सन २०१५। मेरे लिए फिर एक पर्व। मदन जी का जन्मशताब्दी वर्ष – सन् २०१८। इस बार कुलबुलाहट उठी मेरे मन में। किससे राय-सलाह करें? न ठाकौर साहब थे, न बुजुर्गवार कल्याणमलजी लोढ़ा और न ही विष्णुकान्त शास्त्री। थे मैं, नवल और दोनों बेटियां। करीब साल भर दिव्या, यामा, और नवल उसमें लगे रहे। ग्रंथ प्रकाशित हो गया। उसमें काफी सामग्री तो पुरानी थी पर नई सामग्री में नवल के लेख पिता ने लोगों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया। इस दौरान मुझे लगा कि कुछ है जो नवल को थोड़ा अस्थिर किये हुए था। प्रथम तो वे बारबार नाभा जाने और अपने पूर्वजों के बारे में जानने के लिए उत्सुक जान पड़ते थे। कभी कभी उनका आग्रह आतुरतापूर्ण भी लगता था जैसे वहां जाकर उस भूमि और वर्तमान माहौल का कुछ अंश, एक टुकड़ा अपने साथ लाना चाहते थे। दूसरी बात उनकी प्रवृत्ति का आध्यात्मिकता की ओर थोड़ा उन्मुख होना – अजाने को जानने का आग्रह। क्या नवल एक दिन अचानक उक्त दोनों खोजों में ही निकल पड़े हैं और हम रास्ते पर नजर लगाये बैठे हैं।

•

स्मृतियों की सर्जरी नहीं होती कवि

■ डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी

नवल जी को याद करते हुए मोहक मुस्कान से पूरित मुखमंडल आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है। रसखान की पंक्ति 'माईरी वा मुख की मुसकानि सँभारी न जैहै, न जैहै, न जैहै' की प्रतीति करानेवाली उनकी भावमुद्रा; उल्लास से रची-पगी, आत्मीयता का अहसास करानेवाली उनकी वाणी उन्हीं के द्वारा लिखे गए दो दोहों की स्मृति करा रही है–

जीवन की लंबी डगर, करनी सबको पार।
हँसी खुशी काटो सफर, 'रमता' तब उद्धार।।
खिल - खिल - खिल शिशु सा हँसे, 'रमता' दिन अम्लान।
जो भी जैसा मुक्त मन स्वागत है अनजान।।

उनका लहक कर - चहककर मिलना, उनकी सुरुचिपूर्ण वेष-भूषा, युवकोचित ऊर्जा से परिपूर्ण उनकी चाल-ढाल – सभी मिलकर उनके व्यक्तित्व को अलग रंग प्रदान कर देते थे। सुघर - सुंदर वस्त्रों का चयन उनकी 'स्मार्टनेस' को बढ़ा देता था। मैंने एकाधिक बार यह पंक्ति पढ़कर उन्हें प्रमुदित किया है– 'का बरनौं छवि आजु की भले बने हो नाथ'।

नवल जी से मेरा पहला परिचय कब हुआ, वह कैसे आत्मीयता और फिर अन्तरंगता में बदला; इसकी ठीक-ठीक स्मृति मुझे आज भी है। सम्पर्क का हेतु थे प्रख्यात कवि पं० छविनाथ मिश्र और सेतु बने नोपानी प्रेस के साहित्यप्रेमी संचालक शिवकुमार नोपानी। बात संभवत: वर्ष १९८१-८२ की है। शोभाराम बसाक स्ट्रीट स्थित नोपानी प्रेस में दादा छविनाथ जी को प्रणाम करने के बहाने मैं वहाँ प्राय: जाया करता था। अपने पुराने आवास स्ट्रैण्ड रोड (पोस्ता) से अपने सांध्य कॉलेज के रास्ते में उस गली से गुजरते हुए प्रेस के आंगन में बिछे तख्त पर दादा की उपस्थिति आकृष्ट करती थी और बरबस उधर पैर बढ़ जाया करते थे। वहीं मेरी मुलाकात कवि श्री शंभु प्रसाद श्रीवास्तव से हुई थी। नवलजी भी वहीं पहली बार मिले थे।

उस काल-खण्ड में मैं 'अनामिका' नाट्य संस्था के अतिरिक्त बड़ाबाजार लाइब्रेरी से संबद्ध था। श्री विमल लाठ के साथ 'अनामिका' की मासिक पत्रिका 'नाट्यवार्ता' के सह-संपादक के रूप में या बड़ाबाजार लाइब्रेरी की स्मारिकाओं के संपादन - प्रकाशन के सिलसिले में नोपानी प्रेस और सुराना प्रिंटिंग प्रेस में मेरा आना - जाना प्राय: हुआ करता था। यह क्रम श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के साथ मेरी संलग्नता से और बढ़ा। कुमारसभा पुस्तकालय की गली के ठीक सामने फूलकटरा में सुराना प्रेस के नीचे चाय-पान की दूकानों में साहित्यकारों का 'अड्डा' लगा करता था। वहीं गीतकार नीलम श्रीवास्तव, कवि मृत्युंजय उपाध्याय, डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र, कालीचरण गुप्त 'सव्यसाद', शंकर माहेश्वरी, प्रभात पाण्डेय, आलोक शर्मा, श्रीनिवास शर्मा, संजय बिन्नानी, राजेन्द्र कानूनगो, पं० छविनाथ मिश्र आदि के साथ नवल जी से यदा-कदा भेंट हो जाती थी। इन मुलाकातों ने आरंभिक परिचय को आत्मीयता में बदल दिया।

कई अल्पख्यात रचनाकारों को प्रकाश में लाने की नवल जी की ऐतिहासिक भूमिका कोलकाता के साहित्यिक परिदृश्य में अविस्मरणीय है। आज के स्व-केन्द्रित युग में नवल जी ने स्वयं को पृष्ठभूमि में रखा, परन्तु संभावनाशील प्रतिभाओं को आगे बढ़ाने के लिए वे सदैव सक्रिय रहे। उनका यह अवदान विरल और विशिष्ट है।

पुस्तक एवं पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन - मुद्रण सुन्दर एवं सुरुचिपूर्ण हो, नवल जी इसके लिए सदैव सजग रहते थे। इस क्षेत्र में उनकी विशेष रुचि का लाभ अनामिका, बड़ाबाजार लाइब्रेरी एवं कुमारसभा पुस्तकालय को भी मिला है। उनके संयोजन में 'प्रतिध्वनि', 'प्रतिध्वनि[१९९२]' अप्रस्तुत, नवागत, स्वर-समवेत, साहित्य बुलेटिन, नारी मंच अपूर्वा, काव्यम् आदि के द्वारा प्रकाशित पुस्तकें उनकी इस अभिरुचि का सर्वोत्तम उदाहरण हैं।

कुमारसभा पुस्तकालय के प्रति उनकी सदाशयता सदैव बनी रही। संस्था के साहित्यिक आयोजनों में वे यदा-कदा उपस्थित तो होते ही थे, साहित्यिक परमर्श भी प्रदान करते रहते थे। श्रद्धेय गुरुवर विष्णुकान्त शास्त्री को नवल जी 'भाई साहब' कहा करते थे। शास्त्री जी के प्रति उनके मन में अपार सम्मान-भाव था। विष्णुकान्त जी का भी नवल जी के प्रति विशेष स्नेह - सद्भाव था। अपनी साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक व्यस्तताओं के बावजूद 'प्रतिध्वनि' के प्रकाशनों - आयोजनों में या नवलजी द्वारा परिकल्पित गोष्ठियों में विष्णुकान्त जी की भागीदारी प्राय: होती रहती थी।

एक प्रसंग याद आ रहा है। २००४ ई. में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय ने आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री के ७५वें जन्मदिवस को ध्यान में रखते हुए 'अमृत महोत्सव' अभिनन्दन ग्रन्थ की परिकल्पना की थी। नोपानी प्रेस में उस वृहत् ग्रंथ का मुद्रण कार्य चल रहा था। उस सन्दर्भ में मैं प्राय: वहाँ जाया करता था। शास्त्री जी के व्यक्तित्व - कृतित्व पर स्नेही मित्रों, शिष्यों, साहित्यकारों तथा विभिन्न क्षेत्र के विशिष्टजनों की रचनाओं का समावेश उस ग्रन्थ में होना था। सम्पादक की हैसियत से मैं, नवलजी से संस्मरणात्मक आलेख देने का आग्रह कर चुका था। एक दिन मैंने उनसे अपना आग्रह दोहराया। नवल जी ने जो उत्तर दिया वह मुझे स्मरण है। उन्होंने कहा, 'तुमलोग भाई साहब (विष्णुकान्त जी) को व्यर्थ ही परेशान करते रहते हो। वो सीधे-सज्जन व्यक्ति हैं, कुछ कह नहीं पाते। मुझे तो अभिनंदन ग्रंथ आदि की योजना ही पसन्द नहीं है। खैर, छोड़ो इस बात को; मेरे राम केन्द्रित दोहे सुनो।' फिर उन्होंने जो दोहे सुनाए, वे अद्‌भुत हैं–

आँख खुले तो वो दिखे, सपनों में भी राम।
करवट - करवट देखता, हिलूँ तो डोले राम।।
राम रमा रस रमन में, स्मरण निरन्तर भाय।
रोम - रोम रुचि राम है, राम परस तन पाय।।
लोहा कंचन हो चले, पाथर सालिगराम।
राम परस पर कर गया, मुझ मूरख को राम।।
राम अविचलित भाव है, परम संतुलन राम।
ज्ञान, योग, तप राम है, निष्ठा केवल राम।।

उसदिन सुने हुए इन दोहों में से जो एक दोहा याद रह गया, उसे गुनगुनाते हुए मैं घर लौटा। अगली ही मुलाकात में मैंने उस अन्तिम दोहे की पंक्ति 'राम अविचलित भाव है, परम संतुलन राम' सुनाकर नवल जी से सभी दोहों को लिखवा देने का आग्रह किया। प्रसन्न होकर नवल जी ने उन्हें लिखवाया भी। साथ ही मेरे प्रति स्नेहपूरित भावोद्‌गार व्यक्त करते हुए मेरी साहित्यिक सक्रियता की भी उन्होंने सराहना की। यहाँ यह भी लिख रखूँ कि उन्होंने 'विष्णुकान्त शास्त्री अमृत महोत्सव अभिनन्दन ग्रंथ' हेतु न तो अपना आलेख दिया और न ही मैंने पुन: निवेदन किया।

इस प्रसंग का उल्लेख इसलिये क्योंकि इसके लगभग एक-डेढ़ वर्ष बाद 'प्रतिध्वनि' के तत्त्वावधान में 'आचार्य कल्याणमल लोढ़ा अभिनंदन ग्रंथ' के प्रकाशन की योजना बनी। डॉ. इन्दु जोशी के सम्पादन में प्रकाशन सहयोगी बने पं. छविनाथ मिश्र, श्रीयुत श्रीनिवास शर्मा तथा श्री प्रभात पाण्डेय। इस ग्रंथ के परिकल्पक - नियामक तथा आयोजन के कर्त्ता-धर्त्ता थे कवि नवल जी। सम्पादक ने मुझे भी आलेख लिखने हेतु पत्र दिया जिसे भेजकर मैंने अपने श्रद्धेय गुरु प्रो. लोढ़ा के प्रति भावोद्‌गार व्यक्त किए। नवलजी के सुरुचिपूर्ण स्पर्श एवं प्रेरक परामर्श के फलस्वरूप यह ग्रंथ भव्य रूप से प्रकाशित हुआ।

उस कालखण्ड तक नवलजी के साथ मेरा संबंध औपचारिक आत्मीयता के घेरे से बाहर निकलकर अन्तरंगता में रूपान्तरित हो चुका था। मैंने जानबूझकर कुछ छेड़ते हुए अंदाज में नवल जी से कहा– 'मुझे खुशी है कि अभिनन्दन ग्रंथ प्रकाशन की आपकी सोच में परिवर्तन हुआ है।' नवल जी ने चुटीले अंदाज में अपना पक्ष रखा और कहा 'मित्रों के आग्रह के कारण यह अभिनंदन ग्रंथ निकालना पड़ रहा है; बाकी तो तुम समझते ही हो।' फिर बातचीत विष्णुकान्त जी के देहावसान पर केन्द्रित हो गई। उन्होंने स्वीकार किया कि शास्त्री जी के जीवनकाल में अमृतमहोत्सव ग्रंथ का प्रकाशन बड़ी उपलब्धि है। ध्यातव्य है कि 'विष्णुकान्त शास्त्री अभिनंदन ग्रंथ' प्रकाशन के चार महीने बाद ही विष्णुकान्त जी का देहावसान हो गया था।

नवल जी की अदम्य निष्ठा एवं समर्पण भाव से, न केवल 'प्रो. कल्याणमल लोढ़ा अभिनन्दन ग्रंथ' बल्कि रंगकर्मी डॉ. प्रतिभा अग्रवाल पर केन्द्रित ग्रंथ भी आकर्षक कलेवर एवं सुरुचिपूर्ण साज सज्जा के साथ प्रकाशित हुआ। 'कविश्री छविनाथ मिश्र : कविता यात्रा' ग्रंथ के दो खण्डों का प्रकाशन भी उनकी साहित्य-निष्ठा एवं दूरदर्शिता का प्रमाण है।

ये वृहत् ग्रंथ हों या अप्रस्तुत, स्वर समवेत एवं प्रतिध्वनि २००२ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें– इन सभी का अवलोकन करते ही नवल जी की भावमूर्ति सम्मुख आ जाती है। उनकी साहित्य-निष्ठा के प्रति नमन निवेदित करते हुए मन, स्मृति की सुवास से सुवासित हो उठता है। इस संदर्भ में प्रस्तुत है नवल जी के फेसबुक-पटल पर १३ फरवरी २०१८ को लिखित एक कविता का अंश–

"स्मृतियों की सर्जरी नहीं होती है कवि/
वे नहीं होती/ कर्ण के कवच-कुंडल की तरह/
उन्हें तो ढोना पड़ता है / हमें समुद्र बनकर /
होती हैं स्मृतियाँ- / लहरों की तरह /
रह रह कर वे हमें बेचैन बनाए रखती है /
एक-दूसरे में गुँथकर/शोर मचाकर।"

कवि नवल ने भले ही स्मृतियों की सर्जरी न होने की बात कही हो, परन्तु उनकी यादों की परतें खोलते हुए (सर्जरी करते हुए) उनके न होने के अहसास से मुक्ति पाई जा सकती है, उनके ऊर्जस्वित व्यक्तित्व से प्रेरणा प्राप्त की जा सकती है। इसी कविता की आगे की पंक्तियों में कवि कहता भी है–

'समुद्र की रेत इकट्ठी होती रहती है/
और टापू बनती जाती है/
फिर कभी उसपर/एक लाइट हाउस हो जाता है खड़ा/
सभी को प्रकाश देता/
वे लहरें भी लाइट हाउस से/
प्रकाश पाती रहती हैं।/
यही तो जीवन है प्रियंवदा।'

नवल जी ने महानगर की साहित्यिक गतिविधियों को जो गति प्रदान की वह रेखांकित करने योग्य है। 'लाइट हाउस' के रूप में, प्रकाश-पुंज के रूप में सदैव प्रेरणा प्रदान करता रहेगा उनका अनुपम व्यक्तित्व एवं कृतित्व। नवल जी अपने दोहों में कहते भी हैं–

लाख अँधेरा हो मगर, दिखता वहीं प्रकाश।
'रमता' जीवन की प्रभा, रखती हरदम आस।
एक अकेला सूर्य ही, बाँटे अपना ताप।
'रमता' अपने प्रेम से, हरो कष्ट संताप।।

प्रेम बाँटने-लुटाने की क्षमता से संपन्न थे नवल जी। उनके वृहत्तर साहित्यिक परिवार में हर विचारधारा के साहित्यकारों का समावेश था। प्रतिष्ठित-नवोदित, रचनाकार-पाठक, शिक्षक-विद्यार्थी, प्रख्यात-अल्पख्यात, साहित्य मर्मज्ञ, साहित्य रसिक– सभी को अपने प्रेम-पाश में आबद्ध कर लेने का कौशल उनके पास था। कभी अपनी मधुर-मोहक वाणी के साथ 'प्रियंवदा' होकर तो कभी 'प्रियंवदा' के प्रतीक को कविता में संजोकर वे संशय-रहित हो गए थे; प्रेम के ढाई आखर का मर्म समझ गए थे। 'सब संशय जला दिए हैं चिता की तरह' कविता में वे लिखते हैं–

"सब संशय जला दिए हैं चिता की तरह
जब से आया यह समझ में
कि जीवन है तो अभी है
और प्रेम पाना उसकी नियति।
रास्ते वे खोजते हैं प्रियंवदा
जिन्हें अपने लक्ष्य का पता नहीं होता।
और जो जान जाते हैं–
कि प्रेम ही मूल धर्म है धरती का,
उनको एकनिष्ठ होने में–
देर भी नहीं लगती।"

अमृतसर एवं दिल्ली में बाल्यकाल व्यतीत करने के उपरान्त उनकी किशोरावस्था कानपुर में बीती। १९५७-५८ में वे कलकत्ता आए और एक बैंक में नौकरी करते हुए साहित्यिक क्षेत्र में सक्रिय हुए। २४ अप्रैल २०२० को कोलकाता में उनका देहावसान हुआ। उनके प्रकाशित काव्य संग्रह है– ऐसा क्यों, साँप-सीढ़ी, तुमसे अलग नहीं, आधी रात का शहर, कालाहांडी, थरथराती नदी पर पुल आदि। एक कहानी संग्रह 'अपात्र एवं प्रेम कहानियां' तथा 'विविधा' शीर्षक ललित निबन्ध की भी उन्होंने रचना की थी। नवल जी द्वारा रचित व्यंग्यपरक लघु टिप्पणियाँ 'हँसते-हँसाते' शीर्षक कृति में समाहित हैं। चौपटानन्द, रमता, श्रीधर बाबू, बाँके बिहारी आदि नामों से उन्होंने अपनी सृजन-यात्रा के विविध रूपों को व्यक्त किया। जीवन की विसंगतियों में सुसंगति तलाशते हुए नवल जी अपनी साहित्यिक मंडली में व्यस्त-मस्त बने रहे। उन्होंने लिखा भी था–

लाख अंधेरी रात हो, आता नया प्रभात।
जीवन कभी न ठहरता, बनती खुद ही बात।।

और फिर बात ऐसी बनी कि कोलकाता महानगर के हिन्दी-जगत में नवल जी अपरिहार्य एवं सर्वप्रिय बन गए। दुष्यंत कुमार की चर्चित पंक्ति 'दोस्तो अब मंच पर सुविधा नहीं है/ इन दिनों नेपथ्य में संभावना है' के विपरीत नवल जी ने मंच पर तमाम संभावनाओं एवं आमंत्रणों के बावजूद स्वयं को नेपथ्य में रखा; परन्तु रुतबा ऐसा कि मंच पर अनुपस्थित रहकर भी वे मंच पर छाए रहे। नवल जी रचित एक दोहा है–

तेरे कारन हो गया, 'रमता' यह मन हंस।
तू छू दे वह कृष्णमय, बाकी सब कुछ कंस।।

प्रभु की अनुकम्पा की यह प्रतीति कवि को बार-बार हुई है। 'उमा दारु जोसित की नाईं/सबहिं नचावत राम गोसाईं' का समर्पण-भाव आस्था के आलोक से दीप्त होकर नवल जी के इन दोहों में शब्दबद्ध हो गया है–

तेरे कारन नाचता, तेरे कारन गान।
तेरे कारन मंच पर, झेला यश अपमान।।
अब तो पर्दा खींच ले, नाटक का है अंत।
जैसा भी मैं कर गया, दायी तू भगवंत।।

आस्था की आँच का यही ताप 'प्रियंवदा' के प्रतीक को प्रेमाध्याता तक पहुँचा देता है। 'ऐसा नहीं' कविता में वे कहते हैं–

"ऐसा नहीं / कि मैं दूध धुला हूँ
या मुझमें ईर्ष्या-द्वेष नहीं/
या प्रतिहिंसा का साँप मुझे डसता नहीं।/
सारे के सारे खोट मुझमें है भरे हुए/
लेकिन मैं तुम्हारा चेहरा देख लेता हूं/
तो मेरे मटमैले रंगों पर/
तुम्हारा कुमकुमी रंग चढ़ जाता है।
दुनिया की होली होती है फागुन में/
पर मेरे लिए तो तुम रोज इक नया रंग/

बिखेर देती हो प्रियंवदा/
तुम्हारे रंग में रंगे होते हैं सितारे/
चाँद और सूरज भी।/
मैं तो तुम्हारी आभा की छाया हूँ/
तुम्हें सोचते ही/ स्वयं आभामय हो जाता हूँ।"

भारतीय संस्कृति में मृत्यु को 'महामहोत्सव' कहा गया है। सुंदरदास का दोहा है–

'सुंदर' संशय को नहीं, महामहोत्सव एह।
आतप परमातम मिल्यो, देह खेह की खेह।।

इसी भावधारा के करीब हैं कवि नवल का भी एक दोहा। अंत में उसे उद्धृत कर अपनी भावपूर्ण स्मराणांजलि निवेदित करता हूँ– नवल जी के प्रति–

'रमता' अचरज से भरा, हर पल उत्सव मान।
कहीं जन्म आनंद है, और कहीं श्मशान।।

•

नवल अर्थात् जयप्रकाश खत्री

■ मनमोहन ठाकौर

नवल अर्थात् जयप्रकाश खत्री। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की भाँति इसने भी बचपन से कविता लिखना आरम्भ कर दिया था। अमृतसर में जन्मा, पढ़ा-लिखा कानपुर में। लिहाजा हिन्दी उच्चारणों में कहीं भी पंजाबियत नजर नहीं आती। मेरे ही कद का, मेरे ही जितना बोलने वाला। देखने-सुनने में मेरे राजस्थान के मित्र जगदीश चतुर्वेदी की याद दिलाने वाला नवल मेरे पास आया तो आलोक शर्मा जी मेरे साथ थे। परन्तु न जाने क्यों बहुत शीघ्र ही मेरे बहुत नजदीक आ गया था।

१९६६ में मैं सपरिवार दार्जिलिंग गया था। उस बार आगरा से डॉ. घनश्याम अस्थाना तथा उनकी पत्नी निर्मला जी भी मेरे साथ थीं। वहीं पर निर्मला जी ने अपनी छोटी बहिन उर्मिला के लिए योग्य पात्र की तलाश करने का आग्रह कमला से किया और कमला ने तुरन्त नवल का नाम प्रस्तावित कर दिया। दिक्कत केवल एक थी। उर्मिला एम.ए, बी.एड थी और नवल मात्र इण्टरमीडिएट पास पंजाब नेशनल बैंक का किरानी।

कलकत्ता लौटने पर निर्मला जी के पिता सेठी साहब ने फोनकर मुझे बताया कि उन्हें यह सम्बन्ध पसंद है। तब मैंने नवल से पूछ लिया था, नवल शादी करेगा ? खैर उसीदिन निश्चय हो गया था कि मैं यूनियन का काम निबटा कर बम्बई से आगरा जा पहुँचूँगा और तब नवल भी लड़की देखने कलकत्ता से आगरा आ जाएगा। दुर्गापूजा की छुट्टियाँ होने ही वाली थी। कम से कम छुट्टियों में काम चल जाएगा।

किस्सा कोताह, नवल ने आगरा में ताज की छाया में उर्मिला के साथ विवाह करने का फैसला ले लिया। कलकत्ता लौटते समय वक्त मिला तो नवल ने मुझसे कम्युनिज्म के सिद्धांतों की जानकारी चाही और मैं देर रात तक उसे भाषण पिलाता रहा। दूसरे दिन सबेरे ही मेरी 'सौमित्र-संकल्प' कविता ने ट्रेन में ही जन्म ले लिया। इस विवाह के बाद नवल मेरा दोस्त न रहकर छोटा भाई बन गया। आज तक है।

तो नवल तथा श्री ओमप्रकाश झुन्झुनवाला के सक्रिय प्रयत्नों के फलस्वरुप रानीगंज में ८ और ९ जनवरी १९७७ को हिन्दी, उर्दू, बाँग्ला, गुजराती, पंजाबी तथा ओड़िया इन छः भाषाओं का एक भव्य साहित्य समावेश आयोजित किया गया। अज्ञेय तथा अली सरदार जाफरी की उपस्थिति ने इस समावेश को अखिल भारतीय गरिमा प्रदान की। इन दो के अतिरिक्त उपस्थित थे बाँग्ला के शीर्षस्थ कवि सुभाष मुखोपाध्याय, कविता सिन्हा, नवनीता देवसेन, अमिताभ दासगुप्त, तरुण सान्याल, नवारुण भट्टाचार्य। गुजरात की अस्मिता का प्रतिनिधित्व किया था श्रेष्ठ कथाकार - नाट्यकार शिवकुमार जोशी तथा मधुर परमार तथा दिनेश मोदी ने। ओड़िया कविता के सार स्वरूप आए थे कवि सीताकांत महापात्र, सौभाग्य मिश्र, सरोज रंजन महंती, प्रतिभा सत्पथी तथा विजयिनी दास के अतिरिक्त हमारे पुराने मित्र युवा कवि अमरेश पट्टनायक। उर्दू की समृद्ध काव्य परंपरा के वंशधर बने थे सालिक लखनवी, कैसर शमीम, जफर उगानवी, अलकमा शिवली, रौनक नईम और कलकत्ता उर्दू जगत के नियामक शम्सुज्जमा। हिन्दी कविता वहाँ पहुँची थी छविनाथ मिश्र, ध्रुवदेव मिश्र पाषाण, नवल, नीलम श्रीवास्तव, आलोक शर्मा, सविता बैनर्जी, सुकीर्ति गुप्ता तथा इन पंक्तियों

के लेखक के माध्यम से और पंजाबी कविता का शौर्य प्रकट किया था सरदार सुखवन्त सिंह, हरदेव सिंह गरेवाल तथा हरबंस सिंह 'राज' ने।

हमने इन सभी की एक-एक कविता को अन्य पाँच भाषाओं में अनूदित कर लिया था। इरादा था कि इस समावेश के दौरान ही हम इन छः संकलनों के सेट का लोकार्पण कर देंगे। अनुवाद तैयार भी हो गए थे परन्तु कुछ तो अर्थाभाव और कुछ प्रेस की गफलत, हम केवल हिन्दी, बाँग्ला तथा गुजराती के संकलन ही प्रकाशित कर पाए थे। वास्तव में इस आयोजन के दौरान शम्भु का अभाव बेहद खलता रहा था। नवल ने संकलनों के प्रकाशन की भरसक चेष्टा अवश्य की थी, किन्तु अभी उसमें न तो शम्भु का अनुभव ही आ पाया था, न उसकी सी व्यवस्थाप्रियता।

यों तो नवल अपने विवाह के पहले से ही मेरे बहुत निकट आ चुका था। परन्तु उसने घनिष्ठता का अवसर प्रदान किया था। दिसम्बर १९७४ में हमारी केओन्झार यात्रा में बिताये गए पाँच दिनों ने। ओड़िया भाषा के प्रसिद्ध युवा कवि अमरेश पट्टनायक ने मुझे तथा नवल को २१ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर के मध्य आयोजित 'युवा ओड़िया लेखक संघ' के वार्षिक अधिवेशन में केओन्झार चलने का निमंत्रण दिया था। अमरेश के पिता श्री अनन्त पट्टनायक उड़ीसा की कम्युनिस्ट पार्टी के विख्यात नेता तो थे ही, ओड़िया भाषा के लब्धप्रतिष्ठ कवि - कथाकार भी थे।

अमरेश ने ही सूचना दी थी कि हमारे साथ बाँग्ला के विशिष्ट कवि सिद्धेश्वर सेन, अमिताभ दासगुप्ता तथा देवी रॉय भी जाएँगें और केओन्झार में आ मिलेगा बाँग्ला देश के मुक्तियुद्ध के दौरान पाकिस्तानी शासकों द्वारा वहाँ से निष्कासित युवा कवि दाऊद हैदर भी। हम सभी वहाँ विशेष अतिथि बनकर सादर आमंत्रित किए गए थे। उड़ीसा के नाम पर भी अभी तक मैं केवल पुरी और भुवनेश्वर से परिचित था। केओन्झार का नाम भी नहीं सुना था।

केओन्झार में ही हमने १९७५ का स्वागत किया था। बड़ी देर रात तक अमिताभ दासगुप्त, सिद्धेश्वर सेन, अमरेश पट्टनायक तथा मैं कम्युनिस्ट आन्दोलन के भूले-बिसरे गाने गाते रहे थे। अमिताभ दासगुप्त का कंठ भी उसकी कविताओं सरीखा मधुर, प्रखर तथा ओजपूर्ण है। हम चारों ओर आत्मविभोर हो रात्रि के तीसरे प्रहर तक गाते, नाचते रहे थे। देवी रॉय, नवल तथा कुछ देर तक दाऊद भी उस मंगलवेला में हमारा साथ देते रहे थे। बड़ा मादक सिद्ध हुआ था वह सारा का सारा समावेश। अनेक वर्ष लग गए थे, उसका नशा उतारने में।

२८ मार्च को नवल के साथ मिलकर मैंने 'रंगोत्सव' के रूप में एक नया शिगूफा छोड़ा। नवल ने कलकत्ता (तथा सोम, वीरेन्द्र, घनश्याम अस्थाना आदि कुछ बाहर के भी) मित्रों के सम्बन्ध में कुछ मजेदार पट्पादिया लिख रखी थीं। हमारे आग्रह पर डॉ. प्रभाकर माचवे ने उनपर बड़े मजेदार रेखाचित्र आँक दिये। माचवे जी इस प्रकार के रेखाचित्र बनाने में सिद्धहस्त थे। बस इसीसे तैयार हो गयी थी हमारी 'कहत चौपटानन्द' के प्रकाशन तथा उस अवसर पर होली के दिन मनाये जानेवाले 'रंगोत्सव' की रंगारंग योजना।

२८ मार्च को डॉ. गोपाल कृष्ण सराफ के घर के लॉन पर जमा हुए करीब सौ-सवा सौ मित्रगण। अध्यक्ष बनाये गए श्री शिवकुमार जोशी। ढोलक सँभाली भाई मदन सूदन ने। फिर उन समस्त मित्रों को जिन पर चौपटानन्द जी ने कृपादृष्टि की थी, एक-एक कर मंच पर बैठा कर, उनके सिर पर विवाह के अवसर पर पहनाये जानेवाला बंगाली 'टोपर' रख कर उनकी आरती उतारी गयी और भाँगड़ा गीतों की शैली में उन

षट्पादियों का समूह गान किया गया। बड़ा मजा आया था। कलकत्ता के साहित्यिक रसिक मित्र आज भी 'कहत चौपटानन्द' की याद कर मजा ले लेते हैं। सुविधाओं के अभाव में हम यह 'रंगोत्सव' मात्र तीन वर्ष ही मना सके। काश यह एक स्थायी परम्परा बन पाता।

'कहत चौपटानन्द' मुझे नवल के और भी निकट ले आया था। अब तक तो वह मात्र मेरा छोटा भाई ही था। अब से वह मेरा सहयोगी भी बन गया। वह भी मेरी भाँति योजना-विहारी ही रहा है। परन्तु जहाँ मेरी योजनाएँ समूह की तलाश करती रही हैं, नवल अपने सीमित साधनों का ही सही प्रयोग कर बड़ा काम कर बैठता है। बैंक का अफसर तो वह अब बना है, पहले तो उसने भी वर्षों किरानीगिरी ही की थी। किन्तु आरम्भ से ही वह स्वकेन्द्रित नहीं रहा है। सातवें दशक के मध्य में ही उसने चौबीस कवियों की कविताओं को छः खण्डों में प्रकाशित किया था। फिर उन छः खण्डों को 'अप्रस्तुत' नामक संग्रह में प्रकाशित कर अक्टूबर, १९७१ में ही भविष्य की अपनी कार्यप्रणाली का स्पष्ट आभास दे दिया था।

नवल में छपाई की एक सहजात समझ है, सूझबूझ है। उसने अपना पहला काव्य-संग्रह 'साँप-सीढ़ी' १९८३ में ही प्रकाशित किया था। उसके इस संकलन की परिकल्पना भी नितान्त अभिनव थी। नवल ने हस्तलिपि में बड़े खूबसूरत कागज पर विशेष पद्धति से छपवा कर समूचे कलकत्ता को अपनी इस विशेष प्रतिभा का कायल कर दिया था।

इसके पहले १९८२ में ही उसने डॉ. प्रतिभा अग्रवाल द्वारा सम्पादित मदन बाबू के स्मृति-ग्रन्थ 'कहानी मदन बाबू' को आम स्मृति ग्रन्थों से अलग ढंग से परिकल्पित कर मुझे और प्रतिभा जी को अपना मुरीद बना लिया था। अब हम तीनों प्रायः मिलने लग गए, जिससे नवल की सहज प्रतिभा को भी एक स्पष्ट दिशा मिलती चली गयी। १९८३ के पश्चात् मैं जो कुछ कर पाया हूँ, उसमें नवल का अकुंठ सहयोग और उसकी सोच-समझ का ही बड़ा हाथ रहा है।

२८ जुलाई को प्रकाशित हुई थी Selected Soliloguies जिसमें मेरे ३५ कवि मित्रों की एक-एक कविता का अंग्रेजी अनुवाद संकलित था। वह दिन नवल ने अन्तर्भारती काव्य सम्मेलन के रूप में आयोजित किया था।

एक तीन दिवस व्यापी समारोह ने हमें एक नई दिशा सुझा दी कि यदि ढंग से आयोजित किया जा सके तो यहाँ के साहित्यकारों की कृतियाँ ससमारोह प्रकाशित की जा सकती है। अब नवल इस दिशा में बहुत उत्साहित हो उठा। विशेष कर इसलिए भी कि इस आयोजन के दौरान उसके दो-दो छापेखाने के मालिकों से गाढ़ी घनिष्ठता हो गई थी। श्री भागचन्द सुराना और उन्हीं जैसे एक और साहित्यरसिक महानुभाव श्री शिवकुमार नोपानी जिन्हें सभी 'चाचा' कहा करते हैं। नोपानी जी सचमुच यारों के यार हैं। ओठों पर सतत खेलती मुस्कान और उँगलियों में सतत् फँसी रहती सिगरेट उनका ट्रेडमार्क है।

नोपानी जी और सुराना जी की मित्रता ने नवल के इस पुस्तक प्रकाशन अभियान को कितनी गति, कितना बल प्रदान किया है। इसका ज्वलन्त उदाहरण इतना ही है कि अब तक इन दोनों के छापेखानों से गत वर्ष से नवल ने १८ साहित्यिक कृतियाँ मुद्रित कर प्रकाशित कर दी हैं। नवल, नोपानी जी तथा सुराना जी की इस समवेत चेष्टा ने अब तो एक अभियान का रूप ले लिया है जिसका मूल उद्देश्य यह प्रमाणित कर देना है कि महानगर कलकत्ता के हिन्दी साहित्यकार देश के किसी भी भाग के साहित्यकारों की तुलना में कतई पतले नहीं है।

इस आन्दोलन को बहुत बड़ी सहायता मिली है मदन बाबू की स्मृति-रक्षार्थ स्थापित किए गए उपचार ट्रस्ट से। मदन बाबू कलकत्ता के समस्त हिन्दी साहित्य सेवियों के अपने मित्र थे। उनके असामयिक देहान्त के बाद से ही उनकी सहधर्मिणी डॉ. प्रतिभा अग्रवाल भी उनकी परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए कुछ करना चाह रही थी। उन्होंने १९८५ में निर्णय लिया कि उपचार ट्रस्ट के तत्वावधान में मदनबाबू के जन्म दिवस १३ नवम्बर पर प्रतिवर्ष स्व. मदन मोहन अग्रवाल स्मृति सम्मान समारोह आयोजित किया जाए। उस दिन महानगर कलकत्ता के एक वरिष्ठ साहित्यकार को सम्मानित करने तथा यहाँ के लेखक कवियों की विगत वर्ष में लिखी साहित्यिक कृतियों का एक संकलन प्रकाशित किए जाने का फैसला लिया गया।

इस कार्य के लिए पाँच सदस्यों की एक समिति नियुक्त की गयी जिसके अध्यक्ष हैं प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा तथा सदस्य विष्णुकान्त शास्त्री, डॉ. प्रतिभा अग्रवाल तथा नवल। मुझे इस समिति का संयोजक बनाया गया।

इस प्रकार कलकत्ता से स्थानीय साहित्यकारों के सक्रिय सहयोग द्वारा अपने ढंग के एक अभिनव प्रयास का श्रीगणेश हुआ।

१९८६ कविगुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर की १२५वीं जन्म जयन्ती का वर्ष था। विश्वकवि को उनके अपने महानगर के हिन्दी साहित्यकारों द्वारा समर्पित की जानेवाली विनम्र प्रणति की अभिव्यक्ति का एक नितान्त नया प्रयोग कर डाला नवल ने। उसने एक सप्ताह में सात पुस्तकें छापकर नित्य एक-एक पुस्तक को लोकार्पित करने का अभूतपूर्व, किन्तु अत्यन्त सफल, दुस्साहस कर दिखाया था।

९ मई को प्रकाशित हुई थी 'नवाग्रह'। इसके घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए थे सर्वश्री छविनाथ मिश्र, शंकर माहेश्वरी, ध्रुवदेव मिश्र पाषाण, नवल, नीलम श्रीवास्तव एवं सुश्री डॉ. प्रभा खेतान, सुशील गुप्ता और मैंने।

सप्ताव्यापी आयोजन ने जहाँ कलकत्ता के अनेक साहित्य स्रष्टाओं को एक सृजनात्मक अभियान का सहयात्री बना दिया, वहीं कुछ 'स्थापित' लेखकों को तिलमिला भी दिया। उन्हें अपनी ईजारेदारी पर आँच आती प्रतीत होने लगी। अतएव वे कुत्सा रटना पर उतर आये। उनके बाणों का लक्ष्य बना मूलत: नवल। नवल इतना पैसा कहाँ से जुटाता है? अवश्य ही नवल और उनके सहयोगी सेवाश्रयी होने लग गये हैं, अन्यथा सात दिन तक भारतीय भाषा परिषद का सभाकक्ष भाड़े पर ले पाने की क्षमता इन्होंने कहाँ से अर्जित कर ली? अब आए दिन फतवे जारी किये जाने लगे कि ये लोग रेशमी साहित्य सेवी हैं, इनमें प्रतिबद्धता का भीषण अभाव है। इस सबकी उपेक्षा कर नाक की सीध में चलते नवल ने अपना पुस्तक छापो-आन्दोलन जारी रखा, यह देखकर मैं भी उसका साथ देता रहा हूँ। इस अभियान से कलकत्ता के अधिकांश स्थापित तथा उदीयमान हिन्दी रचनाकार लाभान्वित हुए हैं। अब तो उन सबकी एक टीम ही बन चुकी है जिसे देखकर मुझे रहीम का वह दोहा याद आता रहता है।

रहिमन यों सुख होत है, कढ़त देख निज गोत,
ज्यों बउरी अँखियाँ निरखि, अँखियन को सुख होत।

•

('अन्तरंग' से साभार उद्धृत)

कवि नवल को याद करते हुए

■ रामनिहाल गुंजन

मैं जब भी कवि मित्र नवल को याद करता हूँ तो उनका हँसता हुआ चेहरा याद आने लगता है। मुझे जब उनके नहीं होने की सूचाना मिली तो मैं स्तब्ध रह गया। मैं इस बात के लिए उत्सुक भी रहा करता था कि वे इधर क्या कुछ लिख-पढ़ रहे हैं। उनसे वैसे जब भी बातें होती थीं तो वे अपने रोगों की चर्चा भी कभी-कभी करते थे, पर वे उन्हें ज्यादा चर्चा का विषय बनाने के बजाय अपने जीवन का अभिनव अंग बना चुकने की बात कहना ज्यादा पसंद करते थे और यह बात मुझे भी ठीक लगती थी। दरअसल नवल अपने आप में एक संस्था थे, जिनके सरोकार साहित्यिक और सामाजिक क्षेत्रों में काम करने वाले लोगों से ही ज्यादा थे। वे कई जरूरतमंद लोगों की मदद भी किया करते थे, जिसकी जानकारी मुझे कुछ साहित्यिक मित्रों से मिलती रहती थी। वैसे मैं जब भी कोलकाता जाता था तो उनसे मिलने का प्रयत्न भी करता था। मुझे याद है, मैं जब पहली बार कलकत्ता १९७६ के आस-पास गया था तो नवल से भेंट भाई श्रीनिवास शर्मा के साथ हुई थी। उन्हीं के साथ मैं कथाकार अवधनारायण सिंह से भी उनके स्कूल में मिला था और उसके बाद डॉ. इन्दु जोशी से उनके निवास पर मिलने गया था। उस समय उन्होंने अपनी एक कविता पुस्तक मुझे दी थी। मुझे वहाँ के लेखकों में एक-दूसरे से मिलने-जुलने और आत्मीय सौहार्द का भाव देखकर हार्दिक प्रसन्नता भी हुई।

यों प्रसंगवश १९७६ में कलकत्ते में आयोजित जन साहित्य सम्मेलन की चर्चा करना भी जरूरी है। उस सम्मेलन के आयोजकों में मीरा सिन्हा और शंभुनाथ के अलावा कवि मित्र ध्रुवदेव मिश्र पाषाण भी थे जिनके निमंत्रण पर मैं उसमें शामिल हुआ था, पर उसमें शामिल लेखक ज्यादातर शहर से आये थे और शायद वहाँ के स्थानीय लेखकों को बुलाया ही नहीं गया था। इसलिए मैं और कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह सम्मेलन के बाद अन्य स्थानीय लेखकों से मिले। दूसरी बार कलकत्ता जाने पर वहाँ के कॉफी हाउस में श्रीनिवास शर्मा, उपल, श्रीहर्ष, मार्कण्डेय सिंह, पंचदेव, परशुराम आदि से भी मेरी भेंट हुई। हालांकि इस यात्रा में कवि नवल से मेरी मुलाकात नहीं हो सकी। वस्तुत: उन दिनों मैं पटना सचिवालय में कार्यरत था, इसलिए दो-चार दिनों का अवकाश होने पर मैं कलकत्ता के मित्रों से मिलने जाया करता था। यों मैं दशहरे के मौके पर वहाँ की यात्रा करने प्राय: प्रत्येक वर्ष पहुँच जाता था और वहाँ डॉ. मीरा सिन्हा और आनन्द कुमार सिंह के आशुतोष मुखर्जी लेन स्थित आवास में ठहरता था। वहीं से मैं मित्रों से मिलने जाया करता था। एक बार मैं ध्रुवदेव मिश्र पाषाण के हावड़ा स्थित बालिका विद्यालय में इनसे मिलने गया तो उनकी योजना के मुताबिक मैं उनके साथ श्रीनिवास शर्मा और नवल से मिलने उनके बैंक यानि पंजाब नेशनल बैंक पहुँचा, जहाँ नवल बड़े सलीके के साथ मुझसे मिले। वहाँ से हमलोग यानि पाषाण, श्रीनिवास शर्मा, गोपाल प्रसाद और मैं स्वाधीनता-कार्यालय की ओर चले जहाँ इसराइल और अरुण माहेश्वरी से भेंट हुई। अरुण माहेश्वरी ने मुझे अपनी एक पुस्तक भी दी थी। उसके बाद हमलोग अपने-अपने स्थान पर लौट गये थे।

चूँकि नवल वहाँ के लेखकों से कई अर्थों में भिन्न थे। कॉफी हाउस में बैठकर गप्प-सड़ाके करना वे पसंद नहीं करते थे। इसलिए अपने दफ्तर से शाम को छूटने पर वे ज्यादातर अपने निवास की ओर ही जाते थे अथवा किसी आत्मीय मित्र से मिलना ज्यादा जरूरी समझते थे। उन दिनों एक योजना के तहत वे वहाँ के कवियों की कविता-पुस्तकें प्रकाशित कराने में लगे हुए थे। दरअसल कोई 'स्वर समवेत' संस्था थी, जिसकी ओर से नवल के सौजन्य से कई कवियों – कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, जितेन्द्र धीर, नूर मुहम्मद नूर आदि की कविता-पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं। जब कुमारेन्द्र जी की पुस्तक बबुरीवन (१९८९) प्रकाशित हुई थी तब पटना कॉफी हाउस में भेंट होने पर कुमारेन्द्र जी ने मुझसे बबुरीवन की प्रतियाँ नवल से ले लेने की बात कही थी। संयोग से मैं उन्हीं दिनों कलकत्ता प्रवास में था। भेंट होने पर नवल ने मुझे पुस्तक की १० प्रतियाँ दी थीं, जिनमें से एक प्रति ध्रुवदेव मिश्र पाषाण ने ले ली थी और एक प्रति मैंने और शेष आठ प्रतियाँ मैंने कुमारेन्द्र जी को दे दी थी। बबुरीवन के फ्लैप पर शायद नवल ने ही लिखा था 'हिन्दी कविता के परिदृश्य में ६० के दशक से ही उभर आए कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह भी आज भी उसी दम-रकम के साथ खड़े हैं और कुछ तीव्र और संगठित विरोधों के बावजूद उनके फौलादी इरादों में कोई बदलाव नहीं आया है।' तब नवल की लिखी कविता और गद्य से मेरा सावका नहीं पड़ा था, पर मैं उनकी लेखनी की ताकत का पता बबुरीवन के फ्लैप पर अंकित शब्दों से पा चुका था। बाद में उनकी कविताओं से भी परिचित हुआ। उन्हीं दिनों यानि वर्ष १९८३ के आस-पास पं. कृष्णबिहारी मिश्र के संपादन में निकली पुस्तक 'हिन्दी साहित्य : बंगीय भूमिका (१९८३) में संकलित अलखनारायण के लेख – 'हिन्दी लेखन में नयी संचेतना का प्रवेश : बंगीय उपलब्धि का मूल्यांकन' से गुजरने का मुझे अवसर मिला। तब मुझे सचमुच यह जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि नवल अपने तत्कालीन कवियों के बीच अलग से पहचाने जाने लगे थे। अलखनारायण ने लिखा था– 'अप्रस्तुत', 'कविता महानगर' जैसे महत्वपूर्ण काव्य-संकलनों के संपादक तथा 'ऐसा क्यों' कविता पुस्तक के कवि नवल ने नयी संचेतना को परिच्छन्न संवेदनशीलता के माध्यम से व्यक्त किया है। गद्य छंद की गति-प्रकृति अपना कर नवल जी ने तिक्तता, घृणा, क्रोध और गंभीर 'प्रेम' का प्रकाशन अपने चारों ओर की घटनाओं और मनुष्यों को केन्द्र में रखकर किया है। नयी संचेतना के ऋण पक्ष – निरुद्देश्यता, संकल्पहीनता, अनास्था, रोमांटिक काव्य की व्यक्तिवादी प्रवृत्ति के विरुद्ध एक साथ ही प्रचंड तीव्र आवेग और उसके साहित्य प्रकाश का विरल समन्वय प्रस्तुत किया है नवल जी ने। 'कलम के खिलाफ', 'कोई शीर्षक नहीं', 'छः ऋतुओं वाले देश' जैसी कविताएं इस बात का प्रमाण हैं कि नवल मानवीय अस्मिता, मानवीय चमक और स्वाधीनता के पक्षधर कवि हैं। (हिन्दी साहित्य : बंगीय भूमिका पृ. ३५१-३५७)।

दरअसल नवल से मैं जब-जब मिला वे सहृदय और आत्मीय लगे। उनसे मेरी साहित्यिक मित्रता तो थी ही साथ ही एक प्रकार का वैचारिक संबंध भी था और वह इस अर्थ में कि मेरी तरह वे भी नहीं मानते थे। एक बार बातचीत के सिलसिले में उन्होंने एक घटना का जिक्र किया था, जिसमें बतलाया था कि उनका एक मुसलमान मित्र आया तो मैंने साथ में खाने को कहा, लेकिन उनको संकोच करते देख मैंने एक चपत लगाई और कहा कि कोई जाति से बड़ा या छोटा नहीं होता। तबसे नवल का व्यवहार वैचारिक आधार पर टिक गया और वे सभी जातियों के लोगों को भारतीय समझने लगे। कहने का अर्थ यह कि नवल धार्मिक और जातीय रूढ़ियों से मुक्त थे। मैं इन विचारों का कायल था। दूसरे मैंने जब भी उन्हें देखा वे सादगीपूर्ण रहन-सहन के पक्षपाती दिखाई पड़े। कहना न होगा कि मैंने उनसे प्रेरित उनके कई मित्रों को भी देखा, जिनमें से एक थे –

छविनाथ मिश्र, जो उनके संपर्क में बराबर रहते थे। नवल जी के प्रयत्न से छविनाथ मिश्र रचनावली दो खंडों में प्रकाशित हुई थी, जिसकी प्रति मेरे पास भी भेजी गई थी। मैं अपनी पुस्तकों के प्रकाशित होने की सूचना भी जब-तब नवल को दिया करता था उन्हें मैंने कुछ प्रतियां भेजी थीं। तब मैं जनवरी या फरवरी में कोलकाता गया तो देखा कि वे किताबें मेले में रखी गई थीं तथा बिक भी रही थीं। उसी दिन मेले में एक काव्य-गोष्ठी का आयोजन भी किया गया था, जिसमें वहाँ आये कई कवियों ने अपनी कविताएं सुनाई और कुछ लेखकों ने कविताओं पर अपने विचार रखे थे। यह बात मेरे जेहन में अभी भी मौजूद है, जिसको अब भी कभी-कभी नवल के बारे में सोचता हूँ तो याद आती है और वह इस कारण कि वे विचारों में जितने सौम्य, उदारमना और स्वच्छ छविवाले थे उतने ही अच्छे कवि और कथाकार थे। हालांकि उनकी कहानियाँ मैंने नहीं पढ़ीं किन्तु कविताएं पढ़कर उनको मैंने पत्र भी लिखा था। उनकी कविताएं पिछले दिनों 'चन्द्रयान' के एक अंक में प्रकाशित देखकर उनको एक पत्र लिखते हुए मैंने कहा था कि आप इधर काफी अच्छी कविताएं लिख रहे हैं। यदि उनको संकलित प्रकाशित भी करा दें तो हिन्दी समृद्ध हो जाएगी। हालांकि उन्होंने भी आशा व्यक्त की थी इसी बीच उनका सहसा देहांत हो गया। आज जो भी उनका प्रकाशित - अप्रकाशित साहित्य है उसे रचनावली का रूप देकर तत्काल प्रकाशित करा देना आवश्यक है जिससे कि उनके साहित्य का समय पर समुचित मूल्यांकन किया जा सके।

•

नवल जी - नित्य नवल हरित दूब

■ रश्मि खेरिया

नवल जी.... जीवन की मिट्टी पर उगी सम्बन्धों की हरी-हरी दूब 'नित्य नवल हरित दूब'।

गुरुदेव रविन्द्रनाथ ठाकुर की महानगरी में फैली छोटी-छोटी गलियों-सी मित्र मण्डली के जीवन्त विदूषक.... मिनटों में ही किसी को मज़ाक का पात्र बना दूसरे ही पल में उसे ब्रह्म के आसन पर विराजमान कर सकने में माहिर।

काव्य लेखन की सर्वोपरि साधना के साधक नवल जी कविता सुनते वक्त पूरा ध्यान कविता पर ही केन्द्रित रखते थे। स्थान लिंग - देश और शहर उनके लिये सब गौण हो जाते थे। काव्य की आत्मा के साथ उनका यह सम्बन्ध मित्र मण्डली में उन्हें अग्रिम पंक्ति पर सुशोभित करता था।

आज भी याद है जब मैं ९८-९९ में स्वर सामरथ पत्रिका के लोकार्पण महोत्सव में 'भारतीय भाषा परिषद' पहुँची, मंच पर इंदुजी का भाषण चल रहा था और मैं अकबकाई सी इधर-उधर देख रही थी अचानक एक दुबले-पतले से छोटी कद काठी के सभ्य शालीन सुसंस्कृत इंसान ने मुझे देख आगे जाकर बैठने का इशारा किया। मूक शब्दों में अभिवादन कर मैं वहीं अंतिम पंक्ति में बैठ गई।

यह एक सुखद संजोग ही था कि उन्हीं दिनों 'कालापानी के शहीदों को समर्पित एक शाम' नेताजी इन्डोर स्टेडियम में मैंने बतौर कवयित्री काव्य पाठ किया था और अपनी कविताओं को लेकर काफी उत्साहित थी साहित्यिक पत्रिका में छपना भी चाहती थी। अत: स्वर-सामरथ के प्रकाशक को फोन कर अपनी इच्छा जाहिर की और उनके बताए पते पर दूसरे ही दिन बण्डल रोड पहुँच गई। वहाँ जाकर ही जान पाई कि सभागार में मिले शालीन व्यक्तित्व के मालिक और कोई नहीं नवल जी ही थे।

मेरे हाथों में एक फाइल थी जिसमें मेरी कविताएं संग्रहित थी। औपचारिक अभिवादन के बाद मैंने उसमें से कुछ कविताएं पढ़ कर सुनाई और पत्रिका में कविताओं को छापने का आग्रह किया। कविताओं को देख वे अपने चिरपरिचित अंदाज में हँसी के साथ कहने लगे 'ये कविता ही नहीं हैं, मैं इन्हें कविता नहीं कहता इस तरह की कविता लिख कर आप परिवार वालों की इष्ट मित्रों की वाहवाही ले सकती हैं और खुश भी हो सकती हैं लेकिन मैं इन्हें कविता नहीं तुकबन्दी कहना अधिक पसन्द करूँगा। हाँ! आपमें करुणा का अथाह सागर है आप लिख सकती हैं।' फिर कुछ कविताएं सुनाईं और कहा इस तरह की कविता लिखें और बताएं 'यदि आपने सचमुच कविता लिखी तो मैं आपका गुलाम हो जाऊंगा।'

यह सुन मेरे सिर पर घड़ों पानी पड़ गया आँखों में पानी आ गया जिसे मैंने बड़ी मुश्किल से रोके रखा लेकिन नवल जी की पारखी और अनुभवी नजरों ने उसे देख लिया। बाद में कई बार इस बात का उपहास भी उड़ाया यह कहकर कि रश्मि जी आप तो बच्ची हैं, बात-बात में रो देती हैं जानती हैं बच्चा होने में और खुद को बच्चा समझने में बहुत फर्क होता है। आपके भीतर सचमुच ही एक बच्ची है इसीलिये ही तो आप वह कर पाती हैं जिसे करने की हम सोचते ही रह जाते हैं। यह सुन मैं बगलें झाँकने लगती क्योंकि जिस दिन मैं उनसे बण्डल रोड में मिली थी वे सिगरेट पी रहे थे और चूंकि मुझे सिगरेट से बहुत चिढ़ है मैंने सिगरेट उठा कर फेंक दी स्वास्थ की नसीहतें दीं और यह भी कहा कि मैं अपने ससुरजी के साथ भी ऐसा ही करती हूँ उन्हें सिगरेट नहीं पीनी चाहिए।

कुछ सालों बाद डॉ. के मना करने पर उनकी सिगरेट छूट गई थी। कुछ दिनों बाद मैंने पाँच कविताएं उन्हें सुनाई। इस बार उन्होंने मन से कई कई बार एक-एक कविता सुनी और बहुत खुश हुए। कविता सुनने और सुनाने का यह सिलसिला उनके रहने तक अबाधित रहा। कविता कैसे पढ़नी चाहिए यह भी मुझे समझाया। सृजन में काव्य पाठ के दौरान मैंने कई बार यह महसूस किया कि कविता सुनते हुए वे किसी अथ लोक की यात्रा करने लगते। विदेह स्वरूप में कवि के कल्पना लोक संग विचरण करना उनके व्यक्तित्व का असाधारण पहलू था जिसने उन्हें आजीवन जीवन्त और पुनर्नवा बनाए रखा, कविता के रस - गन्ध - ध्वनि की अहर्निश आकांक्षा में।

आज मौन पसरा हुआ है उनकी मित्र मण्डली में और मैं देख रही....

भराभरा कर गिर पड़ा वह पेड़
जुड़ा था जो बरसों से
जमीनी मिट्टी से
जड़ों का खिंचाव
रेशे - रेशे में पैरते
संविधान के राज खोलता
दफन कर रहा
अनेक ऐसी गांठें
जिनकी गुत्थियों ने
पतझड़ में भी गाए
बसन्ती यौवन के राग!

इस धरती पर उनको जन्म लेना अपने भीतर के कवि को जिंदा रख इष्ट मित्रों संग जीना और हम सबका उनके जीवन का हिस्सा बनना मात्र एक आकस्मिक घटना नहीं अपितु एक विरल संजोग है प्रकृति प्रदत्त।

आज प्रकृति से यही प्रार्थना है कि धरती जिस तरह एक संतुष्टि का भाव अपने भीतर और बाहर रचती है मैं भी धरती को रचने वाले आसमान में उन्हें देखूं जानूं कैसे आसमान अपनी शून्यता से बांधे रखता है धरती हवा आग व पानी को इस आश्वस्ति के साथ कि व्याप्त है वे सर्वत्र ऊर्जा स्वरूप सृष्टि में स्वयं भी ऊर्जा बन कभी विलग न होने को। प्रणाम ! शत शत नमन !

•

... बेटी किसकी है!

■ प्रो० रूपा गुप्ता

प्रोफेसर, वर्द्धमान विश्वविद्यालय, पश्चिम बंगाल

नीचे बिछे गद्दों पर बड़े सलीके से लगी सफेद चादरें। बड़े से हॉल के एक ओर एक गद्दे के बीचों-बीच माइक लगा था।

दस-ग्यारह वर्ष की एक लड़की घुटने मोड़ कर बायीं ओर के गद्दे पर माइक से थोड़ी सी ही दूर बैठी है। वहाँ लगभग सभी लोग सफेद कुर्ते पायजामे में हैं सिवाय बाद में आने वाली और माइक के सामने बैठ कर कुछ बोलने वाली और उस लड़की के। लोग धीरे-धीरे आकर बैठते गए। सभी बहुत धीरे-धीरे बातें कर रहे थे, यहाँ तक कि कड़क आवाज वाले लड़की के पिता भी। वे अपनी बेटी को 'कवि सम्मेलन' यह दिखाने लाये थे कि वे 'कहीं और' घूमने नहीं जा रहे। व्यवसायी पिता ने बहुत मना किया था, 'वहाँ कोई बच्चा नहीं होगा, तुमको भीतर भी नहीं जाने देगा। क्या करोगी वहाँ जाकर! पता नहीं कितनी देर बैठना होगा...।' घर के नीचे आकर पिता ने कॉमिक्स की घूस भी ऑफर की किंतु...।

माइक के सामने लोग क्रमशः आते गए उतार-चढ़ाव के साथ, एक लय में कुछ बोल-बोल कर जाते रहे। लड़की सबसे अच्छी श्रोता सिद्ध हुई, शायद इसलिए भी कि उसकी समझ में कुछ न आया। बहुत बाद में पता चला कि वह कविता थी।

कार्यक्रम और उसके बाद लोगों ने उसे दोबारा जरूर देखा क्योंकि वहाँ उसका कोई काम नहीं था। कार्यक्रम के बाद लड़की के पापा बहुत देर तक कुछ लोगों से बात-चीत करते रहे। उन सब की बड़ी शाबाशी मिली उसे छलछलाते स्नेह से। सिर्फ श्रोता होने के लिए! लड़की फूल कर कुप्पा। एक-एक चेहरा उसे कंठस्थ हो गया।

बहुत वर्षों बाद ये चेहरे बड़ाबाजार की एक चाय की दुकान से थोड़ा हट कर दिखें। कुछ नए चेहरे भी थे। नाम और भी बाद में जाने - छविनाथ मिश्र, शंकर माहेश्वरी, श्री हर्ष, नीलम श्रीवास्तव और नवल जी। पता नहीं गाने वालों का अकाल था कि इस लड़की का ठीक-ठाक कंठ संयोगवश अपनी सहेली के साथ संजय बिन्नाणी के संगीत निर्देशन में उसने छविनाथ मिश्र की हिन्दी में रूपांतरित ऋचा गाई, 'वाङ्मयी वाणी अरूप तुम, शब्द सेज पर सोई सोई।' शास्त्रीय संगीत सीखने नागरिक स्वास्थ्य संघ जाना होता था, रिहर्सल की दो-तीन जगहें थीं। उन स्नेह भरे चेहरों में थोड़ा अधिक स्नेहसिक्त नवल जी का था। खुल कर मुस्कुराते थे पूरा मुस्कुराते थे। युवाओं से दोस्ती करने में उन्हें कमाल हासिल था। चूँकि मेरे पापा जी उन्हें जानते थे इसलिए मेरे हिसाब से मेरा अधिकार उन पर सर्वाधिक था। अतः उनसे बड़े बेतुके झगड़े-उलाहने बड़े गंभीर भाव से होते थे जिन्हें उन्होंने हमेशा पूरा हौसला दिया। उनकी कविताओं से तो मेरा परिचय और भी बाद में जाकर हुआ।

जिनके सामने आप बड़े होते हैं उनके सामने अपनी कमजोरी के खुलने से कभी नहीं डरते। विशेष तौर पर जब वे आपको बराबरी का व्यवहार दें, वह भी इतने सहज भाव से कि आप को याद न रहे कि इतना तो मेरा प्राप्य नहीं था, यह तो उनकी उदारता है। मैं इस मामले में बड़ी भाग्यशाली रही हूँ। कलकत्ते के दो-तीन अपवादों को छोड़ कर मुझे विष्णुकान्त शास्त्री, कृष्ण बिहारी मिश्र, कृष्णचंद्र पांडेय 'अनय', प्रतिभा अग्रवाल,

सुकीर्ति गुप्ता, अशोक सेकसरिया, कुसुम जैन, गीतेश शर्मा, कुसुम खेमानी, इंदु जोशी, वसुमती डागा, वसुंधरा मिश्रा, मधु रोहतगी, मधु कपूर, राजेन्द्र कानूनगो, प्रताप जायसवाल और अपने संगीत गुरु श्री मोहन मिश्र का अकुंठ स्नेह मिला है। कई और नाम रह गए हैं। हमेशा रह जाते हैं। कुछ न कुछ छूटता रहता है लगातार। जीवन की व्यस्तताओं में सबका ध्यान नहीं रख पाते, लेकिन एक बात कभी ध्यान से विस्मृत नहीं होती इनका स्नेह।

नवल जी से मेरी 'बाकायदा दोस्ती' मुझे केवल अपना विशेषाधिकार लगता था। वे उन लोगों में से थे जिनसे आप हफ्तों लगातार मिलिये या वर्षों बाद वैसी ही गर्मजोशी से मिलते थे। ऐसी ही एक अंतराल की मुलाकात पर जब अचानक उन्होंने कहा, 'ये लड़की कविता लिखती है।' मुझसे अधिक अचंभित प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति पर मुस्कुराते हुए उन्होंने मुझसे कहा, 'जाओ अपनी डायरी ले कर आओ।' मुझे काटो तो लहू नहीं। इन्हें कैसे पता चला। पता चला तो चला सबके सामने क्यों कहा? इसके आगे का ब्यौरा देना निरर्थक है केवल इसके कि उस दिन मेरी अधकचरी कविताओं का पाठ नवल जी ने खुद किया था। वर्ष था उन्नीस सौ अठ्ठासी।

किसी अपने को याद करने में स्वयं की उपस्थिति के आधिक्य का संकट बढ़ जाता है, लेकिन स्मृतियाँ अपने हुए बिना बन भी नहीं पाती। समानता का पूरा व्यवहार रखते हुए उन्होंने कितनी बार कितनी जगहों पर मुझे धीरे से टोक कर सुधारा। 'किसी से जितना चाहे चिढ़ो, उसे दिखाना जरूरी है?' अपनी इस कमी को जो भी थोड़ा-बहुत मैंने सुधारा उसका श्रेय केवल तीन लोगों को जाता है, जिनमें से 'साहित्यिक दुनिया' के रंग-ढंग और तौर-तरीके मुझे उन्होंने समझाया। उनकी उदारता बनावटी नहीं थी। एक बार किसी ने मुझे जोर से हँसने पर टोका तो बोले 'मेरी बेटी है ऐसे ही जोर से हँसेगी।' किसी ने मेरी नई पुस्तक के बारे में उनसे बात की तो बोले, 'बेटी किसकी है!' उनके खराब स्वास्थ्य पर जब उन्हें ठीक से रहने के लिए कहा तो बोले, 'बेटियाँ ऐसी ही होती हैं, बेकार में चिंता करती रहती हैं।' कवि ध्रुवदेव मिश्र 'पाषाण' पर हुए शोध कार्य, नीरज सिंह के पुस्तक विमोचन कार्यक्रम में पाषाण जी से बोले– देखा मेरी बेटी का कमाल। खूब स्नेहिल भाव से हँसे। वह क्षण चित्र में जैसा कैद नहीं उससे अधिक स्मृति में है।

सुदीर्घ तैंतीस-चौंतीस वर्षों में जिसे कभी बिना मुस्कुराहट के नहीं देखा, उसे नम आँखों से याद करना होगा, कभी सोचा तक नहीं। कुछ विरल लोग सबको स्वीकारते हैं कि उनका न होना स्वीकार करते नहीं बनता।

नवल जी की अनेक बेटियों में से मैं भी एक रही, पर विशिष्ट जैसा कि हम सब अपने को समझती हैं। अपने को उनके निकट समझने का मेरा भारी कारण उनका मुझे बचपन से जानना है। उन्हें कुछ भी बताया जा सकता था। प्रसिद्धि से इतना लापरवाह व्यक्ति दूसरा दिख नहीं पड़ता। उनके चले जाने से पहले उनकी कविताओं पर उनसे लगातार चर्चा होती थी। उन्होंने मुझे उन पर शोध करवाने की अनुमति भी दे दी थी, लेकिन स्वयं अपने कृतित्व पर कुछ भी कहने को तैयार नहीं थे। बस बार-बार यही कहा, तुम जो चाहे करो, अधिकार है तुम्हारा।

कुछ काम वक्त पर न कर पाने की चाहे कितनी भी विवशताएँ हों, उनकी कचोट कभी कम नहीं होती। उनकी याद आने पर मुँह से 'काश!' निकलता ही निकलता है। कार्य तो अब भी होगा लेकिन कहेगा कौन, 'बेटी किसकी है!'

•

नवलजी मेरे साहित्यिक गुरु

■ राजेन्द्र कानूनगो

नवलजी की पुस्तक है 'तुमसे अलग नहीं'। इसमें प्रकाशित कविता 'प्रस्थान' में वे आख़िरी पद में लिखते हैं –

"मैं तो चला ही जाऊँगा/तुमसे परे/तुम्हारे होने
को/बार-बार ख़ुद में भरने के अहसास से
परे/अब नहीं रोमांचित करता/तुम्हारा
द्रवणांक तक जाना/हिमांक तक लौट आना/
मैं चला जाऊँगा/हाँ चला जाऊँगा/और जाने
का अर्थ ठहरना या लौटना नहीं होगा।"

तो क्या नवल जी सचमुच चले गए हैं? नहीं। रचनाकार कभी जाता नहीं है, ठहर जाता है/रहता है वह हमेशा अपनी लेखनी, अपने शब्द, अपनी रचनाओं के माध्यम से हमारे बीच। इस भौतिक संसार से जाता है उसका शरीर मगर फिर भी रहता है वो हमारे आस-पास।

आज जब कभी भी उनकी पुस्तकें पढ़ता हूँ या फेसबुक पर उनकी वॉल देखता हूँ, तब लगता है वो मुझसे बातें कर रहे हैं.... फोन रिसीव करते ही कहेंगे– 'कैसे हो राजेन्द्र! आशा कैसी है!' अपनी पीड़ा को छुपाकर दूसरों का खैरख्वाह होना उनके स्वभाव में शामिल था।

विद्वानों ने कहा है कि कवि दो शब्दों से जाना जाता है– कवि और ऋषि। स्पष्ट है दोनों ही द्रष्टा हैं। यानी दोनों ही चिंतक और विचारक हैं, सत्य के दर्शन कराने वाले होते हैं, साक्षी होते हैं। लेकिन फिर भी दोनों में अंतर होता है। एक तरफ कवि है जो परम अनुभूति को देखता है और दूसरी ओर ऋषि है जो वह जानता है या समझता है, वह केवल उसका जानना या समझना नहीं होता है बल्कि वह वैसा जीवन जीता भी है। नवल जी कवि के साथ-साथ ऋषि जीवन जीते थे। उनकी विशाल सहृदयता, आत्मीयता, सरलता तथा छोटे-बड़े सभी को मान देने की प्रवृत्ति ने उनके शारीरिक नाटे कद के व्यक्तित्व को विराट बना दिया।

गेहुँआ रंग, लंबाई लगभग पाँच फुट, इकहरी दुबली-पतली काया, बड़ी-बड़ी आँखें, होठों पर हर परिस्थिति का मुकाबला करती चिर मुस्कान, भारी-भरकम बुलंद आवाज़, चाल में तीव्रता, बुद्धि में क्षिप्रता, अनुजों से स्नेह, हम घरवालों के प्रति सदाशयता और बड़ों के प्रति श्रद्धा भाव से सबको अपना बना लेने की कला– इन विविध विशेषताओं से पूर्ण था नवल जी का व्यक्तित्व।

कलकत्ता महानगर का साहित्य जगत अलग-अलग खेमों में बँटा हुआ है इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता। किन्तु अपनी सरलता, सहजता और ऋजु स्वभाव के कारण सबके चहेते थे नवल जी। किसी एक खेमे या विचारधारा की परिधि में सिमटे हुए नहीं।

रागात्मक अनुभूति-जनित प्रेम ही नहीं, भावनाओं की अभिव्यक्ति, प्रकृति प्रेम और यथार्थ का चित्रण भी उनका सृजन क्षेत्र था। नवल जी अतुकान्त कविताओं के पुरोधा थे। उनकी कविताओं में भाव, भाषा और लयात्मक संवाद की त्रिवेणी है तो प्रेम की पीड़ा और मिलन की तत्परता भी शामिल है। वे अपने भीतर छुपे हुए अनुभवों और अनुभूतियों को जल की तरह तरल, सरल, सहज और पारदर्शी शब्दों में इस तरह उकेरते है कि काव्य-प्रेमियों के हृदय में उसी भाव का उद्रेक करने में सक्षम होती हैं। हर संवेदनशील पाठक को उनकी कविताएं अपनी लगने लगती है।

जहाँ तक मुझे याद है सन १९८५ की बात रही होगी। कोलकाता की जानी-मानी नाट्य संस्था 'रंगकर्मी' की प्रस्तुति 'जात ही पूछो साधु की' में मेरा अभिनय ही मेरे और नवल जी के बीच स्नेह-सेतु बना था। माध्यम बने थे हिंदी नाट्य जगत के जाने-माने अभिनेता एवं निर्देशक स्वर्गीय मदन सूदन। नाटक खत्म होने के बाद मदन जी ने मेरा परिचय नवल जी से करवाया। बातों ही बातों में पता चला मेरे कार्यालय के पार्श्व में ही नवल जी एक बैंक में अधिकारी हैं। फिर तो भोजनावकाश में मिलने-जुलने, वार्ता का क्रम हमारे बीच आरम्भ हो गया।

मुझे कविताएँ पढ़ने और लिखने में रुचि तो थी किन्तु बस अपनी मित्र-मंडली तक ही सुनाने का साहस कर पाता था, सार्वजनिक रूप से नहीं। नवल जी ने जब मेरी काव्य-रचना रुचि को जाना तो उन्होंने मेरी रचनाओं को देखने की इच्छा ज़ाहिर की। मैंने बड़े ही संकोचवश अपनी राजनैतिक संचेतना, व्यंग्य, प्रेम और रोमांस निहित कविताओं को नवल जी को सौंप दिया। सभी गद्य यानी अतुकान्त रचनाएँ। मेरी रचनाओं में कहीं-कहीं उनको जनमानस के दैनन्दिन जीवन, उनके कष्ट और दुखों की पीड़ा की अभिव्यक्ति भी दिखी थीं। नवल जी ने ज्यादा समय नहीं लिया और तीसरे दिन ही (बीच में शनिवार, रविवार था) मेरी कविताओं को मुझे वापस सौंपते हुए कहा– संस्कृत निष्ठ तत्सम शब्दों से ज्यादा सहज, सरल शब्दों में रचनाएँ लिखो ताकि ज्यादा से ज्यादा लोग समझ सके। तुम्हारी व्यंग्य रचनाएँ प्रभावशाली हैं। व्यंग्य लिखा करो। उसके बाद तो मेरी कविता यात्रा में नवल जी से मिला स्नेह और उत्साहवर्धन करता आशीष मेरे लिए पाथेय बना।

नवल जी ने मेरी कविताओं को समय-समय पर परिष्कृत, परिमार्जित और परिभाषित भी किया और मेरी व्यंग्य रचनाओं का संकलन धारदार नवल जी ने सन १९९२ में 'प्रतिध्वनि' के माध्यम से प्रकाशित भी किया।

मेरे भीतर के कवि को सबसे पहले 'नवांकुर१' के माध्यम से सामने लाने का श्रेय नवल जी को ही जाता है। सन १९८३ में प्रकाशित 'नवांकुर १' में आठ युवा रचनाकारों – इंदु जोशी, ज्योति मेहतानी, पॉली नंदी बिन्नानी, पूर्णेन्दु ठाकौर, मानव गुप्त, रीता मेहरोत्रा, संजय बिन्नानी और मैं राजेन्द्र कानूनगो की रचनाएँ प्रकाशित हुईं जिसका संपादन किया ख्याति लब्ध गीतकार स्व० शंकर माहेश्वरी ने। इन आठ युवा रचनाकारों में छिपी काव्य-रचना प्रतिभा को पहचानकर 'स्वर समवेत' के बैनर तले प्रकाशित कर प्लेटफॉर्म दिया नवलजी ने। सिर्फ हम आठ युवा रचनाकारों को ही नहीं अन्य अनेक उन कवियों की पुस्तकें प्रकाशित की।

शायद २०-२५ वर्षों पूर्व एक मुलाकात में नवल जी ने अपनी बैंक में ही मुझसे अपने मन की बात कही थी कि अलग-अलग चित्रों पर आधारित अपनी कविताओं की पुस्तक प्रकाशित करना चाहता हूँ। जिसमें एक तरफ एक चित्र और दूसरे पृष्ठ पर उस चित्र पर कविता। पुस्तक तो शायद नहीं आई मगर पिछले दिनों

फेसबुक पर अनेक तस्वीरों पर नवल जी ने अपनी कविताएँ पोस्ट करते रहे। इससे चित्रों के प्रति उनका लगाव ही नहीं उन्हें समझने की सोच भी सामने आई। इसी बीच, यहाँ यह बात बता दूँ कि कोरोना महाकाल चल रहे लॉक डाउन के दौरान मेरे दो चित्रों पर उन्होंने अपनी कविता पोस्ट की थी। उनमें से एक थी News paper art विधा के मेरे एक नदी पर तैरती नाव – पर उन्होंने अपनी काव्य भावना १७ अप्रैल २०२० को इस प्रकार व्यक्त की –

इस काठी समय में
जब तुम्हारे पास
कागज़ की नाव जैसी उम्मीद हो
कैसे पार करोगे तूफानी नदी को?

भले ही तुम्हारे दिल में है
हौसलों की बुलन्दी
लेकिन कैसे बैठ पाओगे कागज़ की नाव में?

भले ही तुम्हारी बाजुओं में है
बेपनाह ताक़त
लेकिन कैसे खे पाओगे कागज़ की नाव को?

इरादों की पुख़्तगी
छू तो सकती है अरमानों को
पर दूरियाँ तय नहीं कर सकती।

आवाज़ें
जगा तो सकती हैं वीरानों को
लेकिन छायादार दरख़्त नहीं बन सकती।

ज़िन्दगी एक अबूझ पहेली है, मेरे हम सफर!
जिसे धीरज से समझा
और पार किया जा सकता है
कागज़ की नाव के सहारे भी।

हर करिश्मा
छिपा है आदमी के मुसल्लस धीरज में!

मेरे अग्रज एवं मेरी साहित्यिक चेतना के गुरु वरिष्ठ रचनाकार द्वारा मेरे चित्रांकन पर लिखी कविता से मैं अभिभूत हुआ। नवल भैया द्वारा यह मेरा समादृत होना ही तो है।

नाटक लोक-सम्पर्क का सर्वाधिक सशक्त माध्यम है। नवल जी को नाटकों से बेहद लगाव था, उन पर नाटक का प्रभाव था, अनेक नाटकों का अनुभव था। जैसा कि मैंने बताया मेरे और नवल जी के बीच परिचय

का माध्यम नाटक ही था। मैंने कई बार अपने लिखित नाटकों के बारे में उनसे चर्चा की। उन्होंने सदा ही अपने महत्वपूर्ण सुझाव दिए जो कि मेरी नाट्य-रचना यात्रा में भी पाथेय बने।

मैंने मुंशी प्रेमचन्द की आठ कहानियों का नाट्य रूपांतरण किया है। उनमें से चार कहानियों का नाट्य रूपांतरण 'चार एकांकी' शीर्षक पुस्तक का प्रकाशन सन २००७ में 'प्रतिध्वनि' द्वारा नवल जी के आशीर्वाद से ही सम्पन्न हो पाया था। इसका लोकार्पण नाट्य जगत की वरिष्ठ प्रसिद्ध अभिनेत्री, नाटककार, साहित्यकार श्रद्धेय डॉ० प्रतिभा अग्रवाल के कर-कमलों से होना मेरी पुस्तक को गरिमा प्रदान करना है।

यूँ तो मैंने अन्य अनेक नाटकों की स्क्रिप्ट लिखी है, नाट्य रूपांतरण भी किया है। किन्तु सन १९९६ में मैंने राम चरितमानस पर आधारित एक नाटक लिखा 'भरत मिलाप' महानगर की जानी-मानी संस्था परिवार मिलन के लिए। प्रयोगधर्मी स्वभाव के नाते मैंने इसमें प्रयोग किया काव्यात्मक संवाद लिखकर। नवल जी परम राम भक्त थे। शायद इसीलिए इस नाटक को सुनने में उनकी उत्सुकता साफ झलक रही थी। नवल जी ने बड़ी बारीकी से स्क्रिप्ट सुनने के बाद सराहनायुक्त आशीर्वाद दिया। बाद में 'खेल राजनीति का' और 'अग्निपुत्रों को नमन' के लिए नवल जी के महत्वपूर्ण सुझाव और न्यायोचित टिप्पणी ने मेरा मार्ग प्रशस्त किया और लिखने का साहस दिया। 'खेल राजनीति का' तीन व्यंग्य निबंधों का नाट्य रूपांतरण है जिनमें दो निबंध प्रसिद्ध व्यंग्यकार शरद जोशी के और एक निबंध सूर्यबाला का है। यह मेरे लिए एक चुनौतीपूर्ण प्रयोग था। मेरी जानकारी में किसी निबंध का नाट्य-रूपांतरण कभी किसी ने भी करने का साहस नहीं किया था। नवल जी ने ना सिर्फ इसकी सराहना की बल्कि अन्य निबंधों पर काम करने की सलाह देकर प्रोत्साहित किया। 'अग्निपुत्रों को नमन' देश की चार महान विभूतियों के जीवन पर आधारित है– बंकिम चन्द्र चटर्जी, बाल गंगाधर तिलक, महामना मदन मोहन मालवीय और लाला लाजपत राय। इसमें मराठी की ख्यात साहित्यकार श्रीमती शुभांगी भड़भड़े और सुप्रसिद्ध साहित्य एवं संगीत मर्मज्ञ श्रीमती रविप्रभा बर्मन का सहयोग साथ मिला। नवल जी ने कुछ तकनीकी कारणों के आधार पर तर्क-संगत टिप्पणी देते हुए इसमें कुछ संशोधन, परिमार्जन के साथ इसे पुनः लिखने का सुझाव दिया जिससे नाटक अत्यन्त प्रभावशाली बन पड़ा।

कलकत्ता आने से पूर्व नवल जी कानपुर में रंगमंच से सक्रिय रूप से जुड़े हुए थे, नवल जी ने स्वयं कई बार बातों-बातों में बताया था। कलकत्ता में उनकी मुलाकात जिन नाट्यकर्मियों से हुई उनमें प्रसिद्ध साहित्यकार और मंच अभिनेता स्वर्गीय मनमोहन ठाकौर भी थे। ठाकौर साहब महानगर की प्रसिद्ध नाट्य संस्था 'अदाकार' के स्तंभ थे। नवल जी का मैत्रीपूर्ण आत्मीय संबंध प्रसिद्ध अभिनेता एवं निर्देशक स्वर्गीय श्यामानन्द जालान से भी था जो नाट्य संस्था 'पदातिक' के संस्थापक थे। नवल जी की काव्य-कृति 'अग्नि' पर पदातिक आर्ट सेंटर द्वारा एक समूह-नृत्य अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति सम्पन्न नृत्यांगना श्रीमती कुमुदिनी लखिया के निर्देशन में हुआ। जिसमें मुख्य भूमिका थी श्यामानन्द जी की पत्नी नृत्यांगना श्रीमती चेतना जालान की। बाद में 'अग्नि' पुस्तक का संपादन स्वर्गीय मनमोहन ठाकौर जी ने किया। जिसमें चार आलेख संग्रहित हुए— अग्नि, अरण्यानी, नारायणी एवं इंद्रधनुष। ठाकौर साहब अपने सम्पादकीय में लिखते हैं कि संकलन के अंतिम लेख 'इंद्रधनुष' में नवल के कवि का नितान्त अभिनय आयाम उद्घाटित हुआ है। एक बार वर्षों पूर्व नवल पर राम विषयक दोहे रचने का नशा छाया था। उसके पहले और बाद, नवल ने लय और ताल के बंधन में बँधकर कविता नहीं लिखी थी।

नवल जी का सम्बंध कलकत्ता महानगर के लगभग सभी विशिष्ट और वरिष्ठ से लेकर कनिष्ठ नाट्यकर्मियों से अत्यन्त आत्मीय था। नाट्य जगत से जुड़े लब्ध प्रतिष्ठ चाहे वो आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री हों या डॉ० प्रतिभा अग्रवाल या उषा गांगुली सबके प्रति उनका जितना आदरभाव था, उतना ही स्नेह सम्बन्ध था अपने कनिष्ठ नाट्यकर्मियों से।

नवल जी से इन दिनों रूबरू मुलाकात कम और फोन पर बातें ज्यादा होती थी। १६ मार्च, २०२० को उनसे आखिरी मुलाकात ज्ञान मंच में 'पदातिक' के नाटक 'आत्मकथा' देखने के बाद हुई। नाटक के मुख्य अभिनेता कुलभूषण खरबंदा से उनके मैत्रीपूर्ण आत्मीय सम्बन्ध थे। कुलभूषण जब भी कलकत्ता आते नवल जी उनसे जरूर मिलते। नवल जी से जब कभी कहीं मुलाकात होती और उन्हें सीधे घर आना होता तब अक्सर वे मेरे साथ ही आते। उस दिन भी नाटक के बाद हम साथ ही थे। मेरे साथ थी मेरी पत्नी आशा और थे कहानीकार कपिल आर्य और मेरे नाट्य मित्र भरत बैद। नवल जी को चूँकि चटपटा खाने का शौक था–सिंघाड़ा, क्लब कचौड़ी, पकौड़ी आदि आदि। उस दिन हमने पुचका खाने की योजना बनाई और मैंने गाड़ी पुचकावाले की तरफ मोड़ दी। मगर अफसोस उनके साथ पुचका खाने की इच्छापूर्ति नहीं हो पाई। पुचकावाला जा चुका था। हमारा रास्ता नाटक 'आत्मकथा' और उसके कलाकारों के अभिनय के साथ व्यक्तिगत और घरेलू बातों में कब कट गया पता ही नहीं चला।

नवल जी सिर्फ कवि ही नहीं चिंतक भी थे। देहावसान के शायद चार दिन पहले ही एक लंबी बातचीत में उन्होंने देश की परिस्थितियों को देखते हुए कहा था "राजेन्द्र, कट्टरवाद देश के लिए खतरा बनता जा रहा है।"

नवल जी मेरे अग्रज, मेरे बड़े भाई ही नहीं, मेरे साहित्यिक गुरु भी थे। मैं उन्हें 'नवल भैया' कहकर सम्बोधित करता था। उनका वत्सल-हस्त मुझ पर सदा बना रहा। आज भी मैं संवादों और सुझावों का अनुकरण करने का प्रयास अपने जीवन तथा साहित्यिक यात्रा में सदैव करता हूँ। वे हमेशा मेरे साथ रहेंगे। ऐसा मेरा विश्वास है।

•

पृथ्वी पर नवल होना

■ राजेश्वर वशिष्ठ

नवल जी के अवसान की सूचना मुझे आज भी सहज स्वीकार्य नहीं है। उनसे अक्सर टेलिफोन पर बातचीत होती रहती थी। उनके परलोक-गमन से दो-तीन दिन पहले भी बात हुई थी। बहुत लम्बी बातचीत में भी उन्होंने कभी अपने स्वास्थ्य को लेकर चर्चा नहीं की। खाँसी उठती या मुझे उनकी आवाज में कुछ हल्कापन महसूस होता तो मैं पूछता– 'नवल जी, तबीयत ठीक है न! लगता है आप अपना ठीक से ध्यान नहीं रख रहे हैं। वह कुछ नहीं कहते, कोलकाता में अपने सोफे पर बैठे हँसते तो उस अस्फुट सी हँसी के साथ उनका स्मित चेहरा मेरी आँखों के सामने आ जाता और उन्हें फिर से बहुत कुछ छिपाने का मौका मिल जाता।

उनकी फितरत ही कुछ ऐसी थी कि उन्होंने कभी किसी से अपने निजी जीवन, कठिनाइयों, परिवार, मित्रों और सामाजिकता के विषय में शिकायत नहीं की। जब भी किसीसे मिलते, आगे बढ़कर उसके विषय में पूछते और उनकी भरसक कोशिश होती थी कि उस व्यक्ति को हर प्रकार से सांत्वना, मार्गदर्शन और प्रोत्साहन दें। वह जीवन के हर क्षेत्र की इतनी व्यापक समझ रखते थे कि उनके पास मित्रों की सभी समस्याओं के त्वरित हल होते थे।

मेरा पहला कोलकाता प्रवास बहुत छोटा था, १९८४-८५ के बीच लगभग एक वर्ष। उन दिनों मैं कोलकाता में रहने वाले हिंदी, बांग्ला के अनेक साहित्यकारों से मिला लेकिन नवल जी से मुलाकात नहीं हो पाई। अपने जीवन के बहुत बड़े हिस्से में नवल जी बेहतरीन कवि, लेखक होते हुए भी मंचों और गोष्ठियों से बहुत दूर रहे। बहुत बाद में, यही लगभग दस वर्ष पहले ही, मित्रों के बहुत समझाने पर उन्होंने अपनी कसम को तोड़ा।

उनसे मेरी पहली मुलाकात वर्ष २००० में हुई जब प्रतिध्वनि द्वारा एक कविता पत्रिका 'काव्यम' के प्रकाशन की योजना बनी। पहली मुलाकात में ही मैं उनके सुस्पष्ट उच्चारण, हिन्दी - उर्दू ज्ञान से इतना प्रभावित हुआ कि मुझे वाल्मीकि रामायण का वह प्रसंग स्मरण हो आया जब किष्किंधा पर्वत पर बैठे सुग्रीव ने श्रीराम और लक्ष्मण की वास्तविकता जानने के लिए हनुमान जी को विप्र वेश में उनके पास भेजा था और श्रीराम ने हनुमान जी के संभाषण के बाद लक्ष्मण से कहा था– 'ऋग्वेद के अध्ययन से अनभिज्ञ और यजुर्वेद का जिसको बोध नहीं है तथा जिसने सामवेद का अध्ययन नहीं किया है, वह व्यक्ति इस प्रकार परिष्कृत वार्तालाप नहीं कर सकता। निश्चय ही इन्होंने सम्पूर्ण व्याकरण का अनेक बार अभ्यास किया है क्योंकि इतने समय तक बोलने में इन्होंने किसी भी शब्द का अशुद्ध उच्चारण नहीं किया है। संस्कार संपन्न शास्त्रीय पद्धति से उच्चारण की हुई इनकी कल्याणी वाणी हृदय को हर्षित कर रही है।

नवल जी एक दुबले-पतले मनीषी थे जो एक-एक शब्द बहुत सोच कर, तोल कर बोलते थे। हिन्दी साहित्य के ही नहीं, उर्दू और अंग्रेजी भाषाओं तथा साहित्यों के भी विशद ज्ञाता थे। कविता ही नहीं काव्यशास्त्र और आलोचना के भी मर्मज्ञ। अनुवाद प्रक्रिया के विशेषज्ञ और भारतीय तथा विदेशी भाषाओं से हिन्दी में भाषांतर के प्रबल समर्थक। पत्रिका के स्वरूप के विषय में आयोजित पहली बैठक में ही यह स्वतःसिद्ध हो गया कि सम्पादन के क्षेत्र में भी उनकी योग्यता हिन्दी की किसी बड़ी व्यवसायिक पत्रिका के सम्पादन से अधिक ही है, लेकिन उन्हें नाम कमाने, चर्चित होकर सम्मान पानें की जरा सी भी लालसा नहीं है। बैठक में उन्होंने बड़े सहज होकर घोषणा की कि सम्पादक के रूप में हमें किसी साहित्यकार की आवश्यकता नहीं है, उस कार्य का वहन करने के लिए हम सब लोग साथ-साथ हैं, हमें ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो कार्यपालक के रूप में विभिन्न व्यवस्थाओं का दायित्व अपने ऊपर ले सके और ऐसा ही हुआ भी।

पत्रिका आरंभ हो गई। अपने रूप और कथ्य में भी 'नवल'। नवल जी पत्रिका के एक-एक पृष्ठ पर बेहिसाब मेहनत करते, तीन बार प्रूफ देखते और किसी भी पृष्ठ पर नुक्ते तक की गलती को होने से भी बचाते। प्रतिध्वनि के सर्वेसर्वा होते हुए भी, संस्था की पत्रिका में किसी गैरस्तरीय रचना को, स्नेह से अभिभूत होकर भी छपने का अवसर उन्होंने नहीं दिया। उन्होंने मेरी कविताएँ पढ़ी थीं और उनकी मुक्त कंठ से प्रशंसा भी की थी लेकिन मेरे लिए उनका आदेश था– 'राजेश्वर, तुम्हें विश्व कविता का अध्ययन करना चाहिए, देखना चाहिए, दुनिया के देशों की विभिन्न भाषाओं में कविता का स्वरूप स्थिति और स्वर क्या है। तुम इस पत्रिका में नियमित रूप से विदेशी कविताएँ भाषांतरण के माध्यम से प्रस्तुत करोगे।'

यह मेरे जीवन का स्वर्णिम काल था जब नवल जी जैसे विद्वान ने मुझे प्रोत्साहित किया। बहुत रुचि और श्रम के साथ मैंने विदेशी कविताओं का अध्ययन किया और नवल जी मेरे अनुवादों की समीक्षा करते, उन्हें सुधरवाते। एक-एक शब्द पर चर्चा होती और सौभाग्य से कई बार वह कहते– 'मजा आ गया राजेश्वर, तुम्हारा अनुवाद मूल पर भी भारी पड़ रहा है। मैं मुस्कुरा देता – सर, ऐसा भी तो नहीं होना चाहिए अनुवाद में साम्य और समक्षता का अधिक महत्व है।' वह मुझे गले लगा लेते। अंग्रेजी की लयबद्ध कविताओं के मामले में उनका आग्रह होता कि इनका हिन्दी अनुवाद भी लयबद्ध ही होना चाहिए। उन्होंने मुझे अनुवाद जैसे नीरस विषय की वे सब विशेषताएँ, बारीकियाँ समझाई जो 'अनुवाद विषय' का कोई व्यवसायिक आचार्य भी नहीं बता पाएगा।

सभी जगह नवल जी सदा स्व आग्रह पर नेपथ्य में ही रहे, सामने उन लोगों को किया जिन पर उनका स्नेह और विश्वास था। ऐसे लोग अब कहाँ मिलते हैं जो संन्यासियों की तरह सेवा भाव में ही जीवन गुजार दें।

यह नवल जी का ही दिया हुआ पारितोष था कि काव्यम् में छपे मेरे अनुवादों को भी पुस्तकाकार प्रकाशित किया गया। काव्यम् के लिए मैंने राष्ट्रीय स्तर के विद्वानों के साक्षात्कार लिए। उन्होंने हर चर्चा में मुझे बराबर की भागीदारी दी। वे किसी व्यक्ति के पद से नहीं उसकी प्रतिभा से प्रभावित होते थे।

जब २०१३ में मैं तीसरी बार कोलकाता आया तो नवल जी का आग्रह था कि अब तुम नियमित रूप से रचना कर्म में जुट जाओ। मैंने उन्हें निराश नहीं किया। २०१५ में जब मेरा पहला कविता संग्रह 'सुनो वाल्मीकि' आया तो नवल जी ने पीठ थपथपाते हुए कहा था, 'ये कविताएँ तुम्हारी पहचान बनाएंगी और २०१६ में इस संग्रह पर मुझे 'हरियाणा साहित्य अकादमी' का २०१५, का श्रेष्ठ कविता-संग्रह का

पुरस्कार और सम्मान मिला। मैं २०१६ में कोलकाता छोड़कर लखनऊ आ चुका था। पुरस्कार घोषित होने की सबसे पहली सूचना मैंने नवल जी को दी तो उन्होंने कहा– 'राजेश्वर, यह तुम्हारी जिजीविषा और श्रम का पुरस्कार है। मैं तो सदा सभी के लिए उपलब्ध रहा, चाहा कि जो भी जानता हूँ वह ज्ञान सब के बीच बाँट दूँ, तुमने उसे ग्रहण किया, मुझे संतोष मिल रहा है। खूब पढ़ो और संभल कर लिखो, बेहतर लिखने का मूलमंत्र यही है।' मेरे पास कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए शब्द नहीं थे।

पिछले पाँच वर्षों में हम सब के सौभाग्य से एक ऐसा दौर भी आया कि नवल जी फेस बुक पर सक्रिय हुए और नियमित रूप से अपनी असाधारण कविताएँ पोस्ट करने लगें। जहाँ उनकी उम्र के लोग डिजीटल तकनीक से आज भी घबराते है, नवल जी ने उसका व्यापक प्रयोग किया। वह कविताएँ ही नहीं, असाधारण चित्रों का संचयन भी प्रस्तुत करने लगे जो हर कलाकार को एक नई दृष्टि देता था।

यह क्रम चल ही रहा था कि अचानक हमारे मार्गदर्शक, मित्र और प्रोत्साहन दाता नवल जी किसी यायावर की तरह दूसरी दुनिया को प्रस्थान कर गए।

वह जिंदा रहेंगे हम सब की रचनाओं में, उनके अदृश्य हाथ, हर छोटी-बड़ी सफलता के बाद, हर बार हमारी पीठ थपथपाएँगें।

'नवल' एक ऐसा भाव है जो अमर है, सब उसके पीछे दौड़ रहे हैं, पुनर्नवा होने की चाह में।

•

भावोद्वेलन के सूक्ष्म और सफल चितेरे नवल जी

■ रामेश्वरनाथ मिश्र 'अनुरोध'

'जाना है पार शब्दों के अपार रहस्यों तक' जैसी अमर स्पृहा के उद्घोषक, दृढ़ संकल्पी, दृढ़व्रती, शब्द शिल्पी कवि नवल जी अचानक बड़े रहस्यमय ढंग से इस संसार को छोड़ गये। छोड़ गये वे संवेदना की थरथराती नदी को जिस पर वे एक जीवन की आश्वस्ति का जयगान करते हुए एक पुल की तरह खड़े थे। छोड़ गये वे यकायक घर के सारे काम सँभाले, बच्चों की माँ अपनी प्रिय पत्नी को जो खुद चक्की बन पिसी जा रही थी घर-गृहस्थी की चक्की में और जो अपने सारे सपनों को परिवार की भलाई के लिए पीस रही थी। छोड़ गये वे अपनी अत्यंत प्यारी गुड़िया (बिटिया) को जिसके लिए उन्होंने हृदय की उष्मा की स्याही और मानव प्रेम की थरथराती कलम से लिखा है— 'बड़ी हो रही मेरी गुड़िया उसकी आँखों के सपने भी/बड़े हो रहे साथ-साथ ही।' और जो 'अपनी माँ की तरह बड़ी-सी डिग्री लेकर अपना सबका/नाम करेगी, माथा ऊँचा/लेकिन इतना करने पर भी। वह चक्की क्या नहीं बनेगी?' छोड़ गये वे मेरे जैसे अनेक शब्द-साधकों और साहित्य के उपासक को जिनके ऊपर वे स्नेह और स्वस्ति की जीवनदायी शीतल फुहार बरसाते रहते थे और कहते थे— "मैं तुम्हें बताऊँगा/कैसे दूसरों के सुख के लिए/अपने व्यक्तिगत दुख को/पराजित किया जा सकता है/मेरे दोस्त! यह दुनिया बेरहम इसलिए है/कि हमारे स्वप्न हमें खूंखार बनाते हैं/और यही दुनिया रंग-बिरंगी तब हो जाती है/जब हम अपना काला रंग/किसी अंधे कुएँ में फेंक आते हैं/कभी जब तुम्हें लगे/कि अपनी आँखों और अपने सच से परे भी/है कोई और दुनिया/तब तुम आना मेरे पास/मैं तुम्हें ले चलूँगा वहाँ/जहाँ बच्चों की हँसी की निर्मल धारा में/कोई ईश्वर/अपना पाप धोता है।"

जब हम जागतिक मायाजाल में उलझकर बहुत उदास, निराश और दुखी हो जाते थे तो 'अप्पदीपोभव' कहनेवाले तथागत भगवान बुद्ध जैसी वाणी में नवल जी कहते अपने भीतर वसंत लाओ, खुशियों को जाग्रत करो। 'वसन्त सिर्फ एक मौसम का नाम ही तो नहीं है।' यह पूछने पर कि हम वसंत कैसे लाएँ चारों ओर तो अप्रीतिकर पतझड़ है तो वे श्रुतिमधुर वाणी में शास्ता की भाँति कहते— "आदमी की आग/जब-जब रचती है अपने भीतर, अपने बाहर/तब वसंत होता है/आदमी की आग/जब-जब फूँकती है शंख/तब वसंत होता है/आदमी की आग/जब-जब उठाती है न्याय की तलवार/तब वसंत होता है।" आज जब उनकी चिता की आग बुझ चुकी है, चिताभस्म पवित्र नदियों के जल में प्रवाहित की जा चुकी है और उनकी दधीचि ऋषि की सी अस्थियाँ चिताभस्म से चुन कर जन्मभूमि भारत की पावन मिट्टी में मिला दी गयी है तब भी 'एक अन्तहीन हलचल है/मेरे खून में समाई हुई/इरादा है/कि सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ा जाता है/मुझे मेरी पस्ती में भी उठाता है।' और कहता है– 'वह देखो वहाँ/जहाँ धरती और आकाश/एक दूसरे से जुड़ते हैं/बूँद-बूँद लहर बनती है/हौसले पक्षियों के मानिंद/उड़ान भरते हैं/प्यार दरख्तों की तरह/फूलता और फलता है/एक कारवाँ है / जो सिर्फ चलता है, चलता है।' नवल जी के द्वारा दिया गया मंत्र जो ऐतरेय ब्राह्मण के मंत्र 'चरैवेति, चरैवेति' से मिलता-जुलता है, हमसे यह भी कहता है— 'वह देखो वहाँ/जहाँ मसायल से भी बड़े/कई और मसले हैं/तुमसे जुड़नेवाली तुम्हारी/हजारहा नस्लें हैं/कर सको तो करो कुछ उनके लिए/बन सको तो उनके लिए खाद बनो/याद बनो, गूँजती आवाज बनो।'

नवल जी देश और समाज के लिए मानवता और साहित्य के लिए बहुत जरूरी व्यक्तित्व थे। वे गैरजरूरी होना भी नहीं चाहते थे। वे मानते थे कि— 'एक मकनातीस है/मेरे खून में समाया हुआ/इरादा है/कि सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ा जाता है/मुझे हर हाल में भी जिलाए चला जाता है/मुझे मेरी आग में तपाता है/मुझे गैरजरूरी होने से बचाता है,/बचाता है, बचाता है।' जीवन के प्रति इतनी गहरी आसक्ति रखनेवाले नवल जी का इतनी तड़ातड़ी संसार को छोड़ जाना हमें झकझोर गया है। क्योंकि नवल जी जीवन के कवि थे, जीवंतता के कवि थे; एक अंतहीन जिजीविषा, जिगीषा और सृजनेच्छा के कवि थे। वे मरना नहीं चाहते थे, उन्होंने मुझसे कभी मरने की बात नहीं की, जीवन से वे जुझारू कवि थे। उनका जीवट अदम्य था। उन्होंने बुलन्द आवाज में कहा था, 'समझो/यह आखिरी सफहा है/जिस पर तुम्हें अपनी आखिरी इबारत लिखनी है/समझो/ यह आखिरी मौका है/जब तुम्हें आखिरी बार कुछ बोलना है/समझो यह आखिरी साँस है /जिसे तुम्हें खुद में भरकर बाहर निकाल देना है/समझो यह तुम आखिरी छलांग भरनेवाले हो/जिसमें तुम्हें समन्दर पार कर जाना है/समझो/यह आखिरी वक्त है,/जो तुम्हारी अपनी मुट्ठी में बंद है/समझो/और इत्मीनान की साँस लो/और सोचो—/तुम कैसी इबारत लिखोगे, क्या बोलोगे और भरपूर साँस/लेते हुए कितनी दूर की छलांग लगाओगे।'

नवल जी भले कहते रहे कि 'समझो, यह आखिरी वक्त है, जो तुम्हारी मुट्ठी में बंद है; परन्तु वक्त उनकी मुट्ठी से रेत की तरह निकल गया। अभी तक जो वह नहीं लिख सके थे, साहित्य को जो कुछ वह नहीं दे सके थे, वह धरा का धरा रह गया। 'रहिगो मनमें मन को मनसूबो।' जीवन और मृत्यु के विषय में और शब्द की साधना और सिद्धि के संदर्भ में अत्यधिक सचेत और स्पष्ट रहनेवाले नवल जी, मुझे लगता है, हड़बड़ी में हमें छोड़कर चले गये। यद्यपि उनकी बातों से ऐसा कुछ भी संकेत नहीं मिलता था कि वे यहाँ से जाने की चुपके-चुपके मन-ही-मन तैयारी कर रहे हैं, 'इत्मीनान की साँस ले रहे हैं' और स्वयं से कह रहे हैं कि 'सोचो, तुम कैसी इबारत लिखोगे, क्या बोलोगे और भरपूर साँस लेते हुए कितनी दूर की छलांग लगाओगे।'

नवल जी का जाना बहुत खल रहा है। २४ अप्रैल २०२० ई. को रात साढ़े सात बजे मेरे मित्र और अनुजतुल्य कविश्री जे० चतुर्वेदी 'चिराग' ने सचल दूरभाष के द्वारा बताया कि कोलकाता महानगर के वरिष्ठ और अत्यन्त प्रतिष्ठित कवि नवल नहीं रहे तो मुझे विद्युत-स्पर्शाघात का सा झटका लगा, लगा जैसे मुझे साँप सूँघ गया हो। मुझे इस सूचना पर विश्वास नहीं हुआ। मैंने तत्काल कवयित्री विद्या भंडारी, सुकवि श्री राजेन्द्र कानूनगो और लेखक श्री संजय बिन्नानी आदि से दूरभाष के द्वारा बातचीत कर इस सूचना की पुष्टि की। बात सत्य थी। ऐसा सत्य जिसे अस्वीकार करना संभव नहीं था। दो दिन पहले ही उनसे १ घंटे ऊपर साहित्य पर चर्चा हुई थी और अचानक यह सब हो गया।

जीवन के रंगमंच पर उनकी भूमिका समाप्त हो गयी और मुस्कराते हुए वे चले गये। अस्वस्थ तो वे वर्षों से किसी न किसी व्याधि के कारण थे, किन्तु इतने अस्वस्थ कभी नहीं थे कि तुरन्त परलोक-प्रयाण कर जायें। नवल जी मुझसे आयु में लगभग १२ वर्ष बड़े थे, किन्तु वय-भेद की उपेक्षा कर वे मुझे अपना मित्र मानते थे। मेरे महाकाव्य 'राष्ट्रपुरुष नेताजी सुभाष बोस' के प्रकाशित होने के पश्चात मेरे प्रति उनकी धारणा में बड़ा परिवर्तन हुआ था। वे कहते थे मेरे मित्रों में तीन ही 'मित्र' साहित्यिक मित्र हैं। एक तो चले गये दादा जी पं० छविनाथ मिश्र, दूसरे हैं डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र और तीसरे आप हैं अर्थात रामेश्वर नाथ मिश्र 'अनुरोध'।

नवल जी से मेरा सम्पर्क १९९५ ई० से प्रगाढ़ हुआ। उनसे परिचय तो बहुत पहले, स्यात् १९८५ ई० से था किन्तु प्रगाढ़ता या अंतरंगता नहीं थी। वह परिचय औपचारिकता की सीमा तक ही सीमित था। सन १९९५ ई० में नवल जी 'कलकत्ता १९९५' साहित्य-संकलन का संपादन कर रहे थे। यह कलकत्ता महानगर के कुछ वरीय एवं नवोदित हिन्दी रचनाकारों की श्रेष्ठ रचनाओं का संकलन था जो कीर्तिशेष साहित्यप्रेमी मदन बाबू की पुण्य स्मृति में महानगर के साहित्यकारों द्वारा रचना-स्तवक के रूप में अर्पित था। इसका प्रकाशन 'उपचार ट्रस्ट' के आर्थिक अनुदान से संभव हुआ था। नवल जी 'कलकत्ता १९९५' में मेरी एक कविता छापना चाहते थे। मैंने उन्हें अपनी कविता 'शब्द हीनता को तोड़ने के लिए' दी। कविता उन्हें स्वर्गीय मनमोहन ठाकौर और डॉ० प्रतिभा अग्रवाल को भी बहुत पसंद आयी और उसे उन्होंने संकलन की पहली कविता (Opening) के रूप में छापा। मेरी लिखने की आदत है। यदि साहित्यिक रचनाएँ न लिखूँ तो भी डायरी अवश्य लिखता हूँ। मेरी डायरी में १० सितम्बर १९९५ ई० का एक विवरण इस प्रकार दर्ज है– 'कल रात को नवल जी मिले थे। उनका असली नाम जयप्रकाश खत्री है, परन्तु वे 'नवल' नाम से ही लिखते हैं। शरीर कोई लम्बा-चौड़ा नहीं है, परन्तु उनके विचार काफी लम्बे-चौड़े हैं, कार्यक्षेत्र भी। इन दिनों कलकत्ता '१९९५' नामक पुस्तक निकालने में व्यस्त हैं। मैं प्राय: एक दूकान से दूध, लस्सी या मिल्ककेक जैसी चीज खाता हूँ। कल नवल जी भी वहीं मिल गये। मैंने दूध लिया और उन्होंने लस्सी। अपना पैसा वे पहले ही दे चुके थे। मैं दूधवाले (जिसका नाम 'चाँद') को पटा रहा था कि वह नवल जी से लस्सी के पैसे न ले, उनका भी पैसा मैं दूँगा किन्तु नवल जी सब कुछ समझ गये और मेरे दूध के भी पैसे उन्होंने ही दिये। मेरी योजना विफल हो गयी।

नवल जी पान के बहुत शौकीन हैं। मुझको वह सदा पान खिलाते हैं और स्वयं जर्दावाला पान खाते हैं। पान खाने के बाद वे मेरी एक कविता पर बात करने लगे। कविता का शीर्षक है 'शब्द हीनता को तोड़ने के लिए' यह कविता नवल जी 'कलकत्ता १९९५' में छाप रहे हैं। पहली बार मिले थे तो मेरे नाम को लेकर परेशान थे। मेरा नाम रामेश्वर नाथ मिश्र 'अनुरोध' 'रा' अक्षर से शुरू होता है जो वर्णक्रम में बहुत बाद में आता है। मेरा उपनाम 'अनुरोध' वर्ण 'अ' से शुरू होता है जो वर्णक्रम में सबसे पहले आता है, वह आद्याक्षर है। मेरी कविता को वह संकलन में पहले स्थान पर छापना चाहते हैं, परन्तु मेरे नाम के कारण उन्हें असुविधा हो रही है। उन्होंने मुझे सुझाव दिया कि मैं रामेश्वर नाथ मिश्र 'अनुरोध' इतना बड़ा नाम न लिखकर उन्हीं की तरह लिखूँ। मैंने उन्हें स्वीकृति दे दी कि आप अपने संग्रह में मेरा नाम अनुरोध ही लिखें। वे बहुत प्रसन्न हुए, बोले– "आपकी कविता Opening कविता होगी। ऐसी कविता है कि उसका कैसे वर्णन करूँ। इसमें रक्त का उफान है। यह इतनी ठोस और सघन है कि क्या कहूँ? मनमोहन ठाकौर साहब को दिखाया तो वे उछल पड़े, बड़ी सराहना की। जिस-जिसको दिखाया सबने सराहा। मैं इसे छोटी करना चाहता था, तीन पृष्ठ ले रही है, परन्तु लाख कोशिश करके भी एक पंक्ति तो छोड़िए, एक अक्षर तक नहीं हटा सका; इतनी सशक्त कविता है। लोगों की धारणा है कि अनुरोध जी पुरानी स्टाइल की छन्दबद्ध रचनाएँ लिखते हैं। उन्होंने अतुकांत और ठोस कविता कैसे लिख दी? किन्तु मैंने कहा– अतुकांत कविता वही लिख सकता है जो छन्द का ज्ञान रखता है। नवल जी ने आगे कहा कि आपकी कविता ऊपर से नीचे तक जिस उद्देश्य को लेकर चली है, उसका पूरी तरह से निर्वाह करती है और अपना प्रभाव उसी स्फूर्ति के साथ बनाए रखती है। इसके बाद नवल जी ने बताया कि केदार सारथी की कहानी स्थानाभाव के कारण लौटानी पड़ी। टाइप भी करा ली थी। फिर वे

अपनी डायरी की बात करने लगे जिसमें वे दिन भर की बातें लिखा करते हैं। उसके दो-चार प्रसंग सुनाये। तदनन्तर हमलोग अपने-अपने स्थान को चले। १०/९/९५"

यह जब की बात है जिस समय नवल जी ने कई पुस्तक के प्रकाशन की एक बड़ी योजना हाथ में लिये हुए थे और बड़ाबाजार प्राय: आते थे। बड़ाबाजार में उनके तीन ही गंतव्य थे। एक था फूलकटरा में स्थित श्री भागचंद सुराणा का 'सुराणा प्रेस' और कार्यालय, दूसरा था स्व० शिवकुमार नोपानी का 'एस्केज प्रेस' जो शोभाराम बैसाख स्ट्रीट में था। नोपानी जी 'चाचा नोपानी' के उपनाम से विख्यात थे। वे दरियादिल थे, साहित्यकारों का सम्मान करते थे। प्रसिद्ध गीतकार और कवि पं० छविनाथ मिश्र (दादा) उनके यहाँ प्रूफ रीडिंग करते थे। वहाँ पर साहित्यकारों का मेला लगता था। 'वैश्वानर' के कवि स्व० मृत्युंजय उपाध्याय, प्रोफेसर शिवकुमार शर्मा, चन्द्रमा शर्मा 'रसेश', आलोचक श्रीनिवास शर्मा, आलोक शर्मा, राजेन्द्र कानूनगो, नवल जी प्रभृति वरिष्ठ विद्वान और कवि-लेखक प्राय: बैठक करते थे। कभी-कभी नगेन्द्र चौरसिया और कहानीकार कृष्णचन्द्र पाण्डेय 'अनय' भी आते जाते थे। मैं तो रहता ही था। चाचा नोपानी अत्यंत सहृदय व्यक्ति थे। सिगरेट बहुत पीते थे। आवाज भारी थी, लगता था जैसे साँस फूलती थी। बोली थोड़ी कड़ी थी, किन्तु हृदय के बहुत कोमल थे। सबको चाय पिलाते और पान खानेवालों को पान खिलाते थे। नोपानी जी के यहाँ से उठकर बहुत बार नवल जी और दादा छविनाथ जी सर हरिराम गोयनका स्ट्रीट स्थित डॉ० इन्दु जोशी से मिलने उनके घर जाया करते थे। इसके बाद हमलोग फूलकटरा में अवश्य आते थे। फूलकटरा में चाय की दो और दूध-दही-लस्सी की एक दूकान थी। वहाँ हमलोग चाय-पान करते गप्प मारते या साहित्यिक विषयों पर चर्चा करते। फूलकटरा एक प्रकार से महानगर का दूसरा कॉफी हाउस बन गया था। वहाँ कभी-कभी कहानीकार छेदीलाल, हर्षचन्द्र, पत्रकार सुरेश शर्मा 'मणिमय' पत्रिका के संपादक रामव्यास पाण्डेय जैसे लोग भी मिल जाया करते थे। इन्हीं दिनों नवल जी से मेरे सम्बन्ध परिचय के औपचारिकता को लाँघकर प्रगाढ़ता की ओर बढ़े थे और यह सम्बन्ध नवल जी से जीवनपर्यन्त पूरी गरमाहट के साथ बना रहा।

नवल जी के घर मैं केवल एकबार गया था। वे लेक गार्डेन्स में रहते थे। शायद वे बीमार थे और उन्हें देखने के लिए मैं उनके घर गया था। उस समय उनके पिताजी के भी दर्शन हुए थे। परिवार के अन्य किसी सदस्य से मेरा परिचय नहीं हुआ। बाद में आपसी बातचीत में पता चला उनकी पत्नी उर्मिला है, दो बेटे अनुराग और अनिरुद्ध हैं तथा दो बेटियाँ हैं अस्मिता और अदिति। एकबार और उधर जाने का अवसर मिला था जब नवल जी 'सामरथ' नामक एक साहित्यिक संस्था चलाते थे। यह संस्था दक्षिण कलकत्ता के पाम एवेन्यू में थी। उन्होंने बताया था किसी मित्र ने अपना फ्लैट इस संस्था के लिए उदारतापूर्वक दे दिया था। उस दिन कहानीकार स्व० कृष्णचन्द्र पाण्डेय 'अनय' ने स्वरचित कहानी का पाठ किया था और आलोचक श्री श्रीनिवास शर्मा ने उस पर आलोचनात्मक टिप्पणी प्रस्तुत की थी।

नवल जी छोटे कद के परन्तु बड़े विचारवाले कवि थे। उनकी पोशाक में उनके विचारों की स्वच्छता, सुन्दरता, सुरुचि और सौष्ठव का आभास होता था। वे अति शिष्ट और विशिष्ट व्यक्ति थे। मुँह खोलकर बहुत कम हँसते थे। फिर भी उनके मुखमण्डल पर मन्द स्मित आभा झलकती रहती थी। अपने कपोलों के आकुंचन मात्र से अपनी हँसी का सृजन कर लेते थे। देखने में संकोचशील विनयी प्रतीत होते थे। उन्हें अनावश्यक बातों में उलझते हुए मैंने कभी नहीं देखा। उनका शायद ही कभी किसी व्यक्ति से मनमुटाव हुआ हो। उन्हें किसी से लड़ते-झगड़ते, कुतर्क करते या निरर्थक बहस करते मैंने कभी नहीं पाया। वे मृदुभाषी थे, कुसुम कोमल

शारीरिक मृदुता के धनी थे। उनके सम्पर्क विभिन्न भाषा के साहित्यकारों, कलावंतों और गुणियों से थे। उन्हें पंजाबी होने का आनन्दमय अभिमान था। उन्हें अपने परिवार और गुरुजनों पर श्रद्धारंजित गुमान था। वे बड़ी प्रसन्नमुद्रा में अपने दादा-दादी, माँ और नानी के विषय में बताते थे। ऐसी ही चर्चाओं में उनकी टुकड़े-टुकड़े जीवनी मेरे हाथ लगी थी। वे बताते थे कि उनकी माँ जब प्रसन्न होती थी तो चंदामामा की कहानियाँ सुनाया करती थी। वे बराबर कहती कि मनुष्य बनो। मनुष्य से बड़ा विश्व में कोई नहीं। जो मनुष्य होता है, उसके साथ एक आभामंडल चलता है। यहाँ 'मनुष्य' शब्द पर विचार करना चाहिए। माँ, मनुष्य आकार धारी की चर्चा न कर मनुष्यता को धारण करनेवाले मनुष्य की ओर संकेत कर रही थी। उनकी माँ स्वभाव से सरल थी तो दादी ठसकदार थी। इस प्रकार बालक नवल को माँ मनुष्यता का पाठ पढ़ाती थी और ठसकदार दादी उनमें ठसक भरती थी। नवल जी के दादा जी स्व० गंगेश्वरानन्द के शिष्य थे। स्वामी जी प्रज्ञाचक्षु थे, किन्तु विलक्षण विद्वान थे। उनका भी नवल जी पर गहरा प्रभाव था।

नवल जी के कथनानुसार उनकी शिक्षारंभ चार वर्ष की आयु में हुई थी। उनकी प्राथमिक शिक्षा कैम्ब्रिज स्कूल में हुई। वह विद्यालय लन्दन से मान्यता प्राप्त और सम्बद्ध था। उसी विद्यालय में भारत के पूर्व प्रधानमंत्री डॉ० मनमोहन सिंह ने आरंभिक शिक्षा ग्रहण की थी। काल के प्रवाह में नवल जी का धनाढ्य परिवार आर्थिक अभाव के चपेट में आ गया और कठिनाइयों के थपेड़े खाने लगा। परिणाम स्वरूप किशोर नवल जी को अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़कर अर्थोपार्जन हेतु अपने बहनोई (जीजा) तिलकराज कपूर के पास कलकत्ता आना पड़ा। तिलकराज के पिता थे श्रीमान हीरालाल कपूर, जिन्हें नवल जी अपना गुरु भी मानते थे। उन्होंने ही अपने किसी परिचित से कहकर नवल जी की नौकरी बैंक (पंजाब नेशनल बैंक) में लगवा दी थी।

साहित्य में नवल जी की अभिरुचि बाल्यकाल से ही थी। उन्होंने मुझे बताया था कि उन्होंने ९ वर्ष की आयु में एक एकांकी लिखा था। १० वर्ष की आयु में उनकी कविताएँ जहाँ-तहाँ छपने लगी। वे यह भी कहते थे– "मैं जन्मजात संपादक हूँ।" यह बात उनके बाद के जीवन से सत्य प्रमाणित हुई भी। उन्होंने अनेक ग्रंथों का संपादन किया। वे यह भी कहते थे कि उनकी जन्म तिथि में ४ दिनों का अन्तर है। किताबों में उनकी जन्मतिथि ११ मई, १९४० ई० है। कानपुर में पढ़ते समय उनके विद्यालय के प्रधानाचार्य हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक सद्गुरु शरण अवस्थी थे। अवस्थी जी नवल जी की प्रतिभा के कायल थे।

नवल जी सुव्यवस्थित व्यक्ति थे। उनके जीवन में अव्यवस्था या विश्वास नहीं था। उनके प्रत्येक कार्य-कलाप या गतिविधि में एक चारु व्यवस्था होती थी। जो व्यवस्था उनके लेखन में दिखती थी, वह उनके वास्तविक जीवन में भी थी। प्राय: लोग दो तरह का जीवन जीते हैं– लेखन में या समाज में कुछ और तथा निजी जीवन और घर में कुछ और। नवल जी को कृत्रिमता से चिढ़ थी। वे अपना पारिवारिक जीवन सुव्यवस्थित रखते थे। अपना लेखन भी। वे किसी से और कभी भी अपने परिवार के लोगों – पत्नी, पुत्र-पुत्री, पुत्रवधुएँ या पौत्र-पौत्री, दौहित्र-दौहित्री, जामाता आदि– की निन्दा या आलोचना नहीं करते थे। कम-से-कम मुझसे अथवा मेरे सामने किसी और से उन्होंने स्वजनों की निन्दा नहीं की। वैसे निन्दा करने का उनका स्वभाव भी नहीं था। जो कहना होता था, स्पष्ट, मुँह के सामने कह देते थे। प्रसंगवश उनकी बातों से पता चलता था कि वे अपने पारिवारिक जीवन से असंतुष्ट नहीं थे। अपनी पत्नी का नाम बड़े आदर के साथ लेते थे। उन्हें 'उर्मिला जी' कहते थे। बेटे-बेटियों के बारे में भी बड़े सम्मान से ही कुछ कहते थे। परलोक गमन के कुछ महीने पूर्व वह अपने एक बेटे के पास गुरुग्राम (गुड़गाँव) में कई महीने रहे थे। अपना फोन नम्बर भी बहुत कम लोगों को

बताकर गये थे। कहते थे कि वहाँ पर शांति से कुछ काम करेंगे। मुझसे गुड़गाँव से भी बातचीत का तारतम्य बना रहा था। कलकत्ता में एक बेटी उनके साथ ही रहती थी, उसके गुणों की चर्चा वे खूब करते थे। कभी-कभी फोन करने पर कहते थे कि 'अनुरोध जी' अभी मैं कपड़ा फेंच रहा हूँ, या नौकरानी आ गयी है, उसे काम बताना है, आपसे बाद में बात करूँगा। मैं इन बातों से इस निष्कर्ष पर पहुँचा था कि नवल जी के साहित्यिक कार्य में उनका परिवार किसी भी प्रकार से बाधक नहीं था। उनके लेखन का उनके घर में अवश्य सम्मान था। जबकि प्राय: देखा जाता है लेखक की रचना उसके परिवारीजनों में ही उपेक्षित और निरादृत होती रहती है। जीवन में सब प्रकार से संतुष्ट रहने के कारण ही शारीरिक व्याधियों से पीड़ित रहते हुए भी नवल जी सर्वदा सरल, सरस और विनोद प्रिय बने रहे। वरिष्ठ साहित्यकार पं० छविनाथ मिश्र, श्री आलोक शर्मा, श्री श्रीनिवास शर्मा के संदर्भ में उनकी विनोदप्रियता बेलगाम हो जाती थी। उनके लेखन में सातत्य था। गद्य-पद्य दोनों में ही वह लिखते थे। उनका लेखन निरन्तर औदात्य और प्रौढ़ता को प्राप्त करता रहा। उनके व्यवहार और लेखन दोनों में आनन्दित करनेवाले शिष्टता, सौम्यता, आभिजात्य और एक अलग ढंग की दार्शनिकता सदा बनी रही।

नवल जी को कई भाषाओं का ज्ञान था। उनकी मित्रमंडली में पंजाबी, बंगाली, गुजराती, मारवाड़ी, भोजपुरी, बिहारी, मराठी सभी लोग थे अत: वे पंजाबी, बांग्ला, भोजपुरी, गुजराती, मारवाड़ी भाषाओं की जानकारी रखते थे। बीच-बीच में अंग्रेजी भी बोलते थे। 'अरण्य' पुस्तक से पता चलता है कि वे संस्कृत भाषा का ज्ञान रखते थे। हिन्दी में तो लिखते ही थे। बुलबुल सराय और कॉफी हाउस की चर्चा में उन्हें रस मिलता था। मदन बाबू, मनमोहन ठाकौर, डॉ० प्रतिभा अग्रवाल, आचार्य कल्याणमल लोढ़ा, कपिल आर्य, श्रीनिवास शर्मा, शंकर माहेश्वरी, संजय बिन्नानी, मृत्युंजय उपाध्याय की चर्चा वे खूब करते थे। संजय बिन्नानी को वे 'गुरुजी' कहते थे। उन्होंने नवल के अलावा चौपटानन्द और बाँके बिहारी नाम से भी लेखन किया है। वे अपने मित्रों में सबसे आदरणीय और अकरणीय हिन्दी के श्रेष्ठ गद्य शिल्पी पद्मश्री डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र को मानते थे। एकबार उन्होंने गोपा गांगुली नाम की एक बंगाली महिला की चर्चा की थी, जो उन पर तन-मन-धन से समर्पित थी।

नवल जी सदा-सर्वदा सक्रिय रहते थे। कुछ-न-कुछ करते रहना उन्हें प्रिय था। वे मानते थे कि "कुछ करने के लिए न हो/तो आदमी जरूरत से ज्यादा थक जाता है।" यह सत्य है कि काम न करने से प्राणी की शक्ति क्षीण हो जाती है। नवल जी अतिवादी नहीं थे। वे अति को नहीं पसंद करते थे, क्योंकि "अति तो किसी भी चीज की डिसबैलेंस कर देती है। इसके विपरीत रचनात्मकता कभी किसी को अकेले रहने देती नहीं" यह विचार उनको निरन्तर क्रियाशील या कर्मरत बनाये रहता था।

कवि नवल स्पष्टवादी रचनाकार थे। यथार्थवादी भी थे। अपने प्रति, अपनी रचनाओं की गुणवत्ता के प्रति कभी सन्देह या भ्रम में नहीं रहते थे। वे ऐसी किसी महत्त्वाकांक्षा के वश में नहीं होते थे जो उनके लिए दुष्प्राप्य या आकाशकुसुम थी। जो लोग उनसे कुछ विलक्षण या विचित्र लिखने या करने की आशा अपने मन में पाल रखे थे, उनसे वे स्पष्ट कहते थे– 'अगर आप आशा करते हैं कि मैं मदारी की तरह/आकाश में रस्सी फेकूँगा/ अपने शब्दों को उस पर दौड़ाता हुआ/आसमान में खो जाने दूँगा/तो मेरे भाई/ आपको सचमुच निराश होना पड़ेगा।' नवल अपना दर्द जनता का और जनता का दर्द अपना समझते थे। उन्होंने लिखा है– 'मैं तो अपने दर्द से छुटकारा पाने के लिए हाथ-पाँव मार रहा हूँ और परेशान हूँ/कि वह घटने के बजाय बढ़ रहा है/और आपके दर्द के साथ जुड़ रहा है।' यह सर्वसाधारण जन से जुड़ने की संवेदना - आकांक्षा ही नवल जी के लेखन की

सिद्धि है। सत्य की पक्षधरता और मिथ्या का विरोध उनकी रचनाओं में मुखर होता था। इसके लिए वे व्यंग्य का सहारा लेते हुए कहते थे– 'हजूर, यहाँ सब ठीक-ठाक है/यकीन मानिए, हम सरकारी सच बोल रहे हैं।' वे सत्य को बिना लाग-लपेट के कहते थे— 'और यहाँ आइये/अपनी बच्ची को अभी-अभी बेचा है।' अन्याय के विरुद्ध कवि नवल नक्सली विचार और शस्त्र की साधना को उचित ठहराने लगते थे– 'जब कविता/अन्याय के लिए हथियार नहीं बन पाती/तब यह हथियार उगलने लगता है न्याय की पक्षधरता।' नवल जी यथास्थितिवादी नहीं थे। वे परिवर्तन प्रेमी थे। अत: कहते थे– 'ले जाये सब कुछ, जो कुछ भी बचा है/बाढ़ के बाद शायद कहीं अंकुर फूटे/कभी तो उस धरती की भी कोख हो हरी।'

कवि का व्यंग्य शीतकाल की ठंडी हवा के समान चुभनेवाला होता था– 'पेड़ों की तरह ऊँचा तो नहीं होता है आदमी/क्या इसलिए उसे/अपनी छुअन से वंचित कर जाते हो।'

नवल जी को सुलगते सवालों का समाधान ढूँढ़ना पसंद था। चुप्पी से उन्हें अकुलाहट होती थी, क्योंकि 'चुप्पी/जब लगातार चुप होती है/और बन जाती है किसी का स्वभाव तब वह एटम बम से भी ज्यादा खतरनाक बन जाती है।'

समय को आदेश देने का साहस सब में नहीं होता, लेकिन नवल जी ऐसा ही साहस रखते थे। वे समय को अपने पीछे चलाना चाहते थे– 'और वक्त से कहा–/अबे, बहुत हो चुका अब मेरे पीछे चल।' इतना ही नहीं वे समय को खुद में समाते देखना चाहते थे। यथा– 'समय बढ़ रहा है, बदल रहा है, जाग रहा है/समय को खुद में समाते देखो।'

नवल जी अपनी माँ से अत्यधिक प्रेम रखते थे। मर कर भी माँ उनके भीतर सदा जीवित रही। यथा– 'माँ/मेरे साथ जागती है/जैसे मेरे भीतर की आग/जिसके प्रकाश में नाचते हैं अक्षर गोलाकार/और फिर जुड़कर/शब्द बन जाते हैं।'

नगरीय चेतना के कवि होने के कारण नवल जी की कविताओं में ग्राम्य जीवन के चित्र विरल हैं/'काला हाँडी' पुस्तक में उन्होंने ग्राम्य जीवन को चित्रित करने का प्रयत्न किया है, किन्तु उसमें वह आत्मीयता और गरमाहट नहीं है जो डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र की रचनाओं में मिलती है।

नवल जी की बातचीत से पता चलता था कि वे महात्मा गाँधी के विरोधी और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के पक्षधर और प्रशंसक थे। महात्मा गाँधी का विरोध वे सैद्धांतिक आधार पर करते थे। सुभाष बाबू की नीतियाँ, महात्मा गाँधी की नीतियों की अपेक्षा नवल जी के मन और हृदय के अधिक अनुकूल और समीप थी।

अंत में, मैं नवल जी के अंतिम दौर की कविताओं के बारे में कुछ कहना चाहता हूँ। नवल जी तीन-चार वर्ष से फेसबुक पर बहुत सक्रिय हो गये थे। वे फेसबुक पर कभी स्वरचित कविता, कभी दूसरों के द्वारा भेजे गये चित्र, कभी मित्रों का परिचय इत्यादि भेजा करते थे। इन कविताओं में 'प्रियम्वदा' को लक्ष्य कर अनेक कविताएँ उन्होंने फेसबुक पर डालीं। निश्चय ये कविताएँ इनकी उत्तमोत्तम कविताएँ हैं। इनमें भाव और शिल्प का बड़ा मणिकांचन योग है और कवि की प्रौढ़ता-परिपक्वता का परिचय मिलता है। इन कविताओं को पढ़कर पता चलता है कि नवल जी प्रेम और सौन्दर्य के सागर में डुबकी लगाकर कैसे-कैसे मोती और रत्न निकाल सकते थे। नवल जी प्रेम और सौन्दर्य के कवि थे, इस तथ्य की पुष्टि और प्रमाण 'प्रियम्वदा शृंखला' की कविताएँ प्रस्तुत करती हैं। 'प्रियम्वदा' के विषय में पूछने पर उन्होंने बताया था कि वह कानपुर की एक सुन्दरी थी और शिक्षाकाल में उनसे मिली थी। यथार्थ में वह जैसी भी रही हो, परन्तु कवि नवल जी ने उसका

जो रूप खड़ा किया वह बड़ा मोहक, अद्भुत और प्रभावशाली है। प्रियम्वदा को जिस मनोयोग से उन्होंने भावों से सजाकर कल्पना की तूलिका से शब्दों में उतारा-उकेरा है, वह चित्र विलक्षण है। प्रियम्वदा के उस चित्र को देखकर महाकवि कालिदास की शकुन्तला का स्मरण हो आता है। शकुन्तला के सौन्दर्य वर्णन में महाकवि लिखते हैं कि शकुन्तला को रचते समय विधाता ने बड़ा परिश्रम किया होगा। महाराज दुष्यन्त अपने मर्मसचिव सखा माढव्य से आह भरते हुए कहते हैं– 'क्या बतलाऊँ मित्र, विधाता की सृष्टि करने की सामर्थ्य और शकुन्तला की देहयष्टि देखने से पता चलता है कि विधाता ने सृष्टि करने की समस्त सामग्रियों को मन में रखकर केवल रूपराशि के द्वारा इस कृशांगी की रचना की है। इसीसे उन्हें एक विलक्षण स्त्रीरत्न को खड़ा कर दिया है। यथा–

चित्ते निवेश्य परिकल्पित सर्वयोगान्
रूपोच्चयेन विधिना विहिता कृशांगी।
स्त्रीरत्नसृष्टिरपरा प्रतिभाति सा में
धातुः विभुत्वमनुचिन्त्य वपुश्च तस्याः।।
(अभि० शकु० २/४०)

नवल जी की प्रियम्वदा शृंखला की इन कविताओं को पढ़कर ही मैं जान पाया कि नवल जी नीरव चाँदनी के पद की आहट को सुन सकते थे, विस्तृत सागर के अन्तःकरण के उद्वेलन की भाषा और उसके हाहाकार को कलात्मक रूप देकर कविता बना सकते थे, पुष्प पराग पीकर मतवाले हुए मधुपों की गुनगुनाहट को अपने हृदय के सितार पर उतार सकते थे, अनन्त आकाश की गहरी नीलिमा के चित्रफलक पर उच्चतम सामाजिक मूल्यों और आदर्शों को बड़ी सहजता से उकेर सकते थे। उनका साहित्य मानव की गरिमा को प्रेम के पावन स्पर्श से पुलकित करता है और वह संकीर्ण सामाजिक व्यवहारों और मनोवृत्तियों का कलात्मक ढंग से परिहार करता है। उसमें नग्नता, कुरुपता और भद्दापन कहीं नहीं मिलता; वह जीवन के अनुभवों के खुलेपन, ताजगी और आत्मानुभूतियों के स्वाभाविक औदात्य से उत्पन्न हुआ है। भावोद्वेलन के सूक्ष्म और सजग चितेरे नवल जी में अपने समय के प्रति गहरी जिज्ञासा थी, यथार्थ की ठोस भूमि पर खड़ा हुआ एक पारदर्शी अध्यात्म था, पहाड़ी बहती हुई नदी जैसी मर्मस्पर्शी संवेदना की उल्लास युक्त एक लय तथा उन्मुक्तता थी। नवल जी की कविताएँ पाठकों से सीधा संवाद करती हैं, उनमें जीवनधर्मी स्वच्छता और स्वच्छन्दता है; उनमें अत्यधिक संवेदनशील रचनात्मक सरोकार रखनेवाले कवि के हृदय की स्नेहिल सुन्दरता का समावेश है। उनके भाव एवं बिम्बग्रहण में पाठक को तनिक भी कठिनाई नहीं होती।

कवि नवल जी का अचानक इस धरती से चुपचाप चला जाना बंगाल के हिन्दी जगत को एक कभी न हटनेवाले शून्य से भर गया है। नवल जी हिन्दी के उन कवियों में थे जिन्होंने गद्य-पद्य दोनों साहित्य-रूपों में शिल्प, कथ्य और भाषा के स्तर पर नवीन प्रयोग किया। वे एक प्रयोगधर्मी रचनाकार थे। साहित्य को मात्र मनोरंजन का साधन नहीं मानते थे, बल्कि उसे समाज को सचेत, सुशिक्षित और बौद्धिक बनाने का प्रयत्न समझते थे। उनकी रचनाओं में व्यर्थ की नारेबाजी, दलीय प्रतिबद्धता, राजनीतिक पक्षधरता, शोरगुल, अभद्रता और विरुपता का नितान्त अभाव है मैं उनकी दिवंगत आत्मा को इन्हीं शब्दों में अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ।

•

संवेदना, सौहार्द्र तथा आत्मीयता का गुम्फन : कवि नवल

■ डॉ० लखबीर सिंह निर्दोष

संस्मरण ऐसी विधा है जिसके माध्यम से लेखक अपने अतीत से साक्षात्कार करता है। मानो संस्मरण लेखक को अपनी पहचान ढूंढने में सहायता करता है जबकि यथार्थत: लेखक स्वयं को स्मृतियों के कटघरे में खड़ा देखकर अपने पात्र से क्षमा याचना करता दिखाई देता है। सच तो यह है कि वह संस्मरणीय व्यक्ति से इतना अभिभूत होता है कि उसकी लेखनी और विवेक अत्यधिक अपनत्व एवं स्नेहार्द्रता के कारण संकुचित हो जाते हैं अथवा मैत्री की अतिरंजिता उसे वाचाल बना देती है।

जीवन-पथ कभी समतल नहीं होता उसमें उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। जिजीविषा को समय के परिवर्तन के साथ-साथ हर परिस्थिति के अनुकूल सहज और असहज पथावरोधों पर चलना पड़ता है. अमृतसर में अपना शिक्षण संस्थान स्थापित होने तथा एक कवि साहित्यकार की पहचान अर्जित कर रहे युवक को अचानक सपरिवार कलकत्ता स्थानान्तरित होने का आदेश मुझ जैसे भावुक मसिजीवी और घर-परिवार के प्रति समर्पित व्यक्ति के लिए कालापानी निष्कासित किए जाने से कम न था। कलकत्ता में मेरे चार अनुज मिलकर व्यापार को विस्तृत करने की योजना बना रहे थे। फलत: अग्रज होने का मूल्य और बलिदान चुकाना था। परन्तु नियति अपना जाल बुनने में लगी हुई थी।

१९७५ के नवम्बर-दिसम्बर की बात है। मैं चक्रबेरिया भवानीपुर में स्थित अपने व्यापारिक कार्यालय में बैठा सायंकाल होने वाले एक साहित्यिक कार्यक्रम के बारे में सोच रहा था। अचानक एक सज्जन व्यक्ति आए और छोटे भाई से निर्दोष जी के बारे में पूछने लगे। वे गुजराती भाषा के उभर रहे उद्भट विद्वान नलिन पटेल थे। उनका निवास स्थान समीप ही था। औपचारिक बातचीत के मध्य दस मिनट पश्चात जैसे ही कमरे में प्रवेश किया एक मेरी ही कद काठी वाले सौम्य व्यक्ति ने मुझे ऐसे गले लगा लिया जैसे एक अंतराल के बाद हम मिल रहे हों। हम एक दूसरे की ओर देखकर मुस्कराते रहे। नलिन पटेल जी ने मौन तोड़ते हुए कहा कि आप तो पहले से ही परिचित हैं नवल जी। मैंने तुरन्त कहा कि पूर्वनियोजित पहचान को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं होती। नवल जी के साथ मेरी इस जन्म की पहली मुलाकात थी जो निरंतर प्रगाढ़ होती गई। सायंकाल की काव्य-गोष्ठी में मुझे स्नेहिल निमंत्रण देने आए थे।

भाई नलिन पटेल जी बंगला के वंदनीय भक्त कवि जीवनानन्द कवि के काव्य का गुजराती भाषा में लिप्यांतर कर रहे थे। वे उन्हें बारहवीं शती के महान संत कवि संत नरसिंह के तुल्य मानते हुए उनपर तुलनात्मक शोध कार्य कर रहे थे उनकी अभिलाषा थी कि हिन्दी एवं पंजाबी भाषा में भी यह कार्य हो। नलिन जी सम्भवत: १९८४ में गुजराती उच्च माध्यमिक विद्यालय के प्राध्यापक भी मनोनीत हुए। आज समस्त गुजराती एवं साहित्य जगत उन्हें गुरुजी के रूप में स्मरण करता है।

नलिन जी कैसे मेरे पास आए और नवल जी से प्रथम साक्षात्कार सब पूर्वनियोजित था। वास्तव में मधुर परमार जो गुजराती के नवोदित कवि थे मुझे दो तीन बार मिल चुके थे नलिन पटेल जी और नवल शाम को निर्धारित समय पर कॉफी हाउस के पास सेंट्रल एवेन्यू पर स्थित हिन्दुस्तान बिल्डिंग के सामने प्रिंसेप स्ट्रीट के टी स्टाल के बाहर नवल जी खड़े थे, वही अंदाज मुस्कराते हुए लगभग तीव्र कदमों से आगे बढ़कर मुझे बाँहों में लेते हुए चायखाने में ले गये। वहाँ उपस्थित लोगों से परिचय कराते हुए छविनाथ जी, नीलम, मृत्युंजयजी, सिद्धेश, शंकर माहेश्वरी, कपिल आर्य, आलोक शर्मा और यह है इस बुलबुल सराय की नई बुलबुल जो आज महकेगी-अमृतसर के निर्दोष मैंने गीत गुनगुनाया और कविताएं सुनाई। सभी ने रचनाएं सुनाईं सभी की रचनाएं अंतर्मन को आलोड़ित करने वाली थीं। बुलबुल सराय नाम नवल जी ने ही दिया था। माह में दो बार बुलबुल सराय में बुलबुले वर्षों चहकती रही। उसी स्थान पर परमादरणीय डॉ० कृष्णबिहारी मिश्र जी के भी दर्शन हुए। निर्व्याज आत्मीय नैकट्य प्रीतिकर मैत्री का खुलापन तथा नवल जी की छलकती हुई संवेदना विशेषकर मेरे विगत के कैनवास को एक शिल्पी की भांति निज्जता के रेखांकन के साथ-साथ उसमें अकल्पनीय अप्रतिम भाव मिश्रित नव प्रतीकों के विरल रंग भरती जा रही थी। सबके बीच रहकर भी जिस ऐकान्तिकता ने अन्त:करण में एक शून्य निर्मित करना शुरु कर दिया था, वह भरने लगा था। नवल जब भी मिलते किसी प्रकार की औपचारिकता और सबकी उपस्थिति को भूलाते हुए दौड़कर गले से लगा लेते और पंजाबी में कहते– आओ जी सोनेओं–बस एस्तरां ही मुस्करांदे रवो-' कार्यक्रम के मध्य कहीं बैठे हों उठकर मुझे सबके समक्ष बाँहों में लेकर अपने पास बैठाना और बैठते ही पूर्ववत कहना– सबसे कहता हूं मैंने हर परिस्थिति में निर्दोष से मुस्कराना सीखा है और देखो इसकी मुस्कराती आँखों में हर पल मोती झिलमिलाते रहते हैं। तभी तो मैं इसे छायावाद का अंतिम कवि कहता हूं। यह सहजाभिव्यक्ति उनकी संवेदनशीलता को उत्कीर्ण ही नहीं करती, अपितु उसका तारल्य सबको सिक्त कर देता था। नवल जी के कवि को किसी भी साहित्यिक कार्यक्रम में अथवा अपनी संस्था प्रतिध्वनि के द्वारा एक साथ ग्यारह काव्य-संग्रहों के लोकार्पण के समय भी स्वयं को स्वत: प्रस्तुत करना उचित नहीं लगा। इस संदर्भ से जुड़ी एक विशिष्ट अंतरंग घटना उनकी संवेदना की उदात्तता को रूपायित करती है। उनकी इच्छा ही नहीं, अपितु व्यक्तिगत आग्रह भी था कि मैं अपनी रचनाएं उस सारस्वत यज्ञ में समर्पित करुं। मैंने स्वीकार तो कर लिया लेकिन समय आने पर मैं किसी कारणवश उनके आग्रह को पूर्ण न कर सका। उसके पीछे क्या कारण था इसकी चर्चा आजतक किसी से नहीं हुई, परन्तु नवल जी ने लोकार्पण के कुछ ही दिनों के पश्चात ही फोन पर कहा कि 'मैं समझ गया था कि आप उसमें क्यों सम्मिलित नहीं हुए। मैंने हँसते हुए इतना ही कहा कि आपके सान्निध्य से बहुत कुछ सीखा है मैंने। प्रत्युत्तर में उनकी संवेदनशीलता मुखर हो गई जब उन्होंने कहा कि भला एक ही सिक्का अपनी गुणवत्ता को विभाजित कैसे कर सकता है। सबकी दृष्टि में पीछे रहने से न कोई छोटा होता है और न आगे बैठ कर कोई शिखरासीन हो जाता है। यही कारण है कि आपका वह कथन नलिन जी और मुझे अच्छा और सच्चा लगा था–न: नवल-न: निर्दोष-और न:नियति पूर्वनियोजित नियोजन की ओर संकेत नहीं करते क्या? नवल जी उस समय तुरन्त उठकर नलिन पटेल जी के समक्ष आदर भाव से कहने लगे उसी नियति ने न-नलिन जी के रूप में आकर हमें पुन: मिला दिया। उनकी संवेदना बोलते-बोलते काव्यलोक के तत्क्षण नवपल्लवित कोंपलों का सुरभित गुच्छ सजा देती और सभी आत्मविभोर हो जाते।

नवल जी की आत्मीयता सीमातीत रही है। बड़ाबाजार लाइब्रेरी में अथवा किसी भी स्थानीय कार्यक्रम के आयोजित स्थान निर्दोष तुम भी कमाल करते हो,क्या बात है मुस्करा तो रहे हो, पर हम दिखाई नहीं दे रहे क्या ? कहते! आजकल सभी के दिल में दर्द है पर करवट तो तुम में ले रहा है। कार्यक्रम समाप्त होने पर मेट्रो तक पहुंचते साढ़े आठ बज जाते। अक्सर मैं नवल जी सुमन जी तीनों एक साथ ही गाड़ी में जाते थे। मैं सबसे पहले यतीनदास पार्क उतर जाता। पन्द्रह मिनट का वह सफर अविस्मरणीय पलों का चिरंतन साक्षी रहेगा। गाड़ी में खड़े बैठे गीत कहना सुनना नव प्रतीकों का त्वरित चित्रांकन उन क्षणों को पीयूषसिक्त कर देता था। मेट्रो की यात्रा ने हमें यायावरों में शामिल कर दिया था। भले ही 'किन्नर देश की यात्रा' (राहुल सांकृत्यायन) अथवा 'बहता पानी निर्मला' (अज्ञेय जी) जैसी ऐतिहासिक यायावरी न थी, बल्कि कवि अंतर्मन को मिलाने वाला पथ था जहाँ पहुंचकर युगों से विलग अंत छोर मिल जाते आप बीती सुनते-सुनाते और पुनश्च:पूर्ति के लिए पुन: मिलने का वचन लेकर अपनी-अपनी राह पर पकड़ लेते।

ऐसे अनेक अवसर आए जब हम दोनों अकेले मेट्रो से एक संग गए। कार्यक्रम पर काव्य पर संक्षिप्त आदान-प्रदान के दौरान व्यक्तिगत जीवन की क्षणिक अनुभूतियों की बातें करते। सम्भवत: तीन वर्ष पूर्व हम जैसे ही मेट्रो प्लेटफॉर्म पर पहुंचे नवल जी एकांत पाकर बड़ी आत्मीयता से मेरा हाथ पकड़कर बैठ गए। बिना किसी भूमिका के कहने लगे– आज अमृतसर की गलियाँ-बाजार मुझे अपनी ओर खींच रहे हैं। तुमने तो अमृतसर को जिया है उसकी महक और मकरंद का तुमने अनवरत पान किया है।

बड़ाबाजार लाइब्रेरी के कार्यक्रमों में हम मिलते रहते थे। महानगर के अथवा आमन्त्रित रचनाकारों की उपस्थिति में भी वे उठकर बाँहों में लेना न भूलते। उनकी संवेदना सौहार्द्र तथा आत्मीयता का गुम्फन उनकी उदात्त एवं अपरिमित संवेदनशीलता को रूपायित करते थे। हमारी निर्धारित यात्रा का समय आठ साढ़े आठ बजे रात एक अविस्मरणीय यायावरी साक्षी था। मैं पन्द्रह मिनट के पश्चात यतीन्द्र पार्क स्टेशन पर उस अल्प समय की युगीन काव्यमयी मधुरता को साँस में संजोए उतर जाता। कभी हम दोनों अकेले होते तो मेट्रो स्टेशन भी मानो लम्बी गीत संध्या का तटस्थ और रसिक श्रोता बन जाता।

इसी संवेदनासिक्त संध्या में उनकी विगत स्मृतियों की गगरिया छलक-छलक मेरा अन्तर्मन आह्लादित करती रही। आत्मीयता से हाथ पकड़े कहते रहे और मैं निर्निमेष उनके उन्मीलित नयनों में निर्दोष को अमृतसर के नमक मण्डी चौक में खड़ा सामने उनकी जन्म स्थली कटरा कर्मसिंह और साथ सन्निविष्ट अपनी गली कंधारियाँ चित्रपट की भांति निहारता रहा। उसी चौक की प्रेमकथा से गुलेरी जी ने अपनी कालजयी अमर प्रेमगाथा 'उसने कहा था' को बुना था। नवल जी पैपसू की नाभा रियासत (विभाजन पूर्व) के वंशज हैं। वे साठ सत्तर वर्ष पहले की स्मृति-मंजूषा को खोल मुझे उसकी मूल्यातीत मणियों से रश्मि वलय में आबद्ध किए जा रहे थे। तुम पहले क्यों नहीं मिलें! हम दोनों के सजल नयन मुस्करा रहे थे।

तीन वर्ष पूर्व नवल जी अमृतसर नाभा दिल्ली की एक माह की यात्रा करके लौटे। हमारे निर्धारित कार्यक्रमानुसार अमृतसर में मेरे बचपन के मित्र प्रिंसिपल भनोट जी ने उन्हें तीन दिन तक नगर की उस नियोजित चौक नमक मण्डी और अन्य गली कूचों अपने कॉलेज जहाँ पंजाबी के कालजयी अमर महाकवि शिव बटालवी साथ मिलकर यादगार गीत संध्या का मंच सांझा किया था तथा अन्य और मेरे स्थापित संचालित शिक्षण संस्थान और जहाँ हमारी गोष्ठियाँ होती थीं– सब को नयनागार में भर लाए।

अमृतसर से लौटे उन्हें छः माह हुए थे कि मनीष जी अचानक हमें छोड़कर चले गए। नवल जी सूचना पाते ही उद्वेलित तो हुए परन्तु कहा कि नियति ने पूर्वनियोजित यात्रा का अंतिम अध्याय पूर्ण कर हमारे अगले पथ का संकेत दिया है।

नवल जी नैसर्गिक संवेदना-स्पंदन के प्रकंपन की, शब्द की, छन्द की अन्वेषणा करने वाले कवि हैं। उनके शब्द प्रवाह में प्राणवायु का प्रकम्पन है। सृष्टि की सर्जना करने वाली अग्नि उनके कवि को नयी ऊर्जा से ऊर्जस्वित करती है, जो नवल जी के विभिन्न काव्यात्मक आयामों को छन्द मनी छन्द:व्याख्यान का पूर्वाभास है–

'अग्नि पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत— ।

–ऋग्वेद

वही अग्नि कवि की संवेदना को आदिम सभ्यता के प्रथमोत्थान से लेकर आज अत्याधुनिक सर्व सम्पन्न समाज में मानव जाति को भस्मीभूत कर रही है। जीव-जगत-ब्रह्म की दार्शनिक अभिव्यक्तियों, उदात्त साधनाओं के बावजूद भी जीवनदायिनी प्राणशक्ति अग्नि भूख की नारकीय ज्वालामुखी, धधकती ज्वालामुखी सभ्यताओं, संस्कृतियों तथा मानवीयता को क्षार-क्षार कर रही है। कवि की संवेदना मूक सिसकती है पर उनका कवि मौन नहीं रह सकता, तब नैसर्गिक संवेदना मुखरित हो उठती है— आग/राशन की लाइन में/ आग कुर्सी हथियाने के खेल में/जलाती है पूरे देश को/आग जलाती है आग। आग। आग।। आग होती है/ विलाप में/हताशा में/— आग प्रश्न है/समाधान खोजती है/आग अन्त है/प्रारम्भ खोजती है/ (ऋक् संहिता के सूक्त का पूर्ण नाट्य रुपांतर– अग्नि से) ?

कवि मूलत: पुरुष-प्रकृति, जीव-ब्रह्म तादात्म्यावस्था की साक्षात प्रतीति नारी के आदिशक्ति स्वरूप में देखता है। नवल जी की प्रेम कविताएं नारी के शोषण और अवहेलना की मार्मिक अभिव्यक्ति करते हुए भी उसे परमपुरुष के संग अपने अटूट अमर आदि सम्बंध को पहचानते हुए उसमें उसके प्राणों में साँस-साँस में प्रवहमान अजस्र शक्ति-अनन्त सौन्दर्य-अकल्पनीय पालक और संहारक स्वरूप को परमपुरुष के संग सृष्टि की सर्जना के प्रथम पल में परिव्याप्त को अपनी रोमावलियों में टंकृत करना होगा :–

'आईना तुम्हारी आँखों में
तुमको देखता है,
जबकि मेरी आँखों में
तुम खुद को पढ़ सकती हो।

नवल जी संवेदना शिल्पी हैं। उनका कवि मानव-जीवन की नैसर्गिक ऊर्जा उत्स सर्जनात्मक सौन्दर्यराशि को धुंधला होते हुए नहीं देखना चाहते इसलिए एक प्रवीण शिल्पी की भाँति अपनी इन्द्रधनुषी तूलिका से इस अनुपम छवि को सम्पूर्ण चिरंतन सौंदर्यमयी देखने के लिए कृतसंकल्प हैं।

•

उदात्त संवेदना के परमाणुओं से निर्मित व्यक्तित्व : नवल

■ डॉ० वसुमति डागा

२४ अप्रैल २०२० को कोरोना के कारण लॉकडाउन में मन वैसे ही त्रस्त था। अचानक रात १० बजे फोन की घंटी बजी। 'तुम्हें कुछ पता है?.... क्या?.... नवल जी नहीं रहे.... क्या बोल रही हो! कहीं तुमने गलत तो नहीं सुन लिया?' बान्धवी कमलेश जैन के इस अविश्वसनीय दुखद कथन पर मन ने यकीन नहीं किया। फिर तो व्हाट्सएप, फेसबुक देखना शुरू किया और कठोर सत्य उजागर हो गया। मन स्तब्ध हो गया। मन की दशा ऐसी थी जैसी नवल जी ने वर्षों पहले अपनी कविता में लिखी थी–

'कोई गायक अपने गीत की कड़ी अचानक भूल जाए
किसी संगतराश के हाथ की छेनी उसकी पकड़ से छूट जाए
किसी फ़नकार का ब्रश ग़लत स्ट्रोक दे बैठे,
कोई चिड़िया गाती-गाती चुप हो जाए....।'

(सरो के दरख्त जैसी रोशनी)

पहली बार नवल जी को राजस्थान क्लब के खुले प्रांगण में श्री विमल लाठ द्वारा आयोजित कार्यक्रम में देखा था। उस अवसर पर विमल लाठ उनकी कविता का वाचन कर रहे थे और नवल जी मूक अभिनय। एक कवि को अपनी कविता पर मूक अभिनय करते पहली बार देखा था। उसके बाद उनसे श्री शिक्षायतन हॉल में किसी कार्यक्रम में मुलाकात हुई। परिचय में मेरा नाम जब उन्होंने सुना तो उनके मुखमंडल पर एक उल्लासमय मुस्कान उभर आई और उन्होंने कहा कि इस नाम से तो मेरी कविता है– 'ऐसा क्यों होता है वसुमति'।

इसके बाद नवल जी के जन्मदिन के अवसर पर 'भारतीय भाषा परिषद' में जयशंकर प्रसाद की कविताओं की संगीतमय प्रस्तुति रंगकर्मी मदन सूदन जी ने की। उस कार्यक्रम की कमेन्ट्री में उन्होंने मुझे भी शामिल किया और गायन था आज के प्रसिद्ध गायक 'नचिकेता' का। यह कार्यक्रम बहुत ही अनूठा रहा।

नवल जी ने 'नवांकुर' की योजना बनाई। नये युवा कवियों के लिए यह मंच था। एक पुस्तक नये युवा रचनाकारों की कविताओं की 'नवांकुर' प्रकाशित की। नवांकुर द्वारा युवा कवियों का 'कवि सम्मेलन' भारतीय भाषा परिषद में किया गया, जिसका संचालन उन्होंने मुझसे करवाया। इस प्रकार सारी योजना नवल जी की ही थी।

इसके बाद भी कई साहित्यिक समारोह हुए उसमें डॉ० प्रभा खेतान, विद्या भंडारी, सुन्दर पारख आदि की पहली बार पुस्तकें नवल जी ने प्रकाशित की और विमोचन कार्यक्रम का संचालन मुझसे करवाया। उन दिनों इस प्रकार के कार्यक्रम मेरे लिए बहुत ही प्रेरणादायक एवं उमंगों से भरे होते थे।

वे दिन भी मेरे स्मृति पटल पर उभर रहे हैं, जब १९८६ में एक साथ मेरे पूज्य माता-पिता जी का साथ छूट गया। छोटी बहन का विवाह कर दिया और मैं एकाएक नितान्त अकेली हो गई। उन दिनों रंगकर्मी मदन सूदन जी के साथ कविवर नवल जी, छविनाथ मिश्र जी, नीलम श्रीवास्तव, मृत्युंजय उपाध्याय और उन दिनों आकाशवाणी में कार्यरत प्रभाकर चतुर्वेदी, ये सभी अक्सर शाम को 'सुराना प्रिंटिंग प्रेस' जो मेरे बड़ाबाजार के घर के पास फूलकटरा में थी, वहाँ से अक्सर मेरे घर आ जाते थे। इन संवेदनशील रचनाकारों के मन में संभवत: मेरे लिए चिंता थी कि कहीं विषम परिस्थितियाँ मुझे निराशा-हताशा की गिरफ्त में न ले ले। इस अनौपचारिक गोष्ठी में मेरी बांधवी डॉ० ऊषा द्विवेदी (जो अब नहीं रही), डॉ० इन्दु जोशी तथा कभी-कभी डॉ० रीता मेहरोत्रा एवं डॉ० कमलेश जैन भी सम्मिलित हो जाती थीं। घर पर माननीय कवियों की यह उपस्थिति मेरे अवसादमय जीवन को रचनाशीलता के संवेगों से भर देती थी। नेतृत्व नवल जी का रहता था और इनके परस्पर काव्यात्मक संवाद मुझे सकारात्मक दिशा देते थे। नवल जी जब अपनी कविताओं को सुनाते थे तो उनका स्वर पूरे वातावरण में एक 'नाद' उत्पन्न कर देता था। संवेदनाओं का स्पन्दन शब्दों में ढलकर अपनी खुशबू दूर तक पहुँचा देता था। इस समय नवल जी की ये पंक्तियां मेरे मानस पर उभर आयी हैं।

तब आप कितने खुश होते हैं।
जब आप हवाओं पर सवार होते हैं।
दुनिया आपको झिलमिलाती नजर आती है।
और आप किसी उड़न खटोले पर बैठकर,
दुनिया का जायज़ा ले रहे होते हैं।
(आधी रात का शहर)

बाद के दिनों में मेरी व्यस्तता आकाशवाणी, दूरदर्शन और मंचों पर ज्यादा हो गई तथा नवल जी की रचनाशीलता का अपना काफ़िला पूरी गति के साथ चलता रहा। यद्यपि कार्यक्षेत्र भिन्न होने के कारण मुलाकातों का सिलसिला कम हो गया था लेकिन बड़े भाई की सदाशयता और स्नेह का सम्बन्ध अंतिम समय तक बना रहा।

नवल जी के भीतर नये युवा कवियों को उभारने का, तराशने का अद्भुत ज़ज्बा था। युवा काव्य प्रतिभा को तराशने, प्रोत्साहित करने और मंच देने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। अपने वाक् कौशल एवं ज्ञान गरिमा से उन्होंने युवा पीढ़ी को संस्कारित किया। वे हमेशा युवा पीढ़ी के प्रेरणास्रोत बने रहे। इतना ही नहीं जब भी किसी की कविता पुस्तक प्रकाशित होती तब नवल जी की प्रसन्नता ऐसी होती थी मानों स्वयं समृद्ध हो गये हों। उनके अर्न्तमन की पुलक कुछ ऐसी होती थी–

रहिमन यों सुख होत है, बढ़त देखि निज गोत।

उनके पास योजनाएँ बहुत थी। टीम बनाकर सार्थक काम करना उनको आता था। 'नवांकुर' जैसे ग्रंथ के प्रकाशन एवं 'अपूर्वा' जैसी महत्वपूर्ण पत्रिका के पीछे उनकी प्रेरणा, परिकल्पना और दिशानिर्देशों को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

उनका व्यक्तित्व बनावट से दूर एवं गहरी आत्मीय संवेदना से परिपूर्ण था। उनसे मिलने वाला हर शख्स रिश्ते की डोर में बंध ही जाता था। उन्होंने लिखा भी है–

'प्लास्टिक के युग में रहकर भी
मैं प्लास्टिक का फूल तक न बन पाया।'
(आधी रात का शहर)

अपने समय के यथार्थ को उन्होंने पूरी शिद्दत के साथ अनुभव किया था और उसकी पीड़ा उनकी रचनाओं में भी बखूबी उभरकर आयी है, जैसे–

मज़हब प्यार और खुदा के मुहावरे को
दोहराते हुए हम लहुलुहान हुए जा रहे हैं
और जिन्दगी हमारी पकड़ के बाहर है।
(सरो के दरख्त जैसी रोशनी)

वर्षों यश और नाम से स्वयं को दूर रखकर वे नेपथ्य से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे। हाँ, इधर कुछ वर्षों से वे मंचों पर दिखने लगे थे। फेसबुक को उन्होंने काव्य-प्रस्तुति का अच्छा माध्यम बना लिया था, जो काफी जीवंत रहा। फेसबुक पर वे अपने हर पाठक की प्रतिक्रिया का पूरी तत्परता और आत्मीयता के साथ उत्तर देते थे।

पिछले कई दिनों से मेरा मन न जाने क्यों कविवर नवल जी से बार-बार मिलने को कहता था, मेरा घर अब साल्टलेक में होने के कारण स्थानगत दूरी हो गई थी, कभी-कभी मन करता कि उनके घर चली जाऊँ, आदरणीया उर्मिला भाभी का अक्सर ख्याल आता, उनके हाथ की पालक पनीर की सब्जी, चटपटे छोले और खीर का स्वाद कई बार लिया था। लेकिन अब लंबे अंतराल के बाद जाने में संकोच होता था। पर आज अफ़सोस होता है कि क्यों नहीं गई। जब दिल कुछ कहता है तो उसे सुनना चाहिए, किन्तु-परन्तु का जंजाल नहीं बनाना चाहिए।

आखिरी बार लॉकडाउन के पहले उनसे फोन पर लंबी बात हुई, लगभग एक घंटा। उन्होंने कवियित्री एवं कलकत्ता दूरदर्शन के हिन्दी विभाग की पूर्व प्रोड्यूसर सुशील गुप्ता पर संस्मरण लिखा था। सुशील दी पर बात होते-होते बातचीत का विषय अध्यात्म हो गया। उस दिन ब्रह्म, जगत और मनुष्य को लेकर जो बातचीत हुई, उसे यदि मैं उनका 'प्रवचन' कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ऐसा धारा प्रवाह प्रवचन इसके पहले इस विषय पर उनसे नहीं सुना था। मुझे क्या पता था कि यह उनसे मेरा आखिरी संवाद है। उस दिन पहली बार मैंने कहा था कि आपसे मिलने को मन कर रहा है। यदि आप बड़ाबाजार या थियेटर रोड या अन्य किसी स्थान पर साहित्यिक प्रयोजन से जाएं तो मुझे बता दीजियेगा। मैं आपसे मिलने आउंगी। पर इस बार उनका उत्तर जैसा होना चाहिए वैसा नहीं था। बहुत ही मद्धम स्वर में उन्होंने कहा– हाँऽऽऽ। यह उत्तर उनके स्वभाव के प्रतिकूल था। वे तो हमेशा बड़ी जिन्दादिली से उत्तर देते थे पर इस बार का उत्तर बड़ा अटपटा लगा। मुझे क्या पता था कि यह उनसे मेरी आखिरी बातचीत है। उस दिन फोन पर हुई बातचीत का सार था– शिवोऽहं, शिवोऽहं।

उदात्त घनीभूत संवेदनाओं से सम्पन्न वह हंसता-मुस्कुराता व्यक्तित्व आज हमारे बीच नहीं रहा। उन्होंने स्वयं को उस नित्य, असीम, अखंड, आनंद तत्त्व में लीन कर दिया। प्रयाण के तीन दिन पूर्व २१ अप्रैल २०२० को अपने व्हाट्सएप ग्रुप में जो अंतिम मैसेज दिया था उसका उल्लेख करना चाहती हूँ–

'बंधुवर, व्हाट्सएप के माध्यम से आपके साथ अब तक जुड़ा हुआ था। सुबह-सुबह सुप्रभात कहने का आनन्द कुछ और ही था, आगामी कल से प्रातःकालीन इस रिचुअल से मुक्त हो रहा हूँ आत्मशोधन के लिए।

आप मुझे सदैव स्मरण रहेंगे।' उनसे फोन पर मेरा आखिरी संवाद भी कुछ ऐसे ही स्वर लिये हुए था। अव्यक्त से व्यक्त एवं पुन: व्यक्त से अव्यक्त की यह यात्रा उन्होंने सम्पन्न कर ली।

नवल जी आज पंचभूतात्मक शरीर के साथ हमारे बीच नहीं हैं। मन आज भी यकीन नहीं करना चाहता। लेकिन अपनी रचनाओं के माध्यम से और अपनी रचनात्मक संवेदनशील आत्मीयता के साथ वे हमारे बीच रहेंगे। उनकी कविताएं आने वाली पीढ़ियों को सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करती रहेंगी। श्रद्धेय कविवर नवल जी को उन्हीं के ओजस्वी शब्दों में मैं अपना प्रणाम निवेदित करती हूँ–

मैं उगूँगा फिर
आँख की रोशनी का
समन्दर बनता हुआ
दिखूँगा फिर
रेगिस्तानी आँधियों में
बचने वाले काफिले सा।
मैं उगूँगा फिर —
बीते हुए कल की जमीन पर
आने वाली कल की तलाश में।
मैं उगूँगा फिर
बार-बार तुम तक आने के लिए
मैं उगूँगा।

•

वो हिन्दी का एक पूरा मोहल्ला था कलकत्ता का

■ विजय बहादुर सिंह

कलकत्ता मेरे जीवन का यथार्थ भी था और सपनों का शहर भी। सुदूर अवध के एक ऐसे गाँव में, जिसके आस-पास बारह चौदह किलोमीटर तक कोई कस्बा नहीं और शहर भी कहें तो तेइस चौबीस किलोमीटर दूर। ज्यादातर प्रकृति और उसकी गोद में पलते खेत-खलिहान बाग-बगीचे थोड़े बहुत बिखरे-फैले ऊसर बनझुलियाँ पोखर-सागर आते-जाते मौसम और ऋतुएँ। ऐसे ठेठ देहात से चलकर आया हुआ एक बच्चा पहले तो हावड़ा पुल की भव्यता देख ही चकरा गया और शाम होते ही चौरंगी की जगमगाती सड़कें फुटपाथ और विज्ञापन-कंपनियों की बेरंगीन लाइटें जलकर-बुझती, बुझते ही फिर जल उठतीं कि मैं देर तक उनके जादू को निहारा करता। आज भी वो जादू पूर्वजन्म के किसी संस्कार की तरह मेरे अवचेतन में जब-तब अपना होना जताते रहते हैं। पर इसमें भी क्या शक कि यह जादू जादू ही था, कम से कम मेरे लिए और आज भी है।

तब कलकत्ता मेरे लिए किसी खूबसूरत तमाशे से क्या कम था। मद्धिम लय में किसी मंदाक्रांता छंद सी रुकती-फिर टन-टन कर चल पड़तीं ट्रामें खचाखच भरी शोर करती बसें टुन-टुन करते हथरिक्शे और भागती-दौड़ती बेतहाशा भीड़। क्या खूब वर्णन किया है अजीज दोस्त और कवि शलभ श्रीराम सिंह ने–

जलयानों ने सौंपा तट को विश्राम।
हुगली की लहरों में
डूब गई शाम।
ट्रामों-कारों-रिक्शों पर बैठा है शहर।
थकी थकी आँखों के आगे है केवल घर
बच्चे की सालगिरह (?)
पत्नी की बीमारी (?)
भाई का व्याह (?)
कहीं जाने की तैयारी (?)
आओ,
ऊपर चलें।
पुल के ऊपर चलें।
ऊपर-ऊपर चलें।
हाँ - हाँ अब घर चलें
दिशा - दिशा लटक गई नागिन की केंचुलें।
क्षितिजों की खिड़कियां शायद कल फिर खुलें।

हावड़ा पुल की शाम
–१९६३

यह उस महानगर का छंद था जिसकी लय में हम सब गुँथे थे – यानी शलभ, शंकर महेश्वरी, आलोक शर्मा और नवल और इन सबसे ऊपर था एक मुकुट व्यक्तित्व – कृष्णबिहारी मिश्र। कृष्णबिहारी मिश्र की एक

और भी दुनिया थी जिसमें जब-तब थे, रेवतीलाल शाह। पर उनका छंद भी अलग था और लय भी। कृष्णबिहारी जी ही मेरे लिए वह गेटवे थे जिनसे होकर मैं नवल जैसे दोस्तों तक पहुँचा था।

वह एक ऐसा जवान समय था जिससे हम सब जुड़े थे किसी खिले और दहकते हुए पलाश की तरह। कोई गीत तो कोई कविता लिखता, कोई ललित-निबंध तो कोई कहानी। अपना जिन्दा बचपन और उमंग से भरा यौवन लेकर दिन भर सेंट्रल एवेन्यू के पंजाब नेशलन बैंक की मशीनी जिंदगी को किसी खिलाड़ी की तरह खेलता नवल हमारी प्रतीक्षारत शामों का एक मात्र चौपाल था। वह बैंक से निकलता तो ऐसा लगता कि अभी-अभी फील्ड से कई-कई छक्के लगाकर चला आ रहा है। कैसा सुखद कि दाएँ इंडियन कॉफी-हाउस और सौ कदम बाएँ पड़ोस की वह 'बुलबुल सराय'। यानी कि एक साउथ इंडियन कैफे।

याद है नवल से सबसे पहले कृष्ण बिहारी जी ने मिलवाया था। वे मेरे साहित्यिक अभिभावक की तरह मिले थे मुझे या कहूँ मिले हुए हैं अब भी। उनके ही साथ पहली बार मैं ठाकुर प्रसाद सिंह की स्वागत गोष्ठी में गया था – चौरंगी होटल में जहाँ पहली बार मैंने शलभ को कविता पढ़ते सुना था और उसकी विरल प्रतिभा के आकर्षण में बँध गया था। बाद में तो हम दोस्तों की तरह खूब सलाम भी हुए और उतने ही बदनाम भी। मजा हमने दोनों ही का लिया। वह समय भी आया जब हम दोनों दशकों साथ-साथ जिए और मरे भी।

नवल से दोस्ती की एक सीमा थी। यह जरूर है कि मैं अपनी थोड़ी-बहुत निजी और गोपनीय बातें भी शेयर करता उससे पर जिसे घर-परिवार की बातें कहा जाता है, उन्हें दूर ही रखा जाता। मैं तब थोड़ा-बहुत लिखना नये सिरे से सीख रहा था यों शब्द से यारी तो सत्तावन-अट्ठावन के बरसों से ही शुरू हो चुकी थी। बच्चन, नीरज और हद से हद दिनकर या फिर शिव मंगल सिंह 'सुमन' यही तो कवि थे, मेरे लिए। बीसवीं सदी का यह चौसठवाँ-पैंसठवाँ बरस था। तब तक मैं एम०ए० तक की पढ़ाई पूरी कर चुका था। पैंसठ से तो छपने भी लगा था।

ये ही दिन थे जब हम दोनों जवान होते दोस्तों की तरह करीब आते गए। नवल कितना गद्य लिखता था, यह तो आलोक शर्मा जैसे दोस्त जानें पर कविताएँ तो वह लिखता ही था और अपने खूबसूरत पाठ से उन्हें प्रभावकारी भी बना डालता था। शायद पहले कभी कानपुर वाले दिनों में वह नाटकों में भाग लेता था। इसलिए शब्द की हैसियत क्या है उसके साथ कैसा सुसंस्कृत व्यवहार किया जाना चाहिए इसे वो बखूबी जानता था। कहने का मन होता है कि उसके पाठ में नाटक के पात्रों जैसी अदायगी थी और यह उचित भी है। बस कमी जो अब मुझे सोचने पर लगती है वो यह कि जिस भाषा में वह लिख रहा था, उसकी विरासतों को लेकर सोचते या बात करते मैंने उसे कभी नहीं पाया। इस मायने में शलभ और शंकर महेश्वरी अधिक आत्मसजग थे। शलभ के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं पर हाफिज की गजलों का अनुवाद। शंकर ने भी बता दिया कि उनके बाहर और आस-पास भी एक और दुनिया है जिसके पास एक लेखक या कवि का जाना बेहद जरूरी है। नवल इस मायने में बेहद आत्ममग्न या कहें आत्ममुग्ध जीव था। किसी भी लेखक या कवि के लिए यह आत्ममुग्धता इसलिए बेहद खतरनाक सिद्ध होती है कि उसे पता ही नहीं लगता कि उसके आगे और पीछे आस-पास और भी लोग काम कर रहे हैं। यानी कि एक प्रसन्न और सजग प्रतिस्पर्धा का भाव। प्रतिद्वन्दिता का नहीं। हो सकता है यह उसके स्वभाव में ही न हो। जो भी हो पर रहना उठना बैठना और आवाजाही करना उसका शब्दों के ही साथ था।

जिन दिनों वह 'अप्रस्तुत' के सपनों में खोया हुआ था उसके मन में कलकत्ता महानगर की सारी प्रतिभाओं को तार-सप्तक के संपादक अज्ञेय जैसी ऐतिहासिक प्रस्तुति देने की महत आकांक्षा भी थी। कुछेक

महत्त्वपूर्ण कवि जैसे चन्द्रमौलि उपाध्याय, छविनाथ मिश्र, सोमदत्त, श्रीहर्ष, शलभ श्रीरामसिंह इसकी योजना में शामिल भी रहे। मेरी अपनी निगाह में महानगर के लिए यह नवल का अपना बहुत बड़ा देय है।

संयोजन और सम्पादन कला उसमें खूब थी। पर एक कवि की वे बेचैनियाँ जो उसे कवि बनाए रखती है उसके प्रति वह क्यों बेपरवाह बना रहा, यह वही जाने।

याद आती है एक शाम हम तीनों चौरंगी के ही आस-पास सेन्ट्रल एवेन्यू के किसी रेस्टोरेंट में थे। जैसा कि आलोक शर्मा की आदत है, वे कम ही बोलते हैं। कॉफी आने ही वाली थी कि नवल ने पूछा– विजय तुम हमलोगों पर कब लिखोगे ? उसके इस सवाल से मैं नये सिरे से सावधान हो गया –

मैं कहाँ किस पर लिखता हूँ यार।

क्यों तुमने फलाँ-फलाँ पर नहीं लिखा है? सवाल था उसका।

'हाँ लिखा है, पर उनके अखाड़े में अपनी पहलवानी की जाँच करने के लिए' – मेरा उत्तर था।

'पर हम तुम्हारे दोस्त हैं।' उसने नये सिरे से घेरा।

'दोस्ती अलग चीज है/पर किसी पर लिखना बिल्कुल अलग/पहले वह ऐसा अखाड़ा तो तैयार करे।

(मेरा मतलब यह कहने का था रचना में इतनी चमक और गंभीरता हो कि आलोचक खुद उसके पास मजबूर होकर आए)।

इसके बाद वह चुप्पी लगा गया। फिर भी इंतजार करता रहा। मैं भी कि अब मेरा दोस्त कुछ और कोशिशें करेगा। पर वे न हुई तो न हुई।

दो हजार आठ में लगभग पैंतीस-अड़तीस सालों बाद भारतीय भाषा परिषद के साथ अपने अनुबंध के चलते दो सालों का स्थायी प्रवास करना पड़ा। गनीमत थी कि दो-एक मित्रों के अलावा कलकत्ता की पुरानी मित्र-मंडली थोड़ी थकी - थकाई फिर भी मन से हरी - भरी मिली। यह मेरे लिए एक अतिरिक्त सुख था। नवल भी भाषा परिषद की अपनी तयशुदा दूरियाँ नकार कर आने लगे। आलोक जी कुछ और भी नये मित्र बने – कुछेक जवान कुछ प्रौढ़। यह अनुभव कर विस्मय और आनंद का अनुभव हुआ कि मेरे स्कूल दिनों का सहपाठी कपिल आर्य कॉलेज दिनों का मेरा यार महेश गुप्ता और भाभी – सबके सब मिले। कृष्ण बिहारी जी तो सौभाग्य से अब भी सोच और बोल पा रहे हैं। शलभ तो शताब्दी के अंत तक रहा पर अपने गाँव मसोढा और अंतिम सांसें भी वहीं ली नवल भी बाल बच्चे वाला हो चुका था। बस साँस की तकलीफ उसे शुरू हो चुकी थी। मैंने वागर्थ में उसकी एक कविता भी छापी। वह थोड़ा-बहुत संतुष्ट तो हुआ पर पूरा तो फिर भी नहीं। हिन्दी मेला में वो मुझे सुनने पिछली बार यानी २०१८ में आया तो पर इस बार हम दोनों फोन पर ही मिल सके – लाचारियाँ दोनों तरफ थीं। इसलिए हमारी बूढ़ी होती साँसें जवान नहीं हो सकीं। गालिब याद जरूर आते रहे–

जो दूँढ़ता है फिर वही फुर्सत कि रात-दिन
बैठे रहें तसौव्वरे-जाना किये हुए

दुनिया इतनी सारी यादों से भर गई है कि ख़यालों की भीड़ में उतर पाने का हौसला भी गायब। पर यादें तो यादें हैं। वो दामन कहाँ छोड़ती हैं।

नवल हिन्दी का जीता-जागता मोहल्ला था। इसलिए उस मोहल्ले का सुख सब लूटना चाहते थे। उसके चले जाने के बाद अब वैसा मोहल्ला कहाँ बसा और बचा है, यह तो कलकत्ता के हिन्दी वाले ही जानें।

•

स्मृतिशेष : कवि नवल उर्फ जयप्रकाश खत्री

■ डॉ० शंभुनाथ प्रसाद

आज नवल जी हमारे बीच नहीं रहे। कोरोना के खौफनाक समय में नवल जी जैसा जिंदादिल रचनाकार, कवि, कला-सृजन का पारखी हृदयाघात के चलते इस संसार से अपना नाता त्याग दिया। अफसोस कि इस कोरोना महामारी की पाबंदियों के कारण उनके अंतिम पार्थिव दर्शन से भी उनके सगे-संबंधी, मित्र, शुभचिंतक दूर रहे। किसी भी सुंदर और संतुलित रचना यथा कविता, कहानी, निबंध आदि को देख कर नवल जी का मुस्कुराना और सिर हिला-हिला कर यह कहना कि वाह क्या बात है, बढ़िया है यार, ये सारी बातें मेरे जेहन को झकझोर गई। मेरी उनसे अंतिम मुलाकात जनवरी या फरवरी माह २०२० में भारतीय भाषा परिषद के एक साहित्यिक कार्यक्रम में हुई थी सामना होते ही चहकते हुये पूछा कि कैसे हो प्यारे ?

चूंकि मेरा विद्यार्थी जीवन कलकत्ता विश्वविद्यालय के अंतर्गत बीता। अत: मेरा सौभाग्य रहा है कि कलकत्ता महानगर के हिन्दी और बांग्ला के असंख्य विद्वानों, बुद्धिजीवियों, कवियों, विविध विधा के रचनाकारों से मिलने का सुअवसर मिला। १९७०-८०-९० के दौरान नवल जी ने एक सशक्त कवि के रूप में अपनी उपस्थिति के साथ साहित्य सृजन की मुहिम छेड़ी जिसमें महानगर के चर्चित कवियों का समूह भी था मसलन कवि श्रीराम सिंह शलभ, पंडित छविनाथ मिश्र, श्री हर्ष, नीलम श्रीवास्तव, मानिक बच्छावत, शंभू प्रसाद श्रीवास्तव, मृत्युंजय उपाध्याय, ध्रुव देव मिश्र पाषाण एवं अन्य असंख्य कवि, कथाकार, रंगकर्मी और लेखक भी इससे जुड़े हुए थे। मैं अपने जन्मस्थान गौरीपुर (नैहाटी) से १९७८ में कलकत्ता आया और कलकत्ता विश्वविद्यालय में ही शिक्षा पूरी कर पढ़ते-लिखते, विविध सरकारी संस्थानों में कार्य करते हुए यहीं रच बस गया परंतु मेरी साहित्यिक यात्रा में जो बीज-वपन मेरे गुरुदेव डॉ० सूर्यदेव शास्त्री ने किया था उसका सही रूप में प्रतिफलन हुआ सन १९९३ में जब मेरी अंतरंग मुलाकात नवल जी से हुई मेरी सहपाठिनी मित्र डॉक्टर इन्दु जोशी के सर हरिराम गोयनका स्ट्रीट (बाँसतल्ला) स्थित आवास पर जो उन दिनों नवाढ्य रचनाकारों, कवियों, लेखकों आदि के साहित्य चिंतन का एक ऊर्जा केंद्र था।

उपर्युक्त भूमिका के पार्श्व में नवल जी से मुलाकात की वही शाम जब पहली बार हम दोनों आमने-सामने रूबरू हुए थे उस दिन मैंने अनुभव किया कि नवल जी का व्यक्तित्व सरल, निष्कपट एवं हिन्दी साहित्य के प्रति समर्पित है। कालांतर में मैंने यह भी पाया कि उनसे मुलाकात होने पर चाहे वह उनका समवयसी हो या उनसे कम उम्र के लोग मिलते ही निष्कपट साहित्यिक चर्चा में तल्लीन हो जाते थे। फिर चर्चा के दौरान ही मुस्कुराते हुए पूछ बैठते कि आजकल क्या लिख - पढ़ रहे हो प्यारे, जैसा कि उस दिन भी मेरे साथ हुआ, बोले कि यार तुम पढ़ाकू तो हो कलम भी चलाओ। मैंने हँसते हुए कहा कि मैं क्या लिखूँ, क्यूँ लिखूँ बहुत सारे लेखक लिख रहे हैं, मैं तो पढ़ने में ही आनंद पाता हूँ। पर नवल जी बहुत संजिन्दगी से बोले– यार तुम एक ललित निबंध लिखो कि "मैं क्यूँ लिखूँ"। मुझे लगा कि नवल जी ने एक चुनौती दी है, मुझसे लिखवाने का उनका एक मात्र उद्देश्य था कि लेखन के प्रति मेरे मन में जो संकोच है, झिझक है, वह दूर हो। आज मुझे यह

कहने में कोई संकोच नहीं कि किसी आनंद का अनुभव इतना सुखद नहीं होता है जितना उसका स्मरण। सन् १९९४ में प्रतिध्वनि, कलकत्ता द्वारा डॉक्टर प्रतिभा अग्रवाल के सम्पादन में प्रकाशित 'कलकत्ता' साहित्य संकलन में बिना किसी एक शब्द के छेड़ छाड़के "मैं क्यूँ लिखूँ" ललित निबंध प्रकाशित हुआ था। मैं सोचता हूँ कि नवल जी के हृदय में एक रचनाकार की कसक हर क्षण कुछ नया रचने-रचवाने के लिए बेचैन रहती थी और उनकी यह जिजीविषा ताउम्र बनी रही। उन्होंने कलकत्ता के असंख्य लेखकों, रचनाकारों, कवियों, लेखिकाओं की रचनाओं को प्रकाशित एवं संपादित किया। नवल जी की मंचीय काव्य प्रस्तुति भी आकर्षक होती थी। यदि सच में देखा जाए तो नवल जी के रचनाकार का मिजाज फजल ताबिश के इस शेर से मिलता-जुलता है – "सिवाय प्यार के कोई हुनर नहीं सीखा/बहुत न सीखना हमको कमाल रास आया"। यदि हम गिलास को आधा खाली न मान कर आधा भरा हुआ मान कर चलें तो नवल जी की रचनाओं में आशा की किरणें दिखाई पड़ जाती है : हाँ, कविता लिखनी होगी/ अपने आपको/हो रहे युद्धों से जोड़ देने के लिए/ आनेवाली नस्ल का रास्ता साफ करने के लिए। मुझे आचार्य गुरुवर विष्णुकांत शास्त्री जी की पुस्तक की वह पंक्ति "स्मृति को पाथेय बनने दो" का स्मरण हो आया। नवल जी के साथ समय-समय पर बिताए गए क्षण की स्मृतियाँ मेरे मानस पटल पर पाथेय सदृश अंकित होती जा रही है जिसे व्यक्त करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। मैं कलकत्ता पुस्तक मेला में लगे प्रतिध्वनि के स्टॉल पर पहुंचा, उस दिन बांग्ला की तत्कालीन विवादित लेखिका तसलीमा नसरीन के साथ डॉक्टर कृष्णबिहारी मिश्र जी, श्री ध्रुवदेव मिश्र पाषाण और प्रभात पांडे जी के साथ समसामयिक कविता और सामाजिक स्थिति – बांग्ला एवं हिन्दी समाज और समय पर परिचर्चा चल रही थी। नवल जी ने मुझे देखते ही स्टॉल में बैठने की कमी की वजह से बाहर ही दो कुर्सी मँगवाई और बोले– शंभूनाथ प्रसाद जी आप तो बैंक में राजभाषा अधिकारी के पद पर हैं, मैं भी पंजाब नेशनल बैंक में हूँ और मेरे मित्र श्रीनिवास शर्मा भी। मेरे बंधु ने इस महानगर में जितना ओजस्वी लिखा है, मुझे दिखा सकते हैं कि जो लोग अकादमिक जगत से जुड़े हुए हैं वैसी बेबाक दृष्टि से लिख पढ़ रहे हैं। वे बोले यार एक वर्ष के बाद साठ पार करूँगा अब तो बागडोर तुमलोगों जैसे नवजवानों के हाथ में है, मैंने कहा– नवल जी साठ के बाद तो हिंदुस्तान के लोग असल में नवजवान होते हैं अभी तो आपको लंबी पारी खेलनी है। उन्होंने मंद-मंद मुस्कुराते हुए पूछा कि दादा अर्थात कवि छविनाथ मिश्र की कवितायें तुम्हें कैसी लगी। नवलजी के साथ-साथ हम सभी प्यार से सम्मान से वरिष्ठ कवि पंडित छविनाथ मिश्र को दादा संबोधित करते थे। नि:संदेह कवि छविनाथ मिश्र जी का काव्य फलक बहुआयामी एवं नवगीत परंपरा को व्यापक वितान प्रदान किए है तथा वैदिक ऋचाओं का हिन्दी काव्यान्तरण एक अद्भुत कृति है। नवल जी की प्रबल इच्छा थी कि दादा अर्थात पंडित छविनाथ मिश्र जी की रचनाओं पर एक समीक्षात्मक पुस्तक तैयार की जाए। नवल जी ने कहा कि शंभु यार तुम दादा पर कुछ ऐसा लिखो कि 'दादा' के कवि ऋण से आंशिक रूप में ही सही हम सभी मुक्त हो सकें जिसका सफल प्रतिफलन हुआ सन २००९-१० के दौरान नवल जी की हार्दिक प्रेरणा से मेरी पुस्तक "निराला, नागार्जुन और छविनाथ मिश्र-शैली वैज्ञानिक अध्ययन" प्रकाशित हुई।

यहाँ मैं नवल जी की कविताओं की चंद पंक्तियों को प्रस्तुत करना चाहूँगा जिससे स्वत: सिद्ध है कि उनकी कविता के प्रति, समाज के प्रति कितनी गहरी निष्ठा थी : अब कविता फिर से लिखनी है, अपने इर्द-गिर्द हो रही साजिशों के खिलाफ/और कर लेना है उन सबसे हिसाब/जो हम वतनों की लाशों पर गिद्ध गीत गाते/व्यूह रचते डोल रहे हैं/

अंत में कवि की प्रबल अभिलाषा है : मैं कुछ से/कुछ और होना चाहता हूँ/अपनी पहचान को/ नई रोशनी देना चाहता हूँ"।

नवलजी एक सजग रचनाकार थे, उनकी कथनी और करनी में साम्य था। उन्होंने कविता के संदर्भ में एक बेबाक अभिव्यक्ति की है– : जब लिखने के लिए/लिखी जाती है कविता/जब नाम या दाम के लिए/ रची जाती है कविता/ जब नारे या हथियार के लिए/ लिखी जाती है कविता/वह कविता नहीं/कविता का स्वांग भर होता है"।

आज वैश्विक एवं राष्ट्र व्यापी स्तर पर एक ही भाषा विचार रही है, सभी रंग मिल कर एक हो गए हैं, आज न दिशाएँ हैं न दिशासूचक, हम सभी न तो कहीं जा रहे हैं, न आ रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि सब कुछ ठहर सा गया है, ऐसा लगता है कि वक्त पर चोट का वक्त अब रीत चुका है। मेरे अग्रज नवलजी अब ए शब्द आपके लिए जिनके अर्थ भी आप से ही खिलेंगे। अब ए निरी ध्वनियाँ हैं प्रतिध्वनि में खुलेगी आज होने न होने के बीच इतना कम फासला कभी नहीं था। रहते हुए भी रहना जैसे निरर्थक सा लगता है.....अलविदा.....ॐ सद्गति।

•

नवल : हर एक का दुख बयां करनेवाला – एक संजीदा, सरल और ज़िंदादिल इंसान!

■ सुधा अरोड़ा

"कुछ भी
करने के लिए न हो
तो आदमी
ज़रूरत से ज़्यादा
थक जाता है...."

– नवल

ये कुछ एक शब्द बहुत कुछ कह जाते हैं! कवि नवल ने २२ अप्रैल को लिखी अपनी ये पंक्तियां अपनी वॉल पर साझा की और दो दिन बाद २४ अप्रैल को इस दुनिया को अलविदा कह दिया। वे हमेशा कर्मठ बने रहना चाहते थे और आखिरी समय तक उन्होंने अपने को वैसा बनाए रखा। बेहद सहज, सरल, संजीदा और ज़िंदादिल इंसान! जितना छोटा सा नाम, वैसे ही सादा और सरल व्यक्तित्व!

कवि नवल – चूंकि नाम के आगे-पीछे कुछ लगाते नहीं थे इसलिए उनका नम्बर अपने मोबाइल पर मैंने कोलकाता वाले नवल नाम से सेव कर रखा था। कोलकाता में रहते हुए भी लेखकों कलाकारों से ज्यादा मेल मुलाकात नहीं रही। १९७१ में कोलकाता छोड़ने के बाद साहित्यिक बिरादरी के भी बहुत कम लोग थे जिन्होंने संपर्क बनाए रखा! १९६५ से ७० के बीच नवल जी से रेडियो स्टेशन पर आकाशवाणी कोलकाता पर दो एक मुलाकातें हुई थी लेकिन कभी कोई संवाद नहीं बन पाया था।

कोलकाता में फुर्सत से उनसे तीन बार ही मिलना हुआ। छोटे भाई प्रशांत से उनकी दोस्ती थी जो उम्र में शायद उनसे पंद्रह सोलह साल छोटा होगा। जब मिलते तो "ओ सोणिओ" कहकर प्रशांत से बहुत उमंग कर मिलते। पहली बार तब मिले जब भाई प्रशांत के स्टूडियो 'छबिघर' का उद्घाटन २०१४ में हुआ था। कृष्ण बिहारी मिश्र जी मुख्य अतिथि थे। नवल जी भी आए थे और दोनों ने बहुत अच्छा वक्तव्य दिया! मुझसे उम्र में बड़े थे पर प्रशांत की देखा-देखी मुझे सुधा दीदी ही कहते! दूसरी बार उनसे मुलाकात हुई जब 'छबिघर' की अगली वर्षगांठ थी। जब-जब कोलकाता में उनसे मिलना हुआ, वह हमेशा पहले से तरोताज़ा दिखे। पहली बार नवल जी की कविताओं का उनके अपने स्वर में पाठ सुना। नवल भाई बेहतरीन वक्ता और वाचक थे। उनका पढ़ने का अंदाज निराला था। उनके पाठ से उनकी कविताओं और गजलों और दोहों का अर्थ कुछ ज्यादा खुलकर सामने आता था। उनकी एक ताज़ा कविता जो उन्होंने अप्रैल २०२० में ही लिखी, ध्यान खींचती है।

"धरती की परत दर परत
पहचान लेता है किसान
माटी की परत दर परत
सूँघ लेता है माली
चमड़े की परत दर परत
सहला लेता है मोची
काठ की परत दर परत
जान लेता है बढ़ई
वैसे ही पत्थर में
देख लेता है आकार कोई शिल्पी
रंगों से क्रिएट कर देता है
नया रंग चित्रकार
सुरों से सृष्टि कर देता है
एक नया सृजन संगीतकार

पर तुम कैसे रच लेते हो कविता,
हे कवि?
हर एक का दुख
बयाँ कर जाते हो
जो नहीं है, उसे बताते हो
और जो है, उसे समझा जाते हो!

सन् २०१७! शिशिर मंच में काजी नजरुल इस्लाम की १२५ वीं जयंती पर भाई प्रशांत की चित्र प्रदर्शनी थी! प्रदर्शनी रात देर तक चल रही थी। मैं और नवल भाई बाहर निकल आए। नवल जी ने बताया कि बहुत मुश्किल से समय निकालकर आ पाए हैं, उनकी पत्नी बीमार है और उनके लिए घर जल्दी लौटना बहुत जरूरी है। विदा लेते हुए बड़े संकोच के साथ बोले – सुधा दीदी, मैं तुम्हारे लिए एक तोहफा लाया हूं और उन्होंने मेरे हाथ में लिफाफे में रखी हुई एक किताब सी चीज थमा दी। मैंने पूछा – कोई खास किताब? तो कहने लगे – तुम्हारी पहली कहानी है। मैं तो तब तक ज्ञानोदय में प्रकाशित "मरी हुई चीज" को ही अपनी पहली कहानी गिनती थी जो सितंबर १९६५ में प्रकाशित हुई थी, पर नवल जी ने मेरे हाथ में आधी सदी से ज़्यादा पुरानी एक लघु पत्रिका पकड़ाई।

रूपांबरा – यह कलकत्ता से साठ के दशक में स्वदेश भारती द्वारा संपादित पत्रिका थी जिसके अगस्त १९६५ अंक में मेरी कहानी थी – टाइल्स! किसी अखबार में नवल भाई का एक साप्ताहिक स्तंभ छपता था जिसमें वह किसी न किसी लेखक कलाकार के बारे में लिखते रहते थे। मुझ पर भी कोई टिप्पणी लिखी थी और अपनी किताबों के खजाने में उन्हें यह नायाब पत्रिका मिली! इससे बढ़िया उपहार क्या हो सकता था भला!

आज जब मेरी संपूर्ण कहानियों की किताब छप रही है, यह दस्तावेजी कहानी नवल भाई का ऐसा उपहार है, जिसे मैं कभी भूला नहीं पाउंगी! कहानी के वे जीर्ण-शीर्ण, पीले पड़ गए जर्जर पन्ने हमेशा उनकी याद दिलाएंगे।

नवल भाई की एक और खासियत थी – मुझसे और भाई प्रशांत से पंजाबी भाषा में संवाद करना। मेरी जानकारी में हिन्दी भाषा के बहुत कम ऐसे पंजाबी लेखक हैं जो पंजाबी में बात करते हैं। पंजाबी होते हुए भी हम भाई-बहन मम्मी पापा और रिश्तेदारों को छोड़कर, आपस में हमेशा हिंदी में बात करते हैं। पंजाबी में बात करने की आदत लगभग छूट चली है! सिर्फ नवल भाई थे जो प्रशांत से और मुझसे धड़ल्ले से पंजाबी में बात करते थे। पंजाबी में बोलते हुए मैं थोड़ा अटपटा जाती। उन्हें मैंने बताया कि मुंबई में रहते-रहते पंजाबी बोलने की आदत छूट गई है, लेकिन मुंबई में रहकर भी बांग्ला में बात करना नहीं छूटा। वो कैसे? उनके पूछने पर मैंने बताया कि मुंबई के पवई इलाके में मेरी बहुत सी बंगाली मित्र हैं। "और यहां जो पंजाबी मित्र हैं, उनसे तुम मिलती-जुलती नहीं" और उन्होंने मातृभाषा न बोलने पर मुझे लगभग लताड़ दिया। वे शानदार पंजाबी बोलते – ऐसी कि अपनी मातृभाषा पंजाबी पर गर्व होने लगता!

नवल भाई – दिखने में अति सुदर्शन व्यक्तित्व! भाई प्रशांत ने जब उनके जाने की खबर दी तो विश्वास नहीं हुआ। अगले दिन बताया कि उनके परिवार वाले उनकी एक फ्रेम की हुई तस्वीर चाहते हैं तो उसने मुझे तीन तस्वीरें दिखाई कि इनमें से कौन-सी करके दूं? तीनों इतनी खूबसूरत बोलती हुई तस्वीरें थी कि मैंने उससे कहा तीनों ही दे दो! जो उन्हें ठीक लगेगी, रख लेंगे! एक तस्वीर के नीचे उन्हीं की यह कविता लिखी थी।

"तुम मेरी जमीन को सींचते रहना
शायद उग आए उस पर कभी पेड़
कुछ न कुछ करते रहना
लेकिन हाथ पर हाथ धरे मत बैठना!"

नवल भाई के जाने के बाद उनकी फेसबुर वॉल पर १८ अप्रैल २०२० को उनकी एक संदेश देती कविता पढ़ी जो उन्होंने लॉकडाउन के दौरान लिखी होगी। कविता पढ़कर लगा – कवि अपने समय से कितना जुड़ा होता है! बदलाव के लिए उम्मीद से भरा! शायद यह उम्मीद ही उसे जीने का हौसला देती है।

अब जब सूर्योदय होगा
अब जब सूर्योदय होगा
तो वह नहीं लाएगा केवल सुप्रभात
लाएगा एक ऐसा युग, साथ-साथ
जिसमें मनुष्य जाति
एक साथ करेगी प्रार्थना
धरती के शस्य-श्यामला बने रहने की!

देशों में एक-दूसरे के प्रति
वैमनस्य नहीं होगा
होगी सद्भावना

जिससे वे समझ सकेंगे
सह-अस्तित्व की बात बेहतर तरीके से!

आपदाएँ जब आती हैं
तो आती हैं
हो चुके असंतुलन को ठीक करने के लिए!

बाढ़ जब आती है
तो तहस-नहस करने के बाद
उर्वरा भी तो बना देती है धरती को!

जैसे विषाद का दूसरा पक्ष होता है आनन्द
और मनोमालिन्य का सद्भाव!

यही प्रकृति है विविधवर्णा
तुम्हारी तरह, प्रियम्वदा!

नवल भाई, आपका कहा सही है! हम सब अवसाद से ही गुज़र रहे हैं। देश की दुर्दशा से भी और प्रकृति के प्रकोप से भी। विषाद के बाद आनंद आए। धरती उर्वरा बनी रहे। नमन आपकी स्मृति को!

•

नवल की याद में : क्या भूलूँ क्या याद करूँ

■ सिद्धेश

जिन्दगी का एक पड़ाव ऐसा आता है, जब मनुष्य निष्कंप, निश्चेष्ट और निर्ण्याज हो जाता है। चाहकर भी अपने जीते रहने का ऋण चुका नहीं पाता है एवम् दुनिया को अकेला, निस्तब्ध छोड़ चला जाता है।

प्रकृति भी मनुष्य का साथ तभी तक देती है, जब तक वह प्रकृति का साथ देता है। मुझे याद है, शान्तिनिकेतन में एक साथ रहते हुए नवल ने अपनी एक लम्बी कविता 'आनन्दधारा' लिखी थी जिसको उसने साहित्यिक पत्रिका (अपनी) 'साहित्य बुलेटिन' में प्रकाशित किया। बाद में वही सबरंग के पृष्ठ पर भी छपी। मैं अपने कुछ मित्रों के साथ कविगुरु रविन्द्रनाथ के तिरोधान दिवस 'बाइसे श्रावण' के आयोजन में शामिल होने के लिए कई सालों से निरन्तर जाता था। एक-दो बार नवल भी मेरे साथ गए। हमारे साथ बांग्ला के युवा-कवि सुजान बैनर्जी तो रहते ही थे। अन्तिम बार अनुवादक एवं भूखी पीढ़ी के अन्यतम सदस्य सुविमल बसाक भी शामिल थे।

एक बार इसी तरह देवघर (जसीडीह) में स्थित 'आरोग्य निकेतन' में दो चार दिन नवल के साथ समय बिताने का मौका मिला। यहाँ के मैनेजर थे तब हमारे मित्र व कथाकार राहीशंकर जी। उनके आमन्त्रित कई मित्र थे। सुजल भी हमारे साथ थे। नवल ने उनका नाम 'आनन्दमोहन' रख दिया। शान्तिनिकेतन के प्रसंग हेतु ही मैंने देवघर का उल्लेख किया है। अब पुन: शान्तिनिकेतन की ही चर्चा करुँगा। दूसरी बार शान्तिनिकेतन की यात्रा में नवल के साथ विलासपुर से कथाकार सतीश जायसवाल भी हमारे संग थे। ट्रेन के डिब्बे में बैठे नवल उनके साथ चुहलबाजी करते रहे, हँसते-हँसाते रहे। यह उनकी आदत थी कि कभी माहौल को बोझिल नहीं होने देते थे।

आम्रकुंज से गुजरते हुए नवल 'हिन्दी भवन' की तरफ चले गए। वहाँ पहुँचकर हिन्दी के अध्यक्ष और प्रशासक से मिलकर एक गोष्ठी का आयोजन किया। भाषाओं पर बातचीत होने के बाद कहानी पाठ और कविता पाठ का दौर चला। नवल से भी कविता पढ़ने के लिए कहा गया। पहले तो ना - नुकर करते रहे और कहा– किताब लेकर नहीं आए हैं। फिर धीरे से झोले से किताब निकालने लगे तो लोगों को आश्चर्य हुआ क्योंकि उनको अपनी कविता याद रहती थी। शायद वे नर्वस थे। झोले से किताब निकालकर पन्ने पलटते हुए उनका हाथ कांप रहा था। वे अक्सर कहते भी थे कि लोगों के सामने पढ़ते हुए उनको दिक्कत होती है। माइक के सामने आते ही उनका पर्चा हाथ से फिसलने लगता था इसीलिए अधिकतर कविताएं कंठस्थ करके आते। एक कवि की विशेषता भी है कि उसे अपनी कविता हमेशा याद रहती है या याद होनी चाहिए। जो भी हो नवल का कविता-पाठ बेहद आकर्षक ढंग से होता। एक प्रभाव छोड़ती थी उनकी कविताएं।

यहाँ एक बात कह दूँ बांग्ला में 'कविता - आवृत्ति' की परम्परा है हिन्दी में नहीं है। नवल के कविता पाठ में एक 'थ्रो' मिलता है।

नवल 'फेस-बुक' पर कविताएं लिखने लगे थे। इससे असंख्य कविता के पाठक भी उन्हें मिले।

नवल हमारे हम-दम ही नहीं थे बल्कि हितैषी भी थे। मेरे पिताजी की मृत्यु २ जनवरी, वर्ष १९७९ में हुई। तब मैं मध्यमग्राम अंचल में रहता था। जब उनको यह खबर मिली तो खुद ही चले आए। साथ थे कृष्णबिहारी मिश्र और मदन मोहन अग्रवाल। कदाचित् नवल के कहने पर ही ये इकट्ठे आए। अन्यथा इतनी दूर से कौन किसी के लिए आता है। यह मेरे लिए अप्रत्याशित था। तभी से सम्पर्क का सिलसिला मात्र दोस्ताना ही नहीं पारिवारिक भी हुआ। यहाँ तक कि जब मैं AMRI (आम्री) अस्पताल में ऑपरेशन टेबल पर लाया गया था नवल भी अन्य मित्रों के साथ ऑपरेशन थियेटर (OT) से निकलने तक वहीं व्यग्रता से प्रतीक्षारत थे। पाँच-छः घंटे का लम्बा समय गुजर चुका था। यह ऋण कभी भी चुकाया नहीं जा सकता। अब वे अनायास चले गए तब इतना मौका भी नहीं दिया कि हम सब उनकी अंतिम यात्रा में शामिल हो सकें।

मैं उनके घर पर एक बार ही गया था। यह भी एक दुखद सदमा ही था। उनके पिताजी का शव बाहर रखा हुआ था। मेरे संग श्रीनिवास शर्मा भी थे। हमदोनों अंतिम यात्रा तक शामिल रहे। मेरे गुरुवर आचार्य कल्याणमल लोढ़ा जी इस यात्रा के साक्षी थे।

नवल के घर के अंदर जाने का कभी मौका नहीं मिला। इस बार भी नहीं। जब भी मिलने की इच्छा होती तो इतनी दूर आना संभव नहीं था। जब भी मिलने की इच्छा होती नजदीक में एक मद्रासी कॉफी-हाउस था जो कपिल आर्य के मकान के नजदीक पड़ता है। यह शरतचन्द्र चटर्जी एवेन्यू और देशप्रिय पार्क के निकट है। वहीं अक्सर ही हम मिल लेते। यह कॉफी-हाउस नवल के घर के भी नजदीक पड़ता है। निर्भय देव्यांश के 'लहक' का कार्यालय भी वहीं था।

चित्तरंजन एवेन्यू पर स्थित इंडियन कॉफी-हाउस में भी नवल का आना-जाना था क्योंकि बैंक-कार्यालय बिल्कुल बगल में ही था। उनका कार्यालय जब वहां से हटकर गणेश चन्द्र एवेन्यू वाले बैंक में आ गया तब वे प्रिन्सेप स्ट्रीट के नुक्कड़ पर मिलने लगे। साहित्यकार मित्र वहीं आने लगे जिसमें हर्षनाथ, कपिल आर्य, पंचदेव, पाषाण, अक्षय उपाध्याय, नगेन्द्र, परशुराम कभी आ जाते। वहाँ मद्रासी कॉफी-हाउस था। नए लोगों में हृदयेश पाण्डेय, कुशेश्वर भी होते। नवल और आलोक शर्मा में खूब जमती थी। यानी लोगों के 'बीच का आदमी' नवल ही थे, जो सबको जोड़ते या कहूँ जोड़े हुए थे। आज जब वह हमारे बीच नहीं है तो ऐसा महसूस होता है– कलकत्ता महानगर के साहित्यिक क्षेत्र में एक लम्बा सन्नाटा खिंच गया है। जहाँ साहित्यकार इकट्ठे होते, साहित्यिक चर्चाएँ करते उस जगह को नाम दिया गया 'बुलबुल सराय' नवल ने जब 'साहित्य-बुलेटिन' निकालना शुरू किया तब उसने मुझसे 'धारावाहिक' लिखने का आग्रह किया। मैंने कई अंकों तक 'कलकत्ते का साहित्यिक श्वेत पत्र' लिखा।

नवल से मेरी पहली मुलाकात कब, कैसे हुई, यह मुझे याद नहीं। जब जुड़ा तब हुआ यह कि सप्ताहान्त तक बात नहीं होती तो अस्थिरता बनी रहती। इस बीच नवल को एक लम्बा पत्र लिख डाला, पता भी नहीं वह मिला या नहीं। मन में आशंका थी गनीमत है कि वह सही जगह पहुंच गया और इस पत्र को लेकर लम्बी बातचीत भी हुई थी। इसके बाद कई दिन गुजर गए। हठात् पता चला कि नवल नहीं रहे। क्या इसीकी प्रतीक्षा थी ?

एक कविता उन्हें समर्पित है–

मेरे अजीज दोस्त

मृदुल हवा की तरह आये
खुशबू बिखेर आँधी की तरह
निकल गये
अगले वसन्त आने तक
प्रतीक्षा की होती।
उम्र की अंतिम दहलीज तक पहुंचकर
क्या पता था, बारिश की फुहार की
तरह
बरस जाओगे अभी ही
बर्फ की शिला गलने तक
प्रतीक्षा की होती।
मिट्टी में रोपा था बीज
खुशबू फैली थी अभी-अभी
बिखेर रही थी डालियां
पौधों पर पत्रों की सुर्खई आभा
हरे-भरे होने तक
रुके होते।
निकल गये सफर पर
ऐसे सफर की तलाश कब से थी?

•

नवल यादों के आईने में

■ श्रीनिवास शर्मा

२४ अप्रैल २०२० की वह मनहूस शाम। मैं अपने घर की ऊपर की मंजिल पर बैठा अपनी भानजी रोशनी से कुछ बातें कर रहा था। तभी इन्दु जोशी का फोन आया– 'नवल जी चले गए।' मैं स्तब्ध, अवाक् 'अचानक यह कैसे हो गया' बीते कल ही तो नवल से बात हुई, सब कुछ सामान्य, कहीं कोई शिकायत नहीं और अभी-अभी यह फोन।

हमदोनों पंजाब नेशनल बैंक के अधिकारी थे। मित्रों में सबसे अधिक घनिष्ठता नवल से ही थी। प्रतिदिन शाम को चौरंगी के कॉफी-हाउस में भेंट होती थी। शनिवार के दिन साहित्यकारों का जमावड़ा होता। रात ९-१० बजे तक गप-शप होती। देर रात बीते ही घर लौटना होता।

नवल की मित्र-मंडली काफी बड़ी थी। वह बहुत मिलनसार था। लोगों को मित्र बनाने की कला में उसे महारत हासिल थी वैसे तो मित्रों की संख्या कम न थी परन्तु कृष्णबिहारी मिश्र, शंकर माहेश्वरी, सिद्धेश, आलोक शर्मा, रेवतीलाल शाह से उसकी खूब पटती थी। नवल प्रतिभा अग्रवाल को माँ और उनके पति मदनबाबू को पिता के रूप में देखता था यानी अभिभावक के रूप में देखते थे।

सचमुच संस्मरण लिखना कठिन है। ऐसा व्यक्ति जो कई स्तरों पर आपके साथ रहता आया हो, जिसने जीवन के बहुत से उतार-चढ़ाव देखे हों, उसके बारे में लिखना चुनौतियों भरा है। कवि नवल के साथ मेरा रिश्ता कुछ ऐसा ही था।

हमदोनों सहकर्मी तो थे ही, साहित्यिक स्तर पर भी घनिष्ठता थी। नवल प्रकृत कवि थे। वैसे उसने संस्मरण भी कलकत्ता के साहित्यकारों पर बहुत ही अच्छे लिखे हैं। निधन के कुछ पूर्व वे 'सन्मार्ग' दैनिक में बहुत अच्छे संस्मरण लिख भी रहे थे।

ऐसा कोई दिन न गुजरता जब नवल से व्यक्तिगत जीवन को लेकर अन्य विषयों पर बात नहीं होती थी। मेरे सामने जब भी कोई समस्या उत्पन्न होती, मैं नवल ही से परामर्श करता था। नवल के सुझाव ठोस और व्यावहारिक होते थे मैं बेहिचक कह सकता हूँ कि कई मामलों में नवल के परामर्शों का कायल रहा हूँ। सलाह और परामर्श का सिलसिला चलता ही रहता था। समय-समय पर मैं भी नवल को परामर्श देता था और वह उसे स्वीकार करते थे। इस प्रकार मेरे और नवल के बीच का रिश्ता बेहद आत्मीय तथा बहुस्तरीय था।

मैंने आगे भी कहा है कि नवल के मित्रों का दायरा बहुत विस्तृत रहा है। कुछ साहित्यिक मित्रों के अलावा प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा, प्रोफेसर विष्णुकान्त शास्त्री, प्रभात पांडेय और डॉ० इन्दु जोशी के साथ अधिक निकटता थी। नवल अपने स्वभाव और आत्मीय व्यवहार के लिए मित्रों में विख्यात थे। कवि हर्ष नवल को 'इन्सानजी' कहते थे। यद्यपि उनके इस कथन में व्यंग्य का पुट होता था।

नवल ने कलकत्ता महानगर के बहुत से लेखकों की अप्रकाशित कृतियों को प्रकाशित कर उन्हें उपकृत किया है परन्तु इसका श्रेय कभी नहीं लेना चाहते थे।

नवल कहाँ और कैसे किताबें छापने हेतु रुपए पैसे का प्रबंध करता था, यह मेरी समझ के बाहर है। एक बार उसने ग्यारह पुस्तकों का एक साथ प्रकाशन किया था। तब भारतीय भाषा परिषद् में पुस्तकों का एक भव्य लोकार्पण-समारोह भी हुआ था।

अपनी पुस्तकों के प्रकाशन के लिए व्यक्तिगत रूप से मैं नवल का अत्यन्त आभारी हूँ। मेरी पहली कृति 'हिन्दी साहित्य : समकालीन परिदृश्य' और 'अप्रस्तुत के कवि और समकालीन कविता' को प्रकाशित करने का श्रेय नवल को ही है।

नवल ने 'अप्रस्तुत' शीर्षक से समकालीन कविता पर केन्द्रित कई खंडों में एक विशेषांक भी निकाला था। इसमें कुल इक्कीस कवि शामिल थे। यह विशेषांक चर्चित भी हुआ। शलभ श्रीराम सिंह चाहते थे कि इस विशेषांक को 'युयुत्सा विशेषांक' घोषित किया जाए। उनदिनों शलभ पर युयुत्सावाद का भूत सवार था। नवल ने मना कर दिया। शलभ नाराज हो गए। शलभ की ध्वंसात्मक भूमिका थी। बाद में मैंने 'अप्रस्तुत के कवि और समकालीन कविता' शीर्षक से एक पुस्तक भी लिखी। किसी काव्य-संकलन में इक्कीस कवियों का शामिल होना साधारण बात नहीं है।

'प्रतिध्वनि' नाम से एक संस्था बनी थी। जिसके कर्त्ता-धर्त्ता नवल थे। कलकत्ता पुस्तक मेले में 'प्रतिध्वनि' का एक अलग मंडप होता था। हिन्दी के लेखक बड़ी संख्या में एकत्रित होते। विभिन्न विषयों पर गोष्ठियों का आयोजन होता। कलकत्ता पुस्तक मेला अंतर्राष्ट्रीय स्तर का होता है। १०-१२ दिनों तक बड़ी चहल-पहल इस मेले का विशिष्ट महत्व है।

नवल सचेत कवि तो थे ही बहुत मिलनसार और उदार भी थे। उनके मन में किसी के प्रति ईर्ष्या-द्वेष नहीं था। अपने व्यवहार से लोगों को अपना बना लेने की कला में उन्हें महारत हासिल थी। प्रतिध्वनि के द्वारा पुस्तक मेले में भी लगातार विभिन्न कार्यक्रम आयोजित होते एवं चर्चा के विषय भी रहते। नवल को अद्‌भुत कौशल हासिल था हर रोज श्रेष्ठ साहित्यकारों को आमंत्रित करना। नए से नए विषयों पर चर्चा करवाना, रिकॉर्ड करना। इन दस-बारह दिन में कभी उसको क्लांत पाना नामुमकिन। हर रोज जोश, उत्साह से भरे मिलते।

नवल निस्पृह व्यक्ति थे। प्रशंसा से दूर रहते थे। मंच पर आसीन होना, भीड़ में शामिल होना, नवल की प्रकृति के विरुद्ध था। नवल के बारे में मैं इतना निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि नवल जैसा निस्पृह व्यक्ति आज के समय में मुश्किल से मिलेगा।

•

एक व्यक्ति है नवल

■ हर्षनाथ

एक व्यक्ति है नवल जिसने मुझे चेताया – दादा आप कलकत्ते का अपना साहित्यिक संस्मरण लिख डालिए। मैं छापूँगा। आप से आरंभ करके वरिष्ठ साहित्यकारों के संस्मरण प्रकाशित करना प्रारंभ करूँगा।

मैंने बहुत समझाया – कुछ भी उल्लेखनीय नहीं है। एक अदना आदमी के संस्मरण से क्या मिलेगा।

लेकिन नवल बैताल कथा वाले राजा विक्रम की तरह हठी है। जो चीज नवल के मन में धँस गई वह जरूर पूरी होगी। इसी के तहत उसने नीरमंच अपूर्वा महिलाओं से संबंधित मासिक पत्रिका का प्रकाशन बड़े कलात्मक ढंग से किया जिसका सम्पादन डॉ. इन्दु जोशी ने किया। वह पत्रिका साहित्यिक पत्रिकाओं में एक यादगार की तरह अपनी पहचान बनाये हैं। पर्दे के पीछे रहकर नवल ने इतना साहित्यिक काम किया है, जो उसे खुद मालूम नहीं।

नवल की जो सबसे बड़ी खासियत है, ईर्ष्या द्वेष रहित प्रवृत्ति। इसीके तहत उसने कलकत्ते में करीब कई दर्जन पुस्तकें प्रकाशित अकेले अपने बलबूते पर की। जिनमें कई काव्य ग्रंथ छविनाथ मिश्र जैसे सम्मान्य कवि की रचनाएँ और प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा के निबंधों का संग्रह है। किसी दूसरों के लिए कोई इतना श्रम निष्काम भाव से कैसे कर लेता है यह मेरे लिए एक पहेली है। इन सारे कामों में वह पर्दे के पीछे रहा, खुद श्रेय नहीं लिया। कहाँ से इतनी ऊर्जा, अखण्ड लगन आती है उसमें। इन सारे आयोजनों में उसने दो प्रेस मालिकों – सुराना प्रिंटिंग वर्क्स के भागचंद सुराणा और एस्केज के शिवकुमार नोपानी जगत के प्रसिद्ध चाचा को साहित्य से जोड़ दिया।

पिछले चार वर्षों में नवल साहित्यिक संस्मरण लिख देने के लिए बार-बार मुझे धमकाता-पुचकारता रहा। मेरा वही जवाब था–क्या होगा इनसे?

अभी इसी साल मई में मेरी रास्ते में भेंट हुई। नवल ने मुझे अल्टीमेटम दिया– चार साल आपने टाल दिए। अब चार माह का समय आपको देता हूँ। आपके संस्मरणों की पांडुलिपि इस दरम्यान मुझे मिल जानी चाहिए। आपके इसी टालते जाने से मुझे अपना क्रम तोड़ना पड़ा। ठाकौर साहब और छविनाथ जी की पुस्तकें पहले आ चुकी हैं। अब चार महीने से एक भी क्षण ज्यादा नहीं दूँगा आपको।

इसी सीमा से मैं अब की बार आतंकित हो गया। मुझमें जगन्नाथ दास रत्नाकर की क्षमता भी नहीं कि गंगावतरण लिखने के लिए अयोध्या की रानी साहिबा का आग्रह मानकर सरस्वती का स्मरण कर गति हासिल कर लेती।

सुमिरत सारद हुलसि हँसि-हंस चढ़ी
विधि सौं कहति पुनि सोई धुनि ध्याऊँ मैं।
ताल-तुक हीन, अंग-भंग छवि-छीन भई,
कविता विचारी ताहि रुचि-रस प्याऊँ मैं।

नंददास-देव, घनआनंद-बिहारी समु
सुकवि बनावन की तुम्हें सुधि ध्याऊँ मैं।
सुनि 'रत्नाकर' की रचना रसीली नैकु।
ढीली परी वीनहि मुरीली करि ल्याऊँ मैं।

मैंने भी नवल के अल्टीमेटम का ध्यान रखकर कलम उठा ली। मेरी साहित्यिक स्मृति में जिन्हें दिल भरकर कोसने की इच्छा है, जिनसे मैं जितना परेशान हुआ, उतना अपने दोनों लड़कों से भी नहीं हुआ। इनमें एक है विश्रान्त वशिष्ठ और दूसरे नवल। नवल के अल्टीमेटम से मैंने साहस बटोरा और चार महीने पूरे होन में अभी आधा महीना बाकी है, यह लिख डाला और उसकी प्रिय शिष्या डॉ. इन्दु जोशी को फोन पर मैंने सूचना दे दी कि नवल का फोन आये तो सूचना दे देना– दादा ने अपना वचन पूरा कर दिया।

पंजाब नेशलन बैंक के ब्रेबोर्न रोड ऑफिस के तीसरे तल्ले के चैम्बर में नवल बैठने लगा तो एक दिन वहाँ पहुँचकर मैंने कहा– इतने ऊँचे बैठ गये। मेरे जैसा उम्रदराज यहाँ कैसे पहुँचेगा।

नवल ने अपनी सहज स्वाभाविक मुस्कराहट के साथ कहा– दादा, आप अभी वृद्ध कहाँ हुए!

(कलकत्ता का साहित्यिक माहौल : मेरी स्मृति के दायरे में) से साभार उद्धृत।

•

A Letter for Star Always Shining

■ **Pushp Raj Singhvi**

Dear Induji, good afternoon. First of all I owe you an apology for this delay in writing my memoris on dearest Nawalji. Reasons are many primarily OPEN HEART SURGERY on Meenakshi followed by an attack of Corona virus on Chintan, my son just to name a few.

Coming back to Nawalji. I have almost lost touch with Hindi hence I am sending in English with a request to you to kindly translate in Hindi. Not that I will be able to write something great in English but atleast I can make an attempt. I owe my introduction to Navwalji to Shri Aloke Sharma. It happened sometime in early 1970s when I was working with Hoechst Dyes and Chemicals Ltd in their Plastics Division for Sales and Marketing of their newly introduced High Density Polyethylene for the first time in India. Incidentally Alokeji was in the field of Plastics processing and always in pursuit of doing something new and innovative. His company's name was Hindustan Plastics if I remember correctly and he had one gentleman byname Kapoor working with him. Although he used to meet me in my office but was always keen on meeting me for a longer time. During the course of conversation he realised that I live in Lake Gardens and he wanted to meet me beyond office hours and realised that Nawalji was also living in Lake Gardens and could be a good source. I am sure Alokeji must have broached the topic with Nawalji and sure enough on one Sunday Nawalji could find out my whereabouts and just paid a visit where I was living with my elder brother Shri Govind Raj Singhvi who by qualification was M.A. in English literature. A well read person with a lot of interest in literature.

While talking with Nawalji in a very informal manner he realised that I and my elder brother were not typical executives in Private Sector firms but had a lot of interest in art and literature. Well, this was enough for a person of insight and caliber of Nawalji to identify us as one amongst them. He talked about his interest in Poetry, Literature and about group of his intimate friends in the field of literature in and around Calcutta at that time. Here starts our introduction to his close friends like Chhabinathji Mishra, Shankar Maheshwari, Siddesh, Pratibhaji, Man Mohanji, Man Mohan Thakor and Aloke Sharma. Here he talked about **SAMVAD HEEN NATAK** by Shri Aloke Sharma. For us it was something very unique and unheard of. This was the beginning of our intimate association with Nawalji and members of his family like his revered mother whom we all started calling Chaijee, his loving

wife Urmilaji and his dear father, his younger brother Ravi and his two sons Pappuji and Gappuji. I got drawn to his friends in Coffee House on almost all Saturdays and in between any time convenient for us. Here I was formally introduced to Aloke Sharma the writer of the unique book **"SAMAVADHEEN NATAK"**. During the course of fascinating discussions on his power of writing this unique piece we were pleasantly introduced to all his friends. Both Shankar Maheshwari and Aloke Sharma had gift of singing Mahadevi Verma's famous **"DEEPO MERE JALKAMPIT"**.

Well, with a bit of talks on Plastics with Alokeji our association became exclusive on literature. Here I could see and feel the real character of Nawalji with his creation of Poetry which was just exclusive in its contents and at the same time very contemporary. He then introduced me to his another friend Shri Kulbhushan Kharbanda, the stage artist and a budding name in film industry. At that time National Emergency was imposed and he had come to Calcutta with his play **"MAHARANA PRATAP"** which had a lot of content which did not meet the eyes of the establishment. While the play was being staged we were told that it has been noticed by the establishment and all the artists were huddled and packed off.

Here I could hear the best of Nawalji's creation in his different manner of reciting those. While my wife Meenakshi also got drawn to his mesmerging poetry she became a focal point for organising MEHFIL at our home which over a period of time became an abode to all his friends. During this period my company allotted me a flat in central Calcutta "Middleton Street" which became a very convenient place for such informal and intellectual gatherings.

During this period I took the opportunity of introducing my dear friend Shri Ashok Mohnot and his poetess wife Shobha Mohnot who by her own right was a great poetess herself. Nawalji not only encouraged her but took her in his wings along with many more house wives who were also trying their minds in writing something. He inspired all these women to compile their thoughts and got these published. He had a unique calibre encouraging these women and many more men to get flocked under his wings and made these persons very imminent writers.

I have with me almost all his published books and keep these as treasure which I make a point to reach to my friends and relations. They are all enamoured by his sheer toughts and clarity of vision on the contemporary compositions.

In spite of my transfer to Baroda in 1980 for over 6 years I kept my contacts with him and he on his part kept me enriched with his creations. I was fortunate to have been transferred back to Calcutta in 1986 for almost three years. This period proved to be boon for me as he continued to be generous to us with all his friends in the art and literary circles. This was the most fascinating period of my association with him. During this period I took his help in promoting a Ghazal Singer from Baroda by name Miss Rinku Banerjee. He helped me in organising a lot of programmes by her and also introduced her to Calcutta Door Darshan in their

Hindi programmes. Miss Banerjee became an instant hit not only amongst viewers of Hindi programme but also she became quite popular amongst Bengali audience also. During this period he also helped my another friend Mr. Salil Shankar who was a disciple of Pandit Ravi Shankarji provided a platform to him for a performance in one of the leading places in Calcutta. Our friend Shri Ratan Lal Shah rendered a great helping hand in making this programme a great success. Mr. Salil Shankar became a big hit and now he is carrying on with his Sitar in Switzerland.

I was again transferred to Mumbai in 1989 and then to Baroda in 1994. Fortunately my contacts with him continued and there was never any occasion when I visited Kolkata and did not either meet him or at least talked to him. During these visits my dear friend Ashok Mohnot's home with his wife Mrs. Shobha Mohnot's home was a common place where we would meet and listen to him with his latest creations along with other promising poets. During this time Shri Ratanlalji Shah his talented younger brother Pramod Shah would also join.

When Induji told me about the publication of his memorious with help and support from Pratibhaji I have tried to pen down a few of his memories.

When I learnt from Shobhaji about his heavenly abode I was shocked as I had just talked to him a week before and he promised to come to Mumbai to meet with us and his friend Shri Kul Bhushan Kharbanda. I really did not realise fate had written something different. When I shared this information with my wife Meenakshi, my daughter in Canada and my son Chintan they did not believe. All of them were so fond of him. There was never any occasion when he did not enquire about all of them.

We have indeed lost a jewel amongst us. He was like a star always shining. A person with great integrity and honesty. Many times quite a few of my friends tried to assist him financially but it was next to impossible. He remained an epitome of honesty and truthfulness. Perhaps his stay in Kolkata did not provide him with the opportunity of being famous on All India Basis. I am sure with this publication through the efforts of Induji and Pratibhaji he will get recognition he so richly deserved.

•

शब्द, शब्द को रच कर देता अर्थ नया सा

रचनाकार का सत्य

■ डॉ. इन्दु जोशी

विश्व प्रसिद्ध सर्जक रोम्यां रोलां ने उपनिषदों के साक्ष्य-आधार पर सृजन की व्याख्या दी है :- "हर जगह आनन्द का एक ही माध्यम है, सृजन। सृजन के सम्मुख अन्य सभी सुख छाया के समान हैं। वह सृजन चाहे शरीर के प्रसंग में हो, चाहे आत्मा के प्रसंग में, सृजन हमें इस शरीर की कैद से मुक्त करता है और जीवन की तूफानी लहरों में धकेल कर हमें देवता बनाता है क्योंकि सर्जक एक ऐसा शिल्पी है जिसके सामने सर्वभक्षी काल ने भी हमेशा हार मानी है।"

एक कवि अपने ढंग से प्रकृति से प्रेरणा लेता है और अपने मनपसन्द माध्यम से उसे विकसित करने का प्रयास करता है। याद रखना चाहिए यहाँ बौद्धिक सौंदर्य का निजी वैशिष्ट्य होता है इस विशिष्टता से ही कवि प्रतिभा का रचना-संसार पाठक के हृदय में स्थान भी पाता है। हर व्यक्ति सर्जक भी नहीं होता, हो भी नहीं सकता। तब अवश्य कोई ऐसी बात है जो व्यक्ति को जीवन के साथ मिलती है और उसे सृजक बनाती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सृजन अपने आस-पास भी सर्जना को ढूँढने के लिए प्रतिबद्ध होता है। जो कवि हृदय इस मार्ग पर दृढ़ रहता है वह या तो नई रचनाओं को प्रोत्साहित करता है, स्थापित करता है, साहित्य-रक्षा करता है या वह अपने ही रचना-कर्म में सिद्धि-प्राप्त साहित्यकारों के बीच मूल्यांकन से वंचित रह जाता है। रचना क्या है? एक रचनाकार की बन्धनहीन अभिव्यक्ति। इस अभिव्यक्ति का संबंध रचनाकार के स्वत:स्फूर्त भाव से ही नहीं होता बल्कि आस-पास के समूह से जुड़कर ही तो वह दिव्य कोष को उपलब्ध करता है। इसलिए वह रचनाकार एक व्यक्ति, एक लेखक ही नहीं होता अपने आप में एक संस्था, साहित्य तथा सृजन-संस्कृति का प्रतीक भी है। ऐसा रचनाकार स्वयं क्रांति नहीं करता परन्तु औरों की प्रेरणा और शक्ति निश्चय ही होता है या बन जाता है।

यहाँ मैं कोलकाता महानगर के साहित्यिक जगत की गतिविधियों के केन्द्र कवि नवल की चर्चा करूँगी। विगत पैंतीस वर्षों के अनुभूत सत्य के द्वारा उनकी रचनात्मक प्रतिभा का आकलन ही यहाँ मेरा उद्देश्य है।

जब नवाकुंर का प्रकाशन हुआ। मेरी कवितायें भी इसमें संकलित हुई। इसके बाद १९८८ में नारी-मंच अपूर्वा के सम्पादन की प्रेरणा नवल जी ने दी कि इसका सम्पादन तुमको ही करना है। उनके साथ काम करते हुए धीरे-धीरे रचनात्मक संसार की सूक्ष्म बारीकियाँ, सूत्र, भाषा, विषय का चुनाव, उसमें कसाव, छपास-कला, शब्द-प्रयोग, एकतानता विषय की गूढ़ता क्या नहीं जाना, सीखा और स्वयं के विश्वास से रचना क्षेत्र से मैं जुड़ गई। नेपथ्य-गाइड कहूँ तो यह सही नहीं है, नेपथ्य शब्द का प्रयोग प्राय: सर्वसुलभ शब्द भी है कवि नवल के लिए। बारम्बार इस शब्द को उनके नाम से जोड़ा भी गया है जबकि सर्वविदित यह होना चाहिए कि

सेवा, तृप्ति, मित्रता का पथ सूर्य किरण-सा उद्‌भासित हो
मित्रभावना समदर्शन से / बाहर - भीतर अनुशासित हो
मित्र दृष्टि की मधुर समीक्षा / मुखरित हो जीवन में क्षण-क्षण
मन का तार-तार झंकृत हो / दृष्टि-दृष्टि से सम्भावित हो
छन्द वितान ज्योति का सिरजे धरती का कण-कण अपना हो
देखें सभी समान भाव से / दृष्टि हमारी विश्वमना हो।

(यजुर्वेद ३६/१८)

यजुर्वेद के ऋषि ने 'मित्रता' के लिए यह पुकार उठाई तो कोलकाता महानगर के वरिष्ठ कवि नवल ने भी अपना मूल स्वर इसी पुकार के संग मानो मिश्रित कर लिया हो। इसीलिए यहाँ की साहित्यक विरासत के वे महानायक हुए, नेपथ्य नायक नहीं। ऐसी मेरी मान्यता है, नवल जी ने नौ वर्ष की उम्र में कलम उठाई। लिखते रहे– कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, रिपोतार्ज, राम के दोहे, दोहे, प्रियंवदा सीरिज। लिखना उनकी जरूतत थी, मानसिक रिलेक्सेशन था। नवल जी की रचना के विविध सोपानों ने एक दर्पण प्रस्तुत किया है। उनकी रचना का पठन करने के उपरान्त ही इस सत्य से साहित्य-पाठक रूबरू हो सकता है या होगा।

अधिकांश पाठक किसी रचनाकार को बिना पढ़े ही किसी भी रचनाकार के रचनात्मक कर्म की दुहाई देने लगते हैं, वाह क्या कविता है? अति सुंदर, अति उत्तम। फेस बुक को लीजिए। इस माध्यम से पाठकों ने जिस मुखामुखी संस्कृति को जन्म दिया है वह शब्द के अवमूल्यन का संकेत देती है। यह मुखामुखी संस्कृति गहन-सत्य से हमें वंचित करती है। पिछले पाँच वर्षों से नवल जी ने 'फेस-बुक' को नई कविता को पाठक तक पहुँचाने का माध्यम चुना, पाठक संख्या भी बढ़ी। मेरा इस पाठक वर्ग से सवाल है कि नवल जी की कविताओं के मूल्यगत सत्य से चिंतन का जो पक्ष उभरा, उनसे आत्मीय संबंध रखें, आत्मीय संबंध का विच्छेद है तो यह पक्ष काँटे के तीखेपन जैसा है। कवि नवल के ही नहीं किसी भी विशिष्ट कवि के कलात्मक अनुभव के मर्म तक हम पहुँचे तो साहित्यिक संस्कृति विकास के एक नए सोपान से जुड़ सकती है। जीवन की तरह साहित्य भी निरन्तर प्रवहमान है वैदिक ऋषियों की तरह। देश और काल-बोध हर सृजन का सत्य होना चाहिए। विष्णु प्रभाकर का अभिमत है कि

"एक ऐसा वृक्ष है जिसकी जड़ ऊपर और शाखाएँ नीचे हैं। यह वृक्ष मनुष्य है। मनुष्य का मस्तिष्क ऊपर है। वहीं विचार और कल्पना का केन्द्र है। हाथ-पैर आदि शाखाएँ नीचे फैली हैं। यह पेड़ अव्यय है यानी टिकता है और अश्वस्थ है, टिकता नहीं है। विचार मस्तिष्क में जन्म लेकर पुष्पित-पल्लवित होता है। यह विचार टिकता भी नहीं है। नहीं भी टिकता यानी विचार का होना अनिवार्य है। पर इस गतिमय जगत में वह भी बदलता है, आगे बढ़ता है यानी सत्य पर खोजी, विचार का जन्मदाता मनुष्य 'आगे बढ़ता है।' यही 'टिकता नहीं' का अर्थ है।"

कहने का अर्थ है कि नवल जी भी वर्तमान समय को अपने साहित्य-फलक के लिए चुनते हैं तो कोरी कल्पना की उड़ान नहीं, वहाँ यथार्थ भी है, अपनी रचनाओं की गुणवत्ता के वे स्वयं विश्लेषक भी थे। समय-सन्दर्भ से उपजे विचारों से स्वयं को उन्होंने जोड़ा। गतिमय जगत के साथ स्वयं को बदला। बहुत लिखा, लेखन में नैरन्तर्य है, बहुत कुछ प्रकाशित हुआ अप्रकाशित रचनायें अधिक हैं जिनका प्रकाशन अभी बाकी है। विष्णु प्रभाकर की पंक्तियाँ कवि नवल के लिए सटीक प्रतीत होती है विचार का जन्मदाता मनुष्य आगे बढ़ता है। यहाँ नवल जी की कुछ कविताओं की कुछ पंक्तियों को उद्धृत करना चाहूँगी ताकि कविता के नए-नए संवेग की एक झलक पाठक के पास पहुँचे।

'शायद कुछ होगा / जिसे मैं यकीनन / पूरी तरह जान नहीं पाया /
तभी तो मैं / अपनी सीमा में / कुछ-कुछ रच पाया।'

x x x x x

एक अन्तहीन हलचल है / मेरे खून में समाई हुई / इरादा है / कि सीढ़ी दर सीढ़ी चढ़ा जाता है।

x x x x x

"वह देखो वहाँ / जहाँ तुम्हारे मसायल से भी बड़े / कई और मसले हैं /
तुमसे जुड़ने वाली तुम्हारी / हजारहा नस्लें हैं / कर सको तो करो कुछ उनके लिए /
बन सको तो उनके लिए खाद बनो / याद बनो, गूँजती आवाज़ बनो।"

x x x x x

नारा सरल है कितना जग में, पर निर्माण कठिन कितना है।

x x x x x

हम सब की अपनी सीमा है / घेरा है / घेरा भी ऐसा जो/
विधा हुआ गोल-गोल रेखा में।

x x x x x

कविता और जिन्दगी क्या एक जैसी नहीं होती।

x x x x x

कविता क्या ऐयाशी की चीज है / आप ज्यादा खुश होंगे /
तो ज्यादा दे सकते हैं / सौ - दो सौ पाँच सौ या हजार भी / मौज में
अपना कंठहार भी दे सकते हैं / या कोई पुरस्कार भी / बेहद खुश होंगे/
तो अपने बराबर भी बैठा सकते हैं। / कविता / सच में ऐयाशी की चीज है /
तभी तो मैं / आपके हुजूर में बैठा हूँ।"

x x x x x

मैं उगूँगा फिर / परती जमीन को फोड़ते हुए / एक अंकुर की तरह /
दिखूँगा फिर जहाज की तरह / जो तूफान में घिरने के बाद / लहरों पर
सवार दिखता है।

x x x x x

मैं उगूँगा फिर / बीते हुए कल की जमीन पर / आने वाले कल की तलाश में

x x x x x

वह मेरी कविता का शिल्प है / कविता को / उसका व्याकरण देती हुई।

x x x x x

रेल की पटरियों की तरह / वह खुद को काटता रहता है / ताकि उसको
वैसा ही समझा जा सके / जैसा कि वह खुद को समझाता है।

प्यार तो इक अनछुई ऊँचाई है / जितना छू सके कोई, छू ले /
वह तो और उठती चली जाती है / और जो उसे छूने की करता है कोशिश/
उसको भी अपने साथ ऊँचा उठाती है।

x x x x x

मेरा शहर / मुझसे अजनबी की तरह / सलूक कर रहा था / पिछले दिनों /
मैं गया था अमृतसर / जो कभी मेरा था शहर।

x x x x x

वक्त / अपने डॉयनामाइट से / तेरे पुर्जे-पुर्जे उड़ाकर रख देगा /
और तुझे / तेरे हाल पर रोने भी नहीं देगा।

x x x x x

छः ऋतुओं वाले देश। / तुम्हारे जिस्म के रोएँ रोएँ पर / अकाल ग्रस्त
वृक्ष खड़े है / उनकी टहनियों / तनों - जड़ों पर फफूँद लग गयी /
कहाँ है वसन्त / जिसे किताबों में पढ़ा था /
अन्धी राजनीति को ओढ़े, ओ दयनीय देश। / तुम्हारे भीतर /
क्या कहीं भी ज्वालामुखी नहीं है ?/

x x x x x

आग / नये रास्ते की खोज है / कर्म है / आगे वर्तमान का मर्म है / अबोले शब्दों की
परिभाषा है / आग ज्वाला है / भविष्य गढ़ती हुई / आग निर्माण है / इतिहास रचती हुई।
आग ! आग !! आग !!!

x x x x x

सरों के दरख्त जैसी रोशनी मेरे सामने है
और पलकों ने झपकना बंद कर दिया

मैंने अपने आपको तन्हा महसूस किया
और एक साया मेरा हमकदम हो गया।

x x x x x

मैं जगत की आग में एक कुआँ तलाश रहा हूँ
तो लोग उसे तुम्हारे साथ क्यों जोड़ देते हैं।

x x x x x

मैंने सोचा है / अब कभी नज्म नहीं लिखूँगा / क्योंकि जो लिखा जायेगा
नज्म के नाम पर / वह आखिरकार झूठ होगा / जो यकीनी तौर पर मेरे
रिसते घावों पर / मरहम का काम भी नहीं करेगा।

उपर्युक्त अलग-अलग कविता की चंद पंक्तियाँ स्पष्ट करती है कि नवल जी के 'मैं' में प्रातिभ शक्ति थी, अखंड विश्वास था 'मैं और मेरा समय और मेरी रचना व्यर्थ नहीं है। आत्मिक पीड़ा अवश्य उनको खरोंच देती थी 'मेरी मित्र मंडली ने न तो मुझे पढ़ा और न ही समझा'। उन्होंने हर रचनाकार की प्रातिभ-शक्ति का हृदय और मन से स्वागत किया। इस स्वागत में रचना के प्रति प्रतिबद्धता परिलक्षित होती है। यदि प्रतिबद्धता नहीं होती तो कलकत्ता के साहित्यिक दायित्व के संकल्प का कवि संवहन नहीं करता। नवल जी सदैव दो पंक्तियाँ दोहराते रहे – सोते, जागते, उठते - बैठते मैं सिर्फ कविता को जीता हूँ। कविता मेरा परिमार्जन करेगी।" मैं कविता के बारे में कहूँ – कविता शब्दों का संयोजन नहीं है, न ही दृश्य चित्र का ही सपाटनारा, न ही कोमल शब्दों से सजा रूमानी रूदन। कविता जीवनहै और जीवन ही कविता है। चूँकि नवल जी को व्यक्तिगत तौर पर जानने देखने का अवसर मुझे मिला। मैं दावे से कह सकती हूँ कि उनकी रचनाओं में उनकी जीवन-प्रक्रिया की झलक यत्र-तत्र उपस्थित है। बँधा जीवन जैसा जीवन जनित अनुभवों को रेखांकित करनेवाली कविताएँ व्यक्ति से समाज और समाज से संसार को जोड़ती है। परम्परा की जमीन पर खड़े होकर पुराने को बदल डालने की प्रस्तावना कवि को आधुनिकता बोध का कवि करार देती है। आश्चर्य होता है कवि अपने परिवेश में प्लासटिक का फूल तक न बन पाया। कविता की खौफ़नाक तकदीर से कलम न उठवाने

की गुजारिश भी है उसकी, तो नदी की तरह बहना प्रिय है उसे सागर की तलाश में, भिज्ञ है वह इस सच से भी देश का नक्शा कलम की नोक से बदल जाता है, कुरते से कौमी निसान बनता है, हकीकत घटनाएँ नहीं कर पाती बल्कि घटनाएँ हकीकत जरूर बन जाती है, घटनाओं के पीछे चलनेवाली कविता किस्से गढ़ती है एवं भविष्य न रचनेवाली कविता मनुष्य को तबाही के अँधेरे में गर्क करती है ऐयासी का पर्दा कलम की धारदार नोक से कटता है, जब तक मनुष्य है तब तक ही वक्त है वक्त कुछ भी कर गुजरने हेतु है, गैंडे जैसी खाल, चिकने घड़े जैसा मन, वाराह जैसा तन सिर्फ सुविधापरोशी जीवन है, हिन्दुस्तान की माँ भूख मिटाने के लिए अपनी बच्ची को बेचती है और कालाहाँडी है भारत मेला का जवाब, उड़ीसा का शबाब और कालाहाँडी ने साहित्य कला पर थूका है किन्तु जिस आग का आविष्कार मनुष्य ने किया उसी से नए रास्ते की खोज का निर्माण संभव है, मौसम के थपेड़े खाकर वसन्त का स्वागत होगा, कागज की नाव से तूफानी नदी को पार किया जाएगा ऐसा कवि का मानना है।

प्रयोगधर्मी कवि नवल का इतना वैविध्यपूर्ण कलात्मक सृजन रहा। एक कलाकार ने क्यों कभी आत्ममंथन नहीं किया कि अपने ही रचे शब्दों को पाठकों तक पहुँचाये या कहूँ कि उसने देश के कविता - कैनवास को चुनने में एक चुप्पी साध ली। निरन्तर कविता का प्रकाशित होना, कविता-पाठ कवि को एक पहचान देता है। कवि के भीतर दबी प्रातिभ सृजन-कला को जितना चाँपे कवि किन्तु कभी-कभी वह कला स्वयं मुखर हो जाती है और स्वयं फूट पड़ती है। सृजन को पाठक के पास ले जाने में अनायास यह प्रस्फुटन होता है। पाठक सोच भी सकता है कवि जब-तब अपनी कविता को क्यों सुना रहा है। क्या यह 'मैं' की अभिव्यक्ति है? या कला का स्फोट पाठक से तादात्म्य चाहता है। अक्सर मैंने नवल जी को संजय नोपानी की प्रेस में अपनी कविता के बारे में हठात् चर्चा करते पाया। हर बार एक प्रश्न मेरे मानस को मथता कवि नवल का स्वभाव सृजन है। हर सर्जक अपनी रचना-प्रक्रिया के क्षणों का साक्षी होता है और यह रचना-प्रक्रिया कहीं न कहीं समाज से सरोकार रखती है। नवल जी का बारम्बार अपनी रचना-प्रक्रिया के बारे में बोल उठना कविता सुनाना 'तुम मेरी कविता सुनो'। कविता में तन्मय होजाना, आँखों में एक 'आनन्द-भाव' का दृष्टिगोचर होना मेरी दृष्टि में एक रचनाकार के दायित्व-बोध का अहसास है। वह कवि का दर्द है, एक बेचैनी है एक अकुलाहट है बारम्बार खुद ही अपनी कविता को सिर्फ इसलिए कवि 'वाचन' करता है कि कविता का एक सामाजिक दायित्व है आजके परिवेश में। परिवेश बदला है कविता नहीं। कबीर ने भी कहा था–

कविरा खड़ा बजार में लिए लुकाठी हाथ
जो घर जारै आपना वह आए हमारे साथ।

कवि का सत्य है कि कविता उसके भीतर जिंदा है। इसकी तलाश के लिए वह स्वयं से छूट जाता है। 'हेरि हेरि हे सखी कबीरा गया हिराई' यानी कवि निरन्तर गतिमान है। युग-सत्य परिवर्तनशील है। कविता भी परिवर्तित होगी और होती रही है। कवि इसी परिवर्तन को द्वन्द्वात्मक रूप में अभिव्यक्त करता है और नए से नए विषय उभारता रहता है। नए विषय, नए प्रश्न, नए सत्य से ही कविता संचालित होती रहेगी। कबीरा हिराया, नवल जी भी हिराये दोनों की तलाश का मार्ग तो एक ही है। यहाँ भी स्मरण रहे मैं जब कबीर और नवल की चर्चा कर रही हूँ तो दोनों के बीच 'कॉमन' क्या है? कविता– मेरा यह कथन है। जब तक नवल जी की रचनाओं का पाठक अध्ययन नहीं करता, मूल्यांकन नहीं करता तब तक एक कवि के साथ न्याय नहीं हो सकेगा।

इसी क्रम में नवल जी की प्रकाशित कृतियों की भी चर्चा करना उचित होगा।

नवल जी की काव्य-यात्रा का आरम्भ विन्दु साठ के आसपास है। यद्यपि नौ वर्ष की उम्र में ही पत्रिका

सम्पादन और स्क्रिप्ट लिखना उन्होंने आरम्भ किया। आरंभिक कविताएँ और कहानियाँ विविध पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही समय-समय पर। छविनाथ मिश्र जी ने एक बार मुझसे कहा था— १९५५ में पंजाब नेशनल बैंक में कविता पाठ का आयोजन था। मैं जज था, १९ वर्ष के एक नवयुवक का चुनाव किया जिसकी कविता में मुझे कलकत्ते की काव्य-परम्परा को सजीव रखने की प्रतिबद्धता दिखी वह नवयुवक नवल था। तबसे नवल और मैं एक-दूसरे से कविता के कारण ही जुड़ गए।

एक व्यापक फलक नवल जी की रचनात्मक-यात्रा का रहा है। उनकी कविता ने कई मोड़ लिए, कई-कई प्रयोग किए। समय चेतना को कलात्मक ढंग से रूपायित करना और मानवीय संकट का गहराता जाने के समानान्तर उसे गहराई से पहचान करना और फिर उसे दूर करने का प्रयास करना कविता का दायित्व है – नवल की कविताएँ वैयक्तिक अनुभूतियों पर खड़ी होकर व्यापक मानवीय संवेदना को पकड़ती है। गुरुवर विष्णुकांत शास्त्री जी ने १९८३ में लिखा था कि बाल्मीकि, कालिदास, सूरदास और तुलसी के काव्य-निर्झर का दाय स्वीकार कर नवल ने भी कविता को होश सँभालते ही प्यार करना शुरू किया था और आज भी अपयश के तीखे प्रहार सहकर भी वह मृत्युंजय की ही तरह कविता को प्यार करता है। किन्तु कैसा अभिशप्त युग है यह, जिसमें कभी-कभी लगता है कि नक्कालों और दलालों के लिए रक्षा-कवच बनने लगी है कविता क्योंकि वे नाम और दाम के लिए कविता रचते हैं नारे या हथियार के लिए कविता गढ़ते हैं और कवि के रूप में विख्यात भी हो जाते हैं। किन्तु नवल जानता है कि ऐसी सारी कविता 'कविता नहीं' कविता का स्वांग भर होती है।' अपने इन आहत क्षणों में उसे लगता है कि 'अब कविता नहीं उपजती।' कवि नवल की कविताओं का कैनवास व्यापक है— आरंभिक कविताएँ और परवर्ती कविताएँ। परवर्ती कविताओं में पेड़ और प्रियंवदा सीरिज पर लिखी कविताएँ चर्चा के केन्द्र में रही। 'ऐसा क्यों (१९७४) पहला कविता संग्रह है जो उपलब्ध नहीं है। 'तुमसे अलग नहीं' संग्रह में ही प्रथम संग्रह की कविताएँ संकलित की गई है। इस पुस्तक का मुद्रण अभिनव पद्धति से किया गया। नीलाभ पत्रों पर बिखरे हुए हाथों के लिखे अक्षर है। सिल्क स्क्रीन पद्धति से मुद्रित यह पुस्तक कवि की अपनी हस्तलिपि में है। प्रेम की अनुभूतियों में जीवन की मीमांसा है। "कि जब प्यार का उफान ज्यादा होता है, तो शब्द कितने बेमानी लगते हैं" संवेदना स्फोट का यहाँ दिग्दर्शन है। ये कविताएँ पाठक को अहसास कराती है कि ये प्रेम कविताएँ 'तुमसे अलग नहीं' है। इस संग्रह की एक मर्मान्तिक पंक्ति है–

मैं चला जाऊँगा / हाँ, चला जाऊँगा / और जाने का अर्थ / ठहरना या लौटना नहीं होता।

'साँप और सीढ़ी' (१९८३) में प्रकाशित हुआ। समय की चेतना को नवल जी ने इस संग्रह की कविताओं में उकेरा है। अभाव, विषमता, असुविधा, शोषक पूँजीवादी व्यवस्था में पिसकर मनुष्य कविता के मुख्य विषय हैं। कुछ कवितायें बहुत स्तरीय है यथा 'ऐसा क्यों होता है वसुमति, काला दरिया, साँप-सीढ़ी, छः ऋतुओं वाले देश, नई पीढ़ी के लिए, अभी तो शुरुआत भी नहीं हुई प्रभृति। "इन कविताओं का कथ्य न सपाटबयानी के कारण नारा बना है न पेंच दर पेंच पहेलीनुमा अभिव्यंजना के कारण भूलभूलैया। अर्थ गर्भ सांकेतिकता इन कविताओं को विशिष्ट बनानेवाले तत्व है।" इसीके लिए वह लिखने को व्यग्र है—

'लिखनी ही होगी कविता / अपने इर्द-गिर्द हो रही साजिशों के खिलाफ'

स्मरण रखना चाहिए कि इस संग्रह की कविताओं का कविता की ऐतिहासिक परंपरा में एक गौरवपूर्ण स्थान है।

'आधी रात का शहर (१९८५) में कुल ३० कविताएँ संगृहीत हैं। तेजी सी बदलती संवेदना, कृत्रिम जीवन, अमृतसर से जुड़े प्रसंग के लिए व्यंग्यात्मक शब्दों का प्रयोग है। एक प्रश्न कवि को मथता है कविता

क्या ऐयाशी की चीज है ? कलात्मक रुचि और सौंदर्य-बोध की अर्थवत्ता बेमानी होती है। प्लास्टिक के युग के भीतर फिर भी एक यात्रा है बहती है ताकि अगली पीढ़ी का वह दर्पण बने।

एकमात्र प्यार ही एक अमोघ अस्त्र है बदलती विसंगतियों से सुरक्षा-कवच हेतु। 'प्यार तो एक अनछुई ऊँचाई है/जितना छू सके कोई, छू ले/वह तो और उठती चली जाती है/ और जो उसे छूने की करता है कोशिश/ उसको भी अपने साथ ऊँचा उठाती है!" सचमुच इस संग्रह की कविताएँ अपने समय का दस्तावेज है।

कालाहाँडी थरथराती नदी पर पुल (१९९२) दस वर्षों के अन्तराल में प्रकाशित हुआ। जैसा कि शीर्षक से विदित है कि प्राकृतिक आपदाएँ या अप्रत्याशित घटनाएँ समय-शिला पर निशान अंकित कर जाती है। इसीका एक प्रमाण है कालाहाँडी शीर्षक। कवि का प्रश्न कालाहाँडी से है 'तू किस काल में जी रही है, बोल तो! /कालाहाँडी! तू किसका राज खोल रही है, बोल तो।/कालाहाँडी तू किसको बदनाम कर रही है, बोल तो!/ कालाहाँडी तू किसके मुँह पर कालिख पोत रही है।/जीवन का उत्पीड़न, अपने समय के यथार्थ की स्वीकृति इस संकलन की कविताओं में परिलक्षित है। वाह्य जगत में युग की विसंगतियों को नवल जी ने देखा है पूरी नवलता के साथ। ज्ञान और संवेदना के मिश्रण से युक्त इस संग्रह की कविता कवि की वर्तमान-सतर्कता का प्रतीक है।

अग्नि (१९९३) चार नृत्यालेखों का संग्रह है। नवल के इन नृत्यालेखों का सम्पादन किया है मनमोहन ठाकौर ने। चारों आलेख वैदिक पृष्ठभूमि पर आधारित है जिनका नाम है– अग्नि, अरण्यानी, नारायणी और इन्द्रधनुष। मनमोहन ठाकौर ने अपने सम्पादकीय में लिखा है– आज मुक्त कंठ से स्वीकार करता हूँ कि इन चारों आलेखों ने भी कविता की गरिमा प्राप्त कर ली है। इन पर प्रस्तुत किए जाने वाले नृत्यों को मंच पर साकार देखते समय प्रेक्षकों की भाव-विभोर मुद्रा आपके सम्मुख स्पष्ट हो जाएगी। मैं नवल के प्रयोगधर्मी कवि के वैविध्य का उत्साहपूर्ण स्वागत करते हुए उसकी भविष्य की कृतियों की प्रतीक्षा करूँगा।" शास्त्रीय नृत्य की जानकारी नवल जी की एक सर्जनात्मक यात्रा का अभिनव पक्ष है।

Poems of Nawal (1985) का भी सम्पादन मनमोहन ठाकौर ने किया है। मनमोहन ठाकौर ने कवि नवल की चुनिंदा कविताओं का हिंदी से अंग्रेजी में अनुवाद किया। यहाँ मैं स्पष्ट करना चाहूंगी कि नवल जी का स्वयं भी अंग्रेजी और उर्दू भाषा पर विशेष अधिकार था। मजाकिया स्वभाववश अक्सर कहते थे – मैं तो पंजाबी हूँ। इत्तफाक से हिन्दी में लिख - पढ़ लेता हूँ। सच्चाई यह है कि भाषा की पकड़ के कारण उनके कई गम्भीर प्रशंसक भी रहे हैं और हैं।

सरों के दरख्त जैसी रोशनी (१९९६) प्रेम कविताओं पर आधारित है। स्वयं कवि का भी मानना था कि मेरा यह संकलन उत्कृष्ट प्रेम कविताओं का संग्रह है। सन् १९९२-९३ के रक्तपात में जब पूरा मुल्क जल रहा था, तब खूँरेज़ी के खिलाफ लिखी गई थीं ये नज्में और इसके गवाह थे हिन्दी के श्रेष्ठ कवि श्री छविनाथ मिश्र। उन्हीं को ये कविताएँ सादर समर्पित भी हुई। इस संग्रह में उर्दू शब्दों की बहुलता है। शीर्षक में पहला शब्द है 'सरों' अर्थात एक सदाबहार पेड़ जो सीधा तना रहता है (उर्दू फारसी शायरी में सुन्दर देहयष्टि की उपमा इससे दी जाती है। "एक-एक लफ्ज तुम्हारी साँस की आँच में तप रहा है और मैं किसी कुम्हार की तरह उन्हें अपनी तरबलीक मान रहा हूँ।"

कविता और नृत्य नाटिका के अलावा नवल जी ने कहानी और लघु-उपन्यासिका भी लिखी। अपात्र और प्रेम कहानियाँ (१९९६) एक और संकलन प्रकाशित हुआ। इसमें १४ प्रेम कहानियाँ है और एक लघु उपन्यासिका है 'अपात्र'।

कवि नवल नहीं कहानीकार नवल ने जिस सच को यहाँ लिपिबद्ध किया है कहानी की दृष्टि से बदले कहानी के फॉर्म पर ये कहानियाँ खरी न उतरे किन्तु विषय की दृष्टि से इन कहानियों में एक सहजता है। घटना संवादों के माध्यम से व्यक्त है, भावुकता का स्थान भावना ने लिया है।

विविधा (१९९६) ललित निबंध का एक संग्रह है। इसमें चार भाग है। संस्मरण –पिता, (२) लेखा-जोखा (आत्मकथ्य) (३) अविद्या (गद्य प्रयोग) (४) बकलम बाँके-व्यंग्य-विनोद। पिता संस्मरण स्व. मदनमोहन अग्रवाल पर एक संस्मरण है। लेखा-जोखा में (आत्म-कथ्य) के रूप में 'हुजूर माई - बाप' एक व्यंग्य शैली का प्रयोग है। जैसे : व्यक्ति के तीन रूप होते हैं एक वह, जो खुद अपने बारे में जानता है। दूसरा वह, जो लोग उसके बारे में जानते हैं और तीसरा वह, जो कि वह वस्तुत: होता है। लेकिन हुजूर, इन तीनों रूपों के अलावा भी एक चौथा रूप, आदमी का और भी होता है। वो यह कि जो वो नहीं होता, यानी जो वह बनने की चाह रखता है, जिसके कारण उसके आगे बढ़ने या विकास करने की प्यास पैदा होती है। संभवत: यही चौथा आयाम है जिसकी वजह से आदमी जिन्दगी में कुछ कर गुजरता है। अविद्या में गद्य प्रयोग है। इसमें पाँच निबंध है। बकलम बाँके के अर्न्तगत व्यंग्य विनोद शैली का वर्णन है मसलन गरमागरम समोसा, गरमागरम गरम मसाला। संजय जी खाते हुए एकदम इल्हामी मुद्रा को प्राप्त हो गये अब यह संसार आखिर है क्या ? समोसा ही तो है। समोसे की तरह थ्री डाइमेंशनल है कि नहीं ? इसकी योग मुद्रा में भोग के तमाम मिर्च मसाले हैं।

इसके अलावा नवल ने सम्पादन-दायित्व निर्वाह किया। अप्रस्तुत (१९६७-१९७१), कविता महानगर (१९७१), कलकत्ता (१९८९), कलकत्ता (१९९५)। इसमें अप्रस्तुत की चर्चा करना चाहूँगी। इसकी योजना बहुत प्रशंसनीय रही। काव्य के प्रकाशन की परम्परागत लीक से हटकर और काव्य के लेखन को प्रतिभावान रचनाकारों को विशिष्ट ढंग से प्रस्तुत करने की शैली में 'अप्रस्तुत' का छ: खंडों में प्रकाशन हुआ। प्रत्येक खंड में चार कवि संकलित किए गए। 'अप्रस्तुत' को सातवें दशक की कविता का प्रतिनिधि संकलन कहा गया है। यह पुस्तक उस समय की ऐतिहासिक जरूरत मानी गई। यह संकलन चर्चा के केन्द्र में रहा। परवर्ती काल में आलोचक श्रीनिवास शर्मा ने 'अप्रस्तुत के कवि और समकालीन कविता' आलोचनात्मक पुस्तक भी लिखी। इस पुस्तक ने नवल जी को प्रतिष्ठा भी प्रदत्त की। कविता महानगर में कलकत्ता के कवि संकलित हैं। शेष दो सम्पादित पुस्तकें स्व. मदनमोहन अग्रवाल की स्मृति में उपचार ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित कलकत्ता ८५ की ही कड़ियाँ हैं।

कवि नवल की रचनात्मक यात्रा की अभी अप्रकाशित चालीस फाइलें हैं। उनके जीवनकाल में ही नवल-समग्र प्रकाशन की योजना भी थी। किन्तु समय किसीकी प्रतीक्षा नहीं करता। मुझे अभी एक सौ पच्चीस वर्ष और काम करना है सदैव एक विश्वास से नवल जी का यह कथन होता। कहते हैं ना काल - घड़ी की टिक-टिक कब बंद हो जाती है ज्ञात नहीं। २४ अप्रैल को हठात् एक क्षण में उनकी साँसों की टिक्-टिक् बंद हो गई। यह जो कार्य करने की अनन्त इच्छाशक्ति थी शारीरिक अस्वस्थता पर भी सदा हावी रही। मन की दुर्बलता उनकी कभी परिलक्षित नहीं हुई। इष्ट-मित्रों के द्वारा अपनी रचनाओं के प्रति उदासीनता के भाव से भी कवि की निजी काव्यात्मक अभिव्यक्ति भी डाँवाडोल नहीं हुई। साहित्यकारों की सम्मान श्रृंखला में साहित्यकार का सम्मान पुस्तकें छापकर किया जाए तो वरिष्ठ साहित्यकार सम्मान के अर्न्तगत क्रमश: तीन-तीन पुस्तकें ही प्रकाशित हुई। रविन्द्र जयंती हो या निराला जयंती एक साथ ग्यारह पुस्तकें प्रकाशित करके उन्होंने कीर्तिमान स्थापित किया। नई पीढ़ी को प्रोत्साहित किया। दधीचि की तरह हड्डियाँ गलाई। कलकत्ते में हिन्दी का सांस्कृतिक वैभव हेतु सुराना प्रिंटिंग प्रेस के मालिक भागचन्द सुराना और नोपानी प्रेस के मालिक

शिवकुमार नोपानी 'चाचा' प्रकाशन केन्द्र बने। इन दोनों साहित्य-प्रेमियों के अवदान को भी कलकत्ता साहित्य इतिहास में दर्ज करना चाहिए क्या दर्ज है। यह कार्य अभी शेष है।

नवल जी एक स्वप्न से अनुप्राणित थे। कलकत्ता महानगर में हिन्दी का साहित्य जिंदा रहे, पुस्तकें प्रकाशित हो। अपने स्वप्न को हम कैसे पूरा कर सकते हैं। एक ही विचार को आप जब नए सिरे से नया बना देते हैं तभी साहित्य की परंपरा की जीवंतता बची रहती है। रघुवीर सहाय का अभिमत है कि एक बात या विचार को महज बार-बार दोहराते रहने से बचाया नहीं जा सकता। एक कविता जब किसी चीज को बचा रखती है तो तभी बचा पाती है जब उसको हर बार वह एक नए संसार के अंदर जो कि अनेक प्रकार के दूसरे सामाजिक, राजनीतिक माध्यमों के द्वारा प्राप्त किया जाएगा, शामिल करे और फिर से उसे रचे। इसलिए रचना करना बचा रखना है लेकिन एक नई दुनिया में ले जाकर बचा रखना है।" नवल जी ने कविता का चुनाव किया। आप यानी पाठक कविताओं के अध्ययन के पश्चात् समझ सकेंगे कि निज के आस-पास के संसार के प्रति कवि की दृष्टि तटस्थ दृष्टि थी या नहीं। उसने किस नए संसार में प्रवेश किया। किस चीज को बचा रखा है। जो बचा है नई पौध के लिए वह खाद जैसा उपयोगी है या नहीं।

कवि नवल अपने अनुभवों के द्वारा जिस संसार से पाठक का साक्षात्कार करवाते हैं निश्चय ही यह एक भिन्न शैली है। कहत चौपटानन्द और हँसते-हँसाते या अपने वरिष्ठ मित्रों के संस्मरण से भी आपको एक नए संसार से कवि नवल जोड़ते हैं। सृजनकार के रचनात्मक पक्ष के विविध पक्षों को मैंने सिर्फ छुआ भर है विश्लेषण नहीं किया है। आपको ऐसा प्रतीत हो सकता है कि कहीं-कहीं क्रम इधर-उधर है। ऐसा नहीं है। यहाँ मेरा मकसद सिर्फ यह है कि कवि नवल कलकत्ता के वरिष्ठ कवि हैं। अबतक नेपथ्य में रहकर नहीं नेतृत्व करके कलकत्ता-महानगर के साहित्य को गति देने का उत्तरदायित्व निर्वाह किया है कवि नवल ने। नई पीढ़ी का धर्म है कि नवल जी के रचना-धर्म का आकलन करें। रचनाओं को प्रकाशित करें ताकि एक रचनाकार का अवदान ग्रहणीय हो। उनकी एक कविता से मैं अपने आलेख को विराम देना चाहूँगी।

अगर आप सोच रहे हैं कि कुछ होगा
तो मेरे भाई, मैं कहूँगा कि आप भूल कर रहे हैं

अगर आप आशा करते हैं
कि मैं मदारी की तरह
आकाश में रस्सी फेंकूँगा
अपने शब्दों को उस पर दौड़ाता हुआ
आसमान में खो जाने दूँगा
तो मेरे भाई
आपको सचमुच निराश होना पड़ेगा
अगर आपको मुझसे कोई अपेक्षा है
कि मैं समन्दर पर
नल-नील की तरह पुल तैयार कर दूँगा।
तो मैं विनम्रतापूर्वक कहूँगा
कि आप गलत आदमी से गलत अपेक्षा कर रहे हैं

आप यकीन कीजिए
मेरा आपकी सोच, आशा और अपेक्षा से कोई सरोकार नहीं
मैं तो अपने दर्द से छुटकारा पाने के लिए
हाथ-पाँव मार रहा हूँ और परेशान हूँ
कि वह घटने की बजाय बढ़ रहा है
और
आपके दर्द के साथ जुड़ रहा है।

[कविता लिखनी ही होगी/ आदमी की हिफाजत के लिए / खुद को गुजर जाने से बचाने के लिए / अपने खून की गर्मी को / आजमाने के लिए।]

•

एक मिशनरी कवि : सुहृद-नवल

■ नीलम श्रीवास्तव

कुछ कवियों के लिए कविता (काव्य रचना और काव्यचर्चा) फालतू समय का शग़ल है, बहुतेरे कवि कविता को महत्वपूर्ण मानते हुए भी, उससे अपनी व्यावहारिक ज़िन्दगी का बाधित होना स्वीकार नहीं करते: लेकिन 'नवल' उन कुछेक कवियों में हैं जो कविता के बिना ज़िन्दगी को फालतू मानते हैं। हाँ, मैंने अपने लगभग २२ वर्ष के परिचय की अवधि में नवल को ऐसा ही पाया है। कविताई के रस में सराबोर जैसे मैंने उन्हें १९६४ में पाया था वैसे ही नख-शिख लौ डूबे हुए वह आज भी हैं। उस समय, तरुणाई के प्रथम कल्प में डूबना कोई आश्चर्य की बात न थी, किन्तु आज भी कलकत्ता महानगर के घातक तनावों और पारिवारिक दायित्वों के काफी वजनी बोझ के तले भी उसी तरह, बल्कि उससे भी ज्यादा डूबे रहना सचमुच आश्चर्य की बात है।

ऐसा नहीं है कि ज़िन्दगी में वह और कुछ करते ही नहीं या गम्भीरता से नहीं करते। बैंक की नौकरी बाकायदा करते ही हैं। काम के दौरान समय निकालकर दस-पाँच परिचितों-मित्रों को इंटरटेन भी कर लेते हैं। शुरू में 'इंडियन कॉफी हाउस' में उनकी रेगुलर टेबुल हुआ करती थी, फिर 'बुलबुल सराय' (प्रिंसेस स्ट्रीट और चितरंजन एवेन्यू के मिलाप का नुक्कड़) पर अड्डा जमने लगा। मित्रों को कॉफी पिलाने की उनकी एक विशिष्ट शैली है और आनन्द भी। अपने तकनीकी मूड में (और वह प्राय: उसी मूड में रहते है) वह आँखों और होंठों से एक साथ मुस्कराते हैं, गले से ठुनका मारते हैं और सामने खड़े किसी मित्र को चाँदनी मढ़ी सींगों से हुलसते हुए कहते हैं– 'मगर भई, मेरे पास पैसे-वैसे नहीं हैं और कोई जानना भी नहीं चाहता कि आपके पास पैसे-वैसे नहीं हैं तो आप चाय-कॉफी पीने का निमंत्रण क्यों दे रहे हैं। सभी जानते हैं कि 'गुरु निवास' में चाय-कॉफी का ऑर्डर आप ही देंगे और उसके पहले मन पसन्द नाश्ता करने का आग्रह भी करेंगे। उनकी उस आदत में अगर खलल डाल सकते हैं तो उनके, बस, दो-चार बेहद, बेहद क़रीबी मित्र ही जिनसे उनका कॉफी हाउसों के अलावा पारिवारिक रिश्ता भी है।

वह हमसे, यानी मनमोहन ठाकौर, छविनाथ मिश्र, डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र, शंकर माहेश्वरी और स्वयं मुझसे उम्र में छोटे हैं। काली चरण गुप्त 'सैयाद' से तो बहुत छोटे हैं। हो सकता है सिद्धेश, डॉ० नगेन्द्र चौरसिया, हृदयेश पांडे और श्री हर्ष से भी छोटे या समवयसी हों। लेकिन साहित्यिक कार्यक्रमों, आयोजनों, समारोहों आदि में हम उनकी इच्छा को आज्ञा की तरह शिरोधार्य करने को बाध्य हैं। छविनाथ मिश्र उन्हें हमारे विधि-विधान रहित सिंडीकेट का प्रेसीडेन्ट कहते हैं। कभी-कभी इस प्रेसिडेन्ट के निर्णय ऊहापोह की स्थिति में भी डाल देते हैं। खास करके अत्यधिक व्यस्त और संकोची स्वभाव वाले मित्रों को। मुझे स्मरण आता है, कलकत्ता की एक प्रसिद्ध संस्था, 'भारतीय भाषा परिषद' द्वारा आयोजित एक कवि सम्मेलन का। डा०

प्रभाकर माचवे द्वारा भेजे गए निमंत्रण पत्र की भाषा रुचिकर नहीं थी। फिर भी संस्था और माचवे जी की प्रतिष्ठा को ध्यान में रखते हुए हममें से एक-दो कवियों ने उनके पत्र की भाषा को नज़रन्दाज़ करना चाहा। लेकिन नवल को कवियों के प्रति माचवे जी का उपेक्षा पूर्ण मनोभाव अच्छा नहीं लगा। उनकी इच्छानुसार हम कवि सम्मेलन में नहीं गए। उन्होंने और हर्ष ने कई मास व्यापी वाद-विवाद के पश्चात भारतीय भाषा परिषद को अपनी गरिमा के अनुकूल समारोह आयोजित करने के लिए प्रेरित किया।

सभ्यता और खास करके संस्कृति की संरचना में कवि और कविता की एक अनिवार्य भूमिका को दृष्टिगत रखते हुए ही कम से कम बौद्धिकजनों द्वारा उनकी स्वीकृति का आग्रह नवल को कभी-कभी प्रतिष्ठित संस्थानों और व्यक्तियों का विरोध करने को बाध्य करता है, नहीं तो वह 'भद्रलोकीय' या 'आभिजात्य वर्गीय' अहम् और चेतना के व्यक्ति नहीं हैं। उनके कवि की संवेदना सबसे पहले घरों में महरी का काम करने वाली, 'वसुमति' की माँ से जुड़ती है 'जो बर्तन माँजकर लौटी थी और थककर पटरियों पर सो गई थी। 'ट्रेन आई और उसके घूमते पहिये। (उसके)। टुकड़े-टुकड़े कर गये.....।' (ऐसा क्यों होता है, वसुमति ?) ट्रेन से कट कर एक काम काजी औरत का अपने छोटे-छोटे बच्चों को अनाथ छोड़ कर मर जाना अपने आप एक लाचारी और बदनसीबी की घटना है, जिससे करुणा उपजनी स्वाभाविक है। लेकिन एक व्यक्ति की थकान और सम्भावित मृत्यु के खतरे के प्रति असचेतनता जब देश के अधिसंख्य लोगों की नियति बन जाए—'तुम्हारी माँ की ही बात नहीं है, वसुमति / यहाँ तो हर रोज़ एक बेहोश ट्रेन के बदहवास पहिये/लाखों के अंग काट देते हैं/और कोई नहीं देखता' (वही कविता) तो कुंद संवेदनहीनता जहाँ एक ओर समाज के अमानवीय नैतिक ह्रास को व्यक्त करती है, वहीं व्यवस्था के नक़ाब को उलटकर उसका गंदा चेहरा सामने रख देती है।

इस देश की जिजीविषा के तत्व इस विशाल और महान देश की संस्कृति में ही मौजूद हैं। नवल जब बातचीत में इस सत्य को बार-बार दुहराते हैं तो कुछ लोग उनकी एक मशहूर कविता, 'छ: ऋतुओं वाले देश' में व्यक्त इस देश के दयनीय चित्र में विरोधाभास को महसूस कर चौंकते हैं। जिस देश के 'जिस्म के रोएँ-रोएँ में अकालग्रस्त वृक्ष खड़े,' हों जिनकी 'टहनियों, तनों-जड़ों में फफूँद लग गई' हो उस देश में किताबों में पढ़ा वसन्त कहाँ मिलेगा! वसन्त कभी था तो जरूर, छ: ऋतुओं का आगमन भी होता था, इस सोने की चिड़िया की ज्ञान-गरिमा की भी दुम-दुमी बजती थी। लेकिन तब देश की उर्वरा भूमि और मेधा को न देख पाने वाली बौनी सोच वाले लोग सत्तासीन नहीं थे। आज जो इस देश का 'पेट बजता है / और दूर-दूर के लोग मुस्कराकर / ज़बान पर गेहूँ और किताब रख देते है' उसका कारण व्यवस्था वाहकों का आम आदमी में विश्वास न जमा पाना है। एक विराट शक्ति अकल्पनीय सम्भावनाएँ लिए सो रही है और देश के शासक भीख का तसला उठाये दुनिया की गलियों में घूम रहे हैं। मुझे डॉ० राममनोहर लोहिया की एक उक्ति याद आती है। उन्होंने कहा था– यह शर्म की सरकार तन से अमेरिका की और मन से रूस की गुलाम है। नवल ने भी रोटी और किताब के लिए उस देश को विदेशों का मोहताज महसूस किया है और यह पीड़ा उन्हें कचोटती है। क्षोभ विस्फोट बन जाता है देश के भीतर सोये ज्वालामुखी का आह्वान करना राष्ट्र प्रेम से उत्प्रेरित 'राष्ट्रीय धर्म के खिलाफ पूरी शक्ति के साथ खड़ा होना है। नवल की कविता का यही चरित्र है।

यह आह्वान कवि के लिए भी है और कविता की आवाज़ सुनने वालों के लिए भी। देश की अवस्था और व्यवस्था ऐसी है कि आदमी को सपने तक देखने की मुहलत नहीं है। फिर भी नवल को कविता पर और

कविता की सुरसरी द्वारा मरुस्थल हो चुके मनों में आकांक्षित भविष्य की पौध उगाने का विश्वास है। कवि मृत्युंजय (उपाध्याय) को संबोधित कविता में जब वह कहते हैं– 'अपने आहत क्षणों में / मैंने भी / तुम्हारी तरह ही याद किया है वाल्मीकि और तुलसी को.... लेकिन मैंने यह भी सोचा है, मृत्युंजय / कि शायद तुममें / मुझसे या किसी और में / कोई भागीरथ जन्म लेगा। और उसकी कोशिश से / उतरेगी / कविता आकाश से' तो कविता की सार्थकता पर उनका विश्वास ही प्रकट होता है। यह विश्वास ही है कि जो नवल अपने कविता संग्रह, 'साँप-सीढ़ी' की पहली कविता में दुहरा-दुहरा कर कहते हैं कि 'अब कविता नहीं उपजती / आसमान में तारे गिनते हुए / ...पत्नी के डबडबाते इन्कार में / और एक आदत की तरह शुरू और ख़त्म होने वाले प्यार में / ...वह तो कैलेंडर पर फड़फड़ाती आख़िरी तारीखों में दम तोड़ने में लगती है...' वहीं इस संग्रह की अन्तिम कविता में एक संकल्पवती भाषा में कहते हैं– 'फिर कविता लिखनी है / अपने ईर्द-गिर्द हो रही साज़िशों के ख़िलाफ / और कर लेना है उन सब से हिसाब / जो हम वतनों की लाशों पर गिद्धगीत गाते / व्यूह रचाते डोल रहे हैं।' ...

नवल की कविता की आलोचना-समीक्षा लिखना मेरा उद्देश्य नहीं है। मैं उनका बहुत-बहुत करीबी दोस्त हूँ और उनके संग-साथ के अमूल्य दिनों और उन दिनों में 'पाया-खोया' का स्मरण करना चाहता हूँ। हमारी दोस्ती अपने आप में कुछ अजीब बात मानी जायेगी। आज से लगभग २२ वर्ष पूर्व जब मैं उनसे मिला था तो वह नई कविता के प्रति-कुछ मिशनरी आग्रह से भरपूर थे। गीत लिखता था और नई कविता के कवित्व को ही नहीं, ऐसी कविता लिखने वाले के कवि कर्म को भी संदेह की दृष्टि से देखता था। नवल किसी राजनीतिक दर्शन से आकर्षित नहीं लगते थे। मुझ पर डॉ० लोहिया का प्रभाव था। बंगाल में आकर मैं मार्क्सवादी साहित्य विधिवत पढ़ने लगा था। नवल टुकड़ों-टुकड़ों में हर विषय पर हर किसी से घंटों बतिया सकते थे। मैं सेलेक्टेड लोगों से सेलेक्टेड विषयों पर किसी न किसी निचोड़ तक पहुँचने तक जाना पसन्द करता था। वह शहर देख चुके थे। मेरे लिए शहर अनजाना था।

लेकिन हम आश्चर्यजनक गति से करीब होते गए। मैं सप्ताह में एक बार या दो बार उनके पास जाता था। और वह पुराने मित्रों का साथ छोड़कर मेरे साथ हो जाते थे। उनके अन्य मित्र जरूर मुझसे ईर्ष्या करते रहे होंगे। बहरहाल नवल के साथ मैंने कलकत्ता की ज़िन्दगी देखी। शहर की कुरूपताएँ देखीं, रंगीनियाँ देखीं। छविनाथ मिश्र राहीशंकर और कालीचरण गुप्त 'सैयाद' उस समय तक मेरे मित्र हो चुके थे। राजकिशोर (रविवार के सहायक सम्पादक) और डॉ० शम्भुनाथ कुछ बाद में मित्र हुए। उनके अलावा शहर के तमाम हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के लेखकों से मेरे परिचय के सूत्र नवल थे। जो उनका जितना करीबी था, वह मेरा भी उतना ही करीबी बन गया।

दरअसल, नवल के भीतर कविता का अजस्र स्रोत है। कविता के अलावा वह जहाँ भी होते हैं, अधूरे होते हैं, हड़बड़ी में होते हैं, अपने भीतर के प्लावन को रोकने के लिए चाय, कॉफी-चुस्की-चुटकियों का सहारा लेते हैं। लेकिन एकान्त मिलते ही कविता लिखने में जुट जाते हैं। गत बीस वर्षों में शायद उन्होंने सबसे अधिक लिखा है। कई सौ कविताओं के साथ कभी अपनी मर्मान्तक पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए उन्होंने दोहे लिखे तो कभी मौज में आकर अपने मित्रों के ऊपर कुण्डलियाँ, कभी सूक्तियाँ। उन्हें जैसे जागरण का रोग है और आराम न करने की कसम। दिन भर ऑफिस, शाम को देर तक 'बुलबुल सराय' की अड्डेबाजी, और फिर

रात को रात पढ़ना और कविताएँ लिखना। 'या निशा सर्वभूतानाम् तस्यामि जागर्ति संयमी' – नवल वैसे ही संयमी है, एक साधना को समर्पित, एक पूजा को निवेदित। उनकी सारी रचनाएं छपती तो केवल ३/४ संग्रह ही नहीं, अब तक एक दर्जन पुस्तकें प्रकाश में आ जाती। लेकिन उन्हें कारवाँ लेकर चलना प्रिय है। अगर उनका संग्रह छपता है तो नीलम का क्यों न छपे, शंकर माहेश्वरी और मनमोहन ठाकौर का क्यों न छपे, प्रभा खेतान और शोभा मनोत के संग्रह भी आने ही चाहिए। आर्थिक स्रोत तो निश्चित रूप से इस नगर में ही है। इकबाल हयात खान, भागचन्द सुराणा, शिवकुमार नोपानी और वीरेन्द्र मोहन लाखोटिया (मुद्रण संस्थाओं के मालिक) के प्रेम की प्रशंसा नवल करते नहीं अघाते। लेकिन कलकत्ता के हर साहित्य प्रेमी को यह पता है कि १९८५ की मई से विप्लव की गति से छपने वाले साहित्यिक ग्रंथों के पीछे सिर्फ एक व्यक्ति है और वह है नवल। पारिवारिक दायित्वों के बोझसे दबा हुआ, साइटिका के दर्द से कराहता हुआ, एक छोटे से कद का आदमी सृष्टिकर्ता के चार मुँह और पौराणिक देवी-देवताओं के दस हाथ लिए हुए इस महानगर के हताशा-निराशा और अमानवीय वातावरण में कविता की संवेदना का मलयानिल भरने को आमादा है। मैं दोस्त न होता तो इस मनुष्यरूपी महामहिमामय संस्था को प्रणाम करता!

जिसके लिए कविता अर्थोपार्जन और यश प्राप्त करने का बौद्धिक श्रम है, वह ऐसे काम नहीं कर सकता। ऐसे काम वह करता है जिसके लिए कविता प्रेम और करुणा का पर्याय है। हमारी दोस्ती का यही रहस्य है। यह अलग बात है कि मैं उनकी नई कविता की बुनावट, अछूते और सार्थक बिम्बों की उद्भावना और आधुनिक युगबोध से प्रभावित होकर नई कविता की सामर्थ्य पर विश्वास करने लगा। मेरे विचार से उनकी कविताएँ....छः ऋतुओं वाले देश, एक जंगल से दूसरे जंगल तक, एक बार फिर सुनाओ न, वसीयत, सांप-सीढ़ी, आभार, चिंगारी और अनेक कविताएँ जो अभी प्रकाशित नहीं हुई–बेहद समृद्ध रचनाएं हैं, वस्तु और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से। व्यवस्था को जिस तरह से 'आभार' कविता एक्सपोज करती है या उससे लड़ने की दुर्दशा आकांक्षा जितने सहज ढंग से 'साँप-सीढ़ी' या 'एक बार फिर सुनाओ न' जैसी कविताओं में ध्वनित होती है, वैसी सहज और तेवर वाली कविताएँ बहुत कम मिलेंगी। खैर, मैं अपनी मित्रता के रहस्य की बात कर रहा था।

वास्तव में रहस्य कुछ भी नहीं है। हम दोनों शीश उतार कर प्रेम के घर में पैठे हैं। नवल के भीतर एक बाती है, अक्षय स्नेह से डुबी हुई। वह स्वयं तो जलती रहती है, दूसरों के दिल में अवस्थित बाती को भी जलाती है। उसमें जितना स्नेह होगा, जलेगी; नहीं तो बुझ जायेगी। स्नेहहीन बाती वाला आदमी नवल की दोस्ती का ताप नहीं झेल सकता। मेरी बाती में स्नेह था। इसलिये हमारी मित्रता अटूट बनी रही, जिसमें न कभी दुराव आया, न सेन्सर। हमने अपने मन का कोई कोना एक-दूसरे से अनजाना, अनछुआ रखा ही नहीं। ईर्ष्या करनेवालों ने कहा– नवल और नीलम दो शरीर एक प्राण हैं। क्यों न कहते ? जिन कामों के यश के नवल अकेले हक़दार थे, उसे उन्होंने सहज ही मुझे सौंप दिया। आपातकाल में रानीगंज के सहृदय और साहित्य प्रेमी व्यवसायी, ओमप्रकाश झुनझुनवाला की चेष्टा और प्रेरणा से वहाँ ६ भाषाओं का विशाल साहित्यिक समारोह हुआ था। ६ भाषाओं की कविताओं के हिन्दी अनुवाद सहित संग्रह भी प्रकाशित हुए थे। संकलन, साज-सज्जा और प्रकाशन का सारा काम नवल ने किया था। लेकिन सम्पादक के स्थान पर नवल का नहीं, नीलम का नाम था। 'नवागत' पत्रिका के प्रकाशन से लेकर, काफी हद तक अर्थव्यवस्था भी उनके हाथों में थी, लेकिन सम्पादक

नीलम थे। अप्रस्तुत प्रकाशन हो या स्वर समवेत, रचनाओं का सम्पादन, अर्थव्यवस्था, प्रकाशन, प्रचार-प्रसार वही करते हैं। मनमोहन ठाकौर से सहयोग मिल रहा है। शंकर माहेश्वरी, मैं या अन्य मित्र उनके साथ थोड़ा-बहुत लगे रहते हैं। लेकिन अक्सर मंच पर प्रमुख कार्यकर्ता के रूप में नवल मुझे खड़ा कर देते हैं। अन्य मित्रों का सम्मान करते हैं। स्वयं सभागार की किसी पिछली सीट पर दर्शक की तरह बैठे रहते हैं। ऐसे अवसरों पर कभी-कभी मुझे खीझ होती है। लेकिन नवल बड़े सहज ढंग से एक वाक्य में बात उड़ा देते हैं– 'क्या हुआ नीलम, तुम हुए या मैं हुआ। हम दोनों अलग तो नहीं हैं।' मुझे आश्चर्य होता है। इतना बड़ा हृदय आदमी कैसे पा जाता है।...

हाँ, नवल का बहुत बड़ा हृदय है। सिर्फ मन का आपा खोकर, दिल को चाँदनी-सा निर्मल बनाना होगा, दिमाग से चालाकी और औपचारिकता को दूर रखना होगा। स्वभाव में अगर शिशु की सादगी है, आरती की घंटियों के स्वर जैसी पवित्रता और माँ के दूध पिलाने जैसी ईमानदार आत्मीयता है तो नवल आपके हैं। आपके सामाजिक विचार क्या हैं, आपका राजनीतिक दर्शन क्या है, इससे फर्क नहीं पड़ता। ईमानदारी की ज़मीन ही असली चीज़ है।

मुझमें उन्होंने जरूर कुछ पाया होगा। उनके बड़े-बड़े प्यारे मित्र हैं। लेकिन मुझे अक्सर महसूस होता है कि शायद मैं उनकी आत्मीयता के कोष्ठकों में कुछ अधिक ही जगह घेरे हुए हूँ। मैं आर्थिक रूप से कभी दुरुस्त हालत में नहीं रहा। नवल का भी बैंक बैलेन्स शून्य ही रहा है। लेकिन जब कभी मेरी 'पगड़ी उछलने' का वक्त आया, उन्होंने अपनी गर्दन को मुसीबत में डालकर मेरी चिन्ताओं को स्वयं ओढ़ लिया। वह चाहे मेरी बेटी पुष्पा की शादी का समय हो, चाहे शलभ श्री राम सिंह की बेटी प्रतिभा की शादी (जो कुछ परिस्थितियों के कारण मेरे निवास से सम्पन्न हुई थी)। यही नहीं, पीड़ा के समय उन्होंने माँ की तरह आँसू पोंछे, बहिन की तरह सान्त्वना दी, भाई की तरह सहेजा और मित्र की तरह मन बहलाने के लिए तरह-तरह के उपाय किए। वह मेरे प्रणय-सम्बन्धों के साक्षी रहे हैं। प्रेम की सुगन्ध जितनी मेरे अन्दर बसन्त राग गाती रही, उतनी ही उन्हें भी उल्लसित करती रही और विद्रोह की पीड़ा जब नस-नस को तेज धार वाली छुरी से काटने लगी तो उन्होंने मुझे सन्तुलित करने के लिए उद्धव से लेकर उमर ख़ैयाम तक के नुस्ख़े अपनाये।

प्रेम की पीड़ा उन्होंने खुद भी भोगी है। मेरा अपना अनुभव यह है कि दुनिया के आधे लोग संस्कार और सामाजिक लगाव को प्रेम मानते हैं। बाकी आधे लोग भी सिर्फ प्रेम का भ्रम जीते हैं। वह तो हजारों में कोई एक होता है जो प्रेम की गहन अनुभूतियों से गुज़रता है और जिसने सचमुच इन अनुभूतियों का अम्बुजरस चख लिया है वह मनुषत्व की गरिमा पा लेता है। एक कुंकुमी आभा की कस्तूरी गंध सदैव उसके व्यक्तित्व से झरती रहती है। नवल ऐसे ही हजारों में एक भाग्यवान या अभागे व्यक्ति हैं। आप डाक्यूमेन्टरी प्रूफ चाहते हैं तो उनका कविता संग्रह 'तुमसे अलग नहीं' पढ़िये। फुरसत हो और प्राणों में कहीं वीणा जैसे तार हों तो उनके करीब जाइये। तारों में अवश्य विमुग्धकारी झंकार पैदा होगी। आप चाहें तो उस झंकार को राग में रूपान्तरित कर लें, जैसे मैंने किया है।

नवल के लिए प्रेम कविता और सामाजिक दायित्वबोध में कोई फर्क नहीं है। सिर्फ अभिव्यक्ति के ढंग अलग-अलग हैं। 'तुमसे अलग नहीं' कविता संग्रह उन्होंने समर्पित किया है 'उसे। जिसका नाम। मन में। प्रार्थना की घंटियों सा बजता है। और देता है। हिमालय विजय की प्रेरणा भी!' इसी संग्रह की एक कविता,

'मेरी तरह' में वह कहते हैं– जिस काँपते पुल पर / हम खड़े होते हैं / उँगलियों में / उँगलियाँ फँसाए / शब्दहीन / अवाक् / स्थिर / अपने अतीत और भविष्य से बेखबर / हम एक कविता / को जी रहे होते हैं।' केवल ये दो उद्धरण प्रेम की अन्तरानुभूति, कविता के उत्स और कला के व्यावहारिक पक्ष को साबित करने के लिए काफी हैं।

नवल को इस महानगर में, जिसे सत्यजित राय ने जन-आरण्य की संज्ञा दी है, भी एक बड़ी संख्या में लोग मिले, जिन्होंने उन्हें पहचाना, उनकी कविता को पहचाना, उनके मिशन के महत्व को आँका और अपनी सामर्थ्यानुसार उन्हें सहयोग दिया। सुप्रसिद्ध नाट्य संस्था, 'अनामिका' की ओर से प्रतिभावान रंगकर्मी, विमल लाठ ने 'साँप-सीढ़ी' की लगभग ११ कविताओं का मंचन किया था। 'चौपटानन्द' उपनाम से लिखी गई उनकी कुण्डलियों पर कार्टून डॉ० प्रभाकर माचवे ने बनाये थे। होली के अवसर पर उसका रंगारंग विमोचन हुआ था। 'तुम से अलग नहीं', के लोकार्पण के अवसर पर त्रिसंध्या कार्यक्रम आयोजित हुआ जिसमें कुल मिला कर लगभग ३० कवियों-कवयित्रियों ने कविता-पाठ किया। डॉ० प्रतिभा अग्रवाल, मदन सूदन, प्रीतम खन्ना, गोविन्द राज सिंघवी, सुशील गुप्ता, बुद्धि नाथ मिश्र और बहुत से साहित्यकार, कलाकार और साहित्य प्रेमी ऐसे हैं जिनसे नवल के नितान्त आत्मीय सम्बन्ध हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि अपनी संकल्प शक्ति, संगठनात्मक क्षमता और नई-पुरानी पीढ़ी के तमाम मित्रों-आत्मीयों के स्नेह-सहयोग के सहारे नवल स्वयं तो हिन्दी साहित्य को सशक्त रचनाएँ देंगे ही, अनेक कवियों - लेखकों की कृतियों का प्रकाशन कर सकेंगे। इसी में तो वह अपनी मुक्ति मानते हैं और इसी काव्य कर्म में मनुष्य धर्म भी देखते हैं।

•

नवलजी सचमुच भले मानुष थे

■ परशुराम

मैंने यह पंक्ति ३१ दिसम्बर २०१९ को उनके व्हाटसएप के किसी पोस्ट के उत्तर में लिखकर प्रेषित किया था। यह भी कि 'आपसे किसी को क्या शिकायत हो सकती है' मेरी तो नहीं है मान्यवर! क्या पता था कि वह अब इस प्रकार की कोई पंक्ति लिखने का अवसर ही नहीं देंगे।

नवल जी के व्यक्तित्व के कई पहलू हैं। वह एक ही साथ कवि, साहित्यकार, संपादक और साहित्यिक गतिविधियों के केन्द्र रहे हैं। कलकत्ता के साहित्यिक परिवेश में उनका महत्वपूर्ण अवदान रहा है। एक तरह से कलकत्ता के सांस्कृतिक पुरुष थे। यहाँ साहित्यिक - सांस्कृतिक संस्थाओं को भी यहाँ के रचनाकारों का उतना सहयोग नहीं मिला जो नवल जी को मिलता रहा है। कारण वह रचनाशीलता का सम्मान करना जानते थे और वरिष्ठता की आभा की चादर ओढ़े नहीं रहते थे। उनकी बहुमुखी प्रतिभा और व्यक्तित्व के तमाम आयामों को समेटने का कार्य उनका कोई अन्तरंग और आत्मीय ही कर सकता है। यह कार्य 'प्रतिध्वनि' कर सकती है।

मैं उनकी कुछेक कविताओं तक अपने को सीमित रखूँगा। वह भी इसलिए हमारे संबंध व्यक्तिगत कम रचनात्मक अधिक थे। विगत चार साल से व्हाटसएप के माध्यम से तो कविताएं प्रेषित करते थे और उनपर बातचीत भी होती थी। कवि नवल की कविताएँ 'ऐसा क्यों' के बजाय 'ऐसा है' का बयान नहीं करती है। उनकी कविताओं में निम्न पूँजीपति वर्ग के शोषण के प्रति सहानुभूति परक चित्र मिलता है। मेरा उनके कवि से परिचय 'छ: ऋतुओं वाले देश' कविता सुनकर हुआ था। तब मैं स्नातक का छात्र था। इसमें अतीत और वर्तमान के द्वन्द्व से अपने देश को जानने की जिज्ञासा व्यक्त है। वह इस कविता को प्राय: गोष्ठियों में प्रभावशाली ढंग से पढ़ते थे। 'साँप - सीढ़ी' की कई कविताओं में उनकी मानवीय अस्मिता और स्वाधीनता की पक्षधरता स्पष्ट है। नवलजी की कविताओं में सामाजिक विषमता और अन्याय के प्रति उनका आक्रोश और क्रोध अपने चारों ओर की घटनाओं की सघन अनुभूति में व्यक्त हुआ है। उनकी कविताओं में प्रतिक्रिया स्पष्ट ढंग से व्यक्त नहीं होती। यह उनकी कविताओं का शिल्प है।

वह व्यापक मानवता के पक्षधर थे और बाद की कविताओं में उनकी महत्वाकांक्षी प्रियंवदा सीरीज की कविताओं तक में नूतन सृजित हुये हैं। मैं उनकी कविताओं को अध्यात्म से जोड़ नहीं पाता। आज के मानव विरोधी और मानव द्रोही मानव में प्रियंवदा प्रतीक के माध्यम से संदेश देना चाहते हैं कि मनुष्यों के धर्म, जाति, लिंग और रंग के आधार पर जो दीवार खींच दी गयी है उसे पाट दिया जाए। इन मूल्यों को सुरक्षित रखा जाना चाहिए। नारी को शक्ति और सृष्टि को आधार के रूप में भी अभिव्यक्ति की झलक इन कविताओं में मिलती है।

क्या वह केवल नश्वरता है
जिसके प्रतिवाद स्वरूप हम शब्दबद्ध होते हैं
चाहे वह शरीर की सत्ता हो
या सत्ता हो शासन की
या किसी धर्म के पालन - अनुपालन की?

कवि मृत्युंजय उपाध्याय पर लिखी नवल जी की एक कविता (२८ अक्टूबर २०१९) की ये कुछ पंक्तियाँ हैं जहाँ कविता के सृजन कारणों की ओर कुछ संकेत है। कविता में प्रतिवाद की भाषा है। नवल जी संभवत: मृत्युंजय को अपनी सोच-संवेदना और भावभूमि के अनुकूल पाते हैं और शायद यही कारण है कि उन्होंने इनपर संभवत: दो-तीन कविताएं लिखी हैं संस्मरण अलग से। 'साँप-सीढ़ी' की 'तुम्हारी तरह मैंने भी सोचा है' की निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है :

अपने आहत क्षणों में
मैंने भी
तुम्हारी तरह ही याद किया है
वाल्मीकि और तुलसी को
उनको गाया है
अपने अस्पष्ट स्वर है
पाया है मैंने
आस - पास उनको

इन काव्य पंक्तियों को उद्धृत करने का उद्देश्य मात्र नवल जी की कविता संबंधी चिन्तन और समझ की ओर संकेत करना है। यह न ही समीक्षा है और न ही आकलन। वह परम्परा से रस-ग्रहण करते हैं किन्तु कविता की प्रतिरोध - प्रतिवाद की भूमिका को वरीयता देते हैं। नवल जी कविता को प्रेम, मनुष्यता और करुणा का स्रोत मानते हैं।

नवल जी की कविताओं में यथास्थिति के प्रति सीधी टकराहट तो नहीं दिखती है किन्तु मध्यवर्गीय जीवन के विरोधाभासों में उनका असंतोष व्यक्त है। यह उनकी सीमा थी। वह भी मानते थे कि 'लिखनी ही होगी कविता / अपने इर्द - गिर्द हो रही साजिशों के खिलाफ।' फिर कविता लिखनी है – 'साँप-सीढ़ी' विरोधाभास के माध्यम से अपनी अवस्थिति व्यक्त करना उनकी प्राय: कविताओं का शिल्प है। नवल जी कविता को जीवन का पर्याय नहीं मानते। होगी भी नहीं। 'कविता और जिन्दगी क्या एक जैसी नहीं होती? इस प्रश्न में यह भाव संदर्भित है।

हाँ, अब कविता नहीं उपजती
वह तो कैलेंडर पर फड़फड़ाती
आखिरी तारीखों में दम तोड़ने लगी है
कोई दर्दभर उसे कहाँ तक बचायेगा।

हाँ, यह सुरुचि संपन्न नवल जी की ही पंक्तियां हैं। यह बहुतों को अजीब सा लग सकता है। वैसे प्राय: कवि कविता के बारे में लिखते रहे हैं। नवल जी ने भी अनुभूतियों को नया रंग भी दिया है। उन्होंने कविता में भी प्रयोग किया है। यहाँ उसकी चर्चा अनपेक्षित है। केवल सुखद कल्पनाओं के सहारे जीवन की जटिलताओं के बीच कोई कविता कैसे लिख सकता है?

नवल जी द्वारा सम्पादित 'अप्रस्तुत' काव्य-संकलन की चर्चा बराबर होती रही है किन्तु उन्होंने 'नवाग्रह', 'अपूर्वा', 'काव्यम्' जैसी पत्रिकाओं का प्रकाशन किया और मानक प्रस्तुत किया। इनके माध्यम से नयी

सृजनशीलता को सामने लाये किन्तु वे हमेशा नेपथ्य में रहे। वह प्रचार से दूर रहते हैं किन्तु प्रचार उनके पीछे-पीछे चलता रहा।

सातवाँ दशक जनान्दोलनों और जनसंघर्षों का दशक रहा है। सामाजिक सरोकारों से दायबद्ध रचनाकार उनकी खोई हुई जमीन के लिए संघर्षरत रहे। कला, साहित्य को जनता से जोड़ने के लिए प्रतीक्षारत और प्रतिबद्ध थे। यह ठीक है कि उस समय किसिम-किसिम के साहित्यिक आन्दोलनों की उपस्थिति भी थी। अप्रस्तुत काव्य संकलन में संकलित कवियों के माध्यम से विभिन्न प्रवृत्तियों वाली रचनाओं की प्रस्तुति है। शर्त भी कि वह गद्य शिल्प में होनी चाहिए। होना यह चाहिए था कि तत्कालीन सामाजिक - राजनीतिक - सांस्कृतिक परिवेश से प्रभावित रचनाओं के माध्यम से नए सकारात्मक सृजित मूल्यों की पहचान की जाती। यहीं पर विचारधारा का भी सवाल बनता है। ग्रहण और त्याग की भी बात उठती है। जिन कवियों की कविताओं में यह यथार्थबोध था, वे चर्चित भी हुए। समन्वयवादी दृष्टिकोण, न समाज और न ही कला साहित्य की प्रवृत्तियों को सही रूप में प्रस्तुत कर पाता है। उन्होंने कहीं लिखा भी है कि 'अप्रस्तुत' काव्य-संकलन अपने समय में चर्चित भी रहा। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में इस प्रयास को सराहा भी गया। इसका ऐतिहासिक महत्व होता यदि इसका वैचारिक पक्ष स्पष्ट होता।

नवल जी ने केवल कविताएं ही नहीं लिखीं, संस्मरण, रेखाचित्र, उपन्यास आदि भी लिखे हैं। कलकत्ता के साहित्यिक - गैर साहित्यिक मित्रों के बारे में उनके संस्मरण पसंद किये गये हैं। अपने स्वपरिजनों और अग्रज पीढ़ी के बारे में शायद ही किसी ने लिखा हो जितना कि नवलजी ने किया है।

नवल जी सदैव सृजनशील रहे। वह पक्के थे। सृजनशीलता की नई पौध का स्वागत करने के लिए तैयार। नवल जी भले आदमी थे। वह केवल व्यक्ति नहीं अपने आप में संस्था थे। वह स्वयं किसी न किसी रूप में सृजनशील रहे और नई पीढ़ी से भी उनकी यही अपेक्षा है। उनकी निम्नलिखित काव्य-पंक्तियाँ ध्यान आकृष्ट करती है :

तुम मेरी जमीन को सींचते रहना
शायद उग आए कभी उन पर पेड़
कुछ न कुछ करते रहना
लेकिन हाथ पर हाथ धरे मत रहना।

नवल जी! आप जैसे भले मानुष हमारी स्मृतियों में सदैव बने रहेंगे।

•

कविताओं में भाव-संसार

■ विमल वर्मा

नवल जी की प्रस्तुत कविताओं में भाषा के संवेगीय प्रयोग, अनुभवों के ऐन्द्रिक संवेदन, अर्थों की मार्मिक पहचान, रचनात्मक आवेगों, भौतिक जीवन की दशाओं, वास्तविकता को खंडित करने वाली विपरीतताओं से संघर्ष करने वाली भावपरक संरचना जिन ऐतिहासिक आवश्यकताओं की उपज है, तत् सम्बन्धी सामाजिक सांस्कृतिक संरचना में विसंवादी तत्वों के तनावों के प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष बोध हमें जवाहर लाल नेहरू के ज्ञान-शास्त्र की ओर उन्मुख करता है। पं. नेहरू ने अपने रचनात्मक आत्मनिरीक्षण के दौर में सांस्कृतिक-बौद्धिक प्रयत्नों के बहुआयामी जटिल स्वरूप का विवेचन करते हुए लिखा था – "मैं पूर्वी और पश्चिमी दुनिया का एक विचित्र मिश्रण बन गया हूं, हर जगह बेगानापन महसूस करता हूँ। कहीं भी अपनेपन का अहसास नहीं होता। जीवन के सम्बन्ध में मेरे विचार और दृष्टिकोण उस चीज से शायद कम मेल खाते हैं जिसे पूर्वी कहा जाता है और उससे ज्यादा जो पश्चिमी कहलाती है, लेकिन साथ ही भारत असंख्य रूपों में मुझसे उसी तरह चिपटा हुआ है। जिस तरह वह अपनी सारी सन्तानों से चिपटा हुआ है। ...मैं न तो उस अतीत से छुटकारा पा सकता हूँ और न हाल से जो कुछ प्राप्त किया है उससे। पश्चिमी दुनिया में मैं अजनबी और पराया हूँ। मैं उसका हिस्सा नहीं हो सकता। लेकिन खुद अपने देश में मुझे कभी-कभी किसी निर्वासित व्यक्ति जैसा महसूस होता है।" (जवाहर लाल नेहरू, ऐन ऑटोबायोग्राफी, लन्दन पृ. ५९६)

इसी तरह आत्मकथा के लेखन के एक शताब्दी के बाद नवल जी की ये कविताएं अपनी भाव संरचना से जैसे हमें नेहरू जी के संकट का साक्ष्य प्रस्तुत कर रही हैं।

पाठक पहचान के इस संकट की अनुभूतियों, संस्कृति व्यवहारों को अनुभूत कर वर्तमान तथा आसन्न संघर्षों की उपेक्षा नहीं कर सकता। क्या हम इन छटपटाते संवेगों के बौद्धिक तथा विचारधारात्मक संवेगीय परिप्रेक्ष्य में आज की भौतिक स्थितियों से इन्हें जोड़कर रूपान्तरणशील नवीनता के लिए इतिहास की आवश्यकता के द्वन्द्वों की दिशा की ओर नहीं बढ़ सकते?

'तब की बात' नामक कविता में अतीत की भारतीय चेतना की संरचना में संवेगों के जिस स्वरूप की सृष्टि की गयी है वे सामुदायिक समूहों की संवेदनशीलता प्रतिध्वनित करते हैं। परन्तु वे अतीत का पुर्नआह्वान नहीं करते हैं। कहना न होगा कि अतीत, वर्तमान के अनेक संसार हैं। यहां रचनाकार की धारणशीलता में अनेकता में एकता मुखरित होती है। इसी कविता में नौजवानों के प्रश्न-भावी दिनों की कल्पना के अन्त:स्रोतों का संकेत हमें इतिहास की कुंडलीकार गति को समझने, वर्तमान वस्तु सत्य के अनुभव प्रकरणों के विश्लेषण, एकता और अन्तर्विरोधों के प्रश्नों से टकराने की दिशा में खींच ले जाते हैं। क्या यह रचना हमें सांस्कृतिक-बौद्धिक प्रयत्नों तथा अस्तित्व को आलोचक सुरेन्द्र चौधरी के शब्दों में 'कविता में व्यापार केवल संज्ञा नहीं होते, उनकी संगति का एक भावात्मक धरातल होता है जो व्यापारों को एक संवेदनात्मक और संश्लिष्ट अर्थ प्रदान करता है।'

'तलपट' का सन्दर्भ आज के युग के दारूण भाव-भोग और वस्तु-संश्लेष में अभिव्यक्त है। जाहिर है कि हमारा भाव सत्तात्मक मानस अन्तर्विरोधों का समुच्चय होता है। रचना काल-गति का बैरोमीटर है। आज के सांस्कृतिक व्यवहार में खासकर नयी पीढ़ी के सकारात्मक, नकारात्मक हस्तक्षेप अस्वीकार्य हैं। परस्पर सम्बन्धों की विषमता, मानसिक संकट, आत्मग्लानि आदि अन्तर्विरोधों की असली नकली वास्तविकता 'अनएंडिंग सिम्फनी' की तरह है। मुक्तिबोध ने भी लिखा है कि – "पारिवारिक भूगोल और व्यक्ति चरित्र का इतिहास जिस विशाल परिस्थिति का निर्माण करते हैं, उस परिस्थिति की जांच-परख होनी चाहिए।"

'इन पेड़ों के बीच बैठना' तथा 'किसी के बारे में सोचते हुए', 'यही सुनना चाहते थे पेड़' में परिवेश प्रकृति से सम्बद्ध है। लगता है जैसे प्रकृति सम्पूर्ण मानवीय व्यक्तित्व को घेर कर खड़ी है। यहां प्रकृति सहचरी, संचालिका, आत्मीया तथा हमारे अन्त:करण का साक्ष्य है। पाठक के लिए प्रकृति का स्पर्श, रूप दृष्टि बोध बन जाता है। ऐसी रचना की ऐतिहासिक जटिलता को समझने के लिए टेक्नोलॉजी प्रदत्त चेतना पर ध्यान जाता है। यह ध्रुव सत्य है कि हम पाषाण युग की ओर वापस नहीं जा सकते। परन्तु व्यक्ति-स्वामित्व पूंजी की गतिकी अपने हित में मानव होने के अर्थ और प्रत्यय बदलने के लिए अंधकार का चक्रवात रच रही है। जैसे जार्ज आरवेल के अनुसार आर्थर कोएस्लर के उपन्यास 'डार्कनेस ऐट नून' का नायक, जिसका स्वत्व तथा अन्त:करण के पतन यह वह पाताल है जहां प्रत्येक व्यक्ति कायर, करप्ट जासूस बन जाता है।' व्यवस्था द्वारा प्रकृति के बेजा इस्तेमाल से परिवेश, पर्यावरण तथा विकास की व्यापक प्रक्रिया का परिप्रेक्ष्य बदल दिया गया है। इसके विपरीत नवल जी के अवचेतन में शायद ऐंगेल्स की निम्नलिखित उक्ति प्रभावरूप में रचना-प्रक्रिया में झलकती है – 'स्वतंत्रता आवश्यकता की अनुभूति है। इस तरह स्वतंत्रता, प्राकृतिक नियमों से स्वाधीन हो जाने के स्वप्न में निहित नहीं है, बल्कि वह इन नियमों के ज्ञान में तथा इस ज्ञान की सहायता से इन नियमों से निश्चित उद्देश्यों के लिए सुनियोजित ढंग से कार्य करने की जो संभावना पैदा होती है, उस संभावना में निहित है। यह बात बाह्य-प्रकृति के नियमों के लिए भी सच है और उन नियमों के लिए भी, जो खुद मनुष्यों के शारीरिक तथा मानसिक अस्तित्व पर शासन करते हैं। इच्छा की स्वतंत्रता का अर्थ विषय के ज्ञान के आधार पर निर्णय करने की सामर्थ्य के सिवा और कुछ नहीं है।' (ड्यूरिंग मतखंडन पृ. १८३)

'तलपट' में संवेदनात्मक संघात परस्पर सन्दर्भ से जन्मी पीढ़ीगत भेदपरक पहचान की स्थिति, मन:स्थिति की प्रक्रिया का केन्द्र बन जाता है। इस प्रविधि द्वारा कविता अपने औचित्य और वैधता का प्रमाण भी उसी से हासिल कर लेती है। इस बुनावट में आवेश निर्वैयक्तिक होकर इतिहास का आन्तरिक तर्क बन गया है। क्योंकि पाठक सामाजिक विकास, उसके वस्तुगत अन्तर्विरोधी ढांचों में अर्थों की नयी पहचान पा जाता है। सूत्र रूप में समय के द्वन्द्व में काल की मीमांसा की गयी है।

'नाम म्यों हो रेंगे क्यो' में सूक्ष्म प्रेक्षण द्वारा कवि ने मानो पाठकों के सामने अनुभूति की भाववाचक व्याख्या उपस्थित कर दी है। भाववाचक इस अर्थ में कि पाठक भाषा को दृश्य में रूपान्तरित कर देता है।

'कम्पमान है सब कुछ / पर नहीं खिले हैं लाल-लाल फूल / इस पेड़ की डाली पर / जो थे भी / वे शायद कभी के झर चुके हैं / उगने और झरने का / होने और न होने का / एक संगीत है।'

यहां प्रकृति-संकेत सहज और क्रियात्मक है। इस कविता के शीर्षक में 'क्यों' का सन्दर्भ कारण, अनिवार्यता तथा आशय के प्रति सचेत करता है। कवि ने पाद टिप्पणी में चिन्हित किया है कि 'बौद्ध भिक्षु

निचिरेन कामंत्र' (इस कविता का शीर्षक) - जिसका अर्थ है 'I dedicate my life to the mistic law of cause and effect' मिस्टिसिज्म उस युग की सीमा थी इसके अतिरिक्त निचिरेन द्वन्द्ववाद के आधार पर कार्य-कारण और अन्त:क्रिया पर जोर देते हैं। नवल जी ने लिखा है –

'उगने और झरने का
होने और न होने का
यह संगीत है।'

यानी केवल गति ही शाश्वत है। पदार्थ के बिना गति के बारे में सोचा ही नहीं जा सकता। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के नियमों में 'निषेध के निषेध' के अनुसार गति की प्रक्रिया में वस्तु का उद्‌भव होता है। वह विकसित होती है। फिर नष्ट हो जाती है या दूसरे रूप में रूपान्तरित हो जाती है। (यद्यपि बौद्ध धर्म के भाष्य में विद्वानों गहरे मतभेद हैं)।

तब की बात

■

यह तब की बात है
जब जामुन का पेड़
अपने रसीले जामुनों से
आने-जाने वाले लोगों पर
अपना प्यार बरसाया करता था

उस वक्त
झील के पानी पर पड़ने वाली परछाइयों से
दरख्तों की पहचान को
और पंछियों की उड़ान को
बेहद आसानी के साथ
अलग-अलग किया जा सकता था

वे दिन
उजले, चमकदार और
आशा-भरे रसदार हुआ करते थे

लोगों के बीच
अखबारी सुर्खियों से ज्यादा
अपने गली-मुहल्ले की परेशानियों का हल
ढूँढने की चिन्ता हुआ करती थी

लोग अपनी क़दकाठी से ज़्यादा
अपनी नेकनामी से जाने जाते थे
लुच्चे-लफंगे
बस्तियों के पार
भुतहे मकानों की तरह
कुछ-कुछ अस्पृश्य
डिस्कार्डेड माने जाते थे

बारिश
सभी बस्तियों को
एक साथ भिंगोती थी
और जब कभी
बाढ़ की तबाही मचती
उससे दो-दो हाथ होने के लिए
हर नौजवान तैयार रहता था

और यह भी
उन दिनों की बात है
कि बिना किसी ईश्वर या धर्म को
बीच में लाए
छोटे-मोटे झंझट-झगड़े
मुहल्ले के बुजुर्ग
बड़े आराम से

हुक्के की गुड़गुड़ाहट के साथ
सुलझा दिया करते थे

अब, जब नये-नये नौजवान पूछते हैं
कि यह किस ज़माने की बात है
तो उनको जवाब देने वाले लोग
धीरे-धीरे कम होते जा रहे हैं

अब, जब
हर आने वाला दिन
बीते हुए दिन की नींव पर खड़ा होता है
तो उसे यह यकीन तो होना चाहिए
कि वह
पिछले दिन से भी ज़्यादा पुख्ता होगा!

•

तल-पट

■

घर से शुरू हुई थी मेरी यात्रा
और आज भी हूँ मैं
उसी रास्ते पर

मेरी स्थिति उस आलू की तरह है
जो किसी भी सब्जी के साथ
आसानी से बनाया जा सकता है
कभी-कभी
हाँ, कभी कुछ खास अवसरों पर
आलू का स्वतंत्र अस्तित्व होता है
आलूदम की तरह
लेकिन ज़्यादातर उसकी भूमिका
दोयम दर्जे की होती है

क्या मेरी स्थिति
एक साथ शोचनीय और सुखदाई नहीं है!

ऐसा नहीं कि अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ
या किसी पर भी, किसी भी रूप में भार हूँ?

कभी-कभी लगता है
कि मैं एक ऐसे फर्नीचर की तरह हूँ
जो ओल्ड फ़ैशन्ड है
या ज़्यादा स्पेस घेरने वाला
क्योंकि
नयी पीढ़ी के लिए
पुरानी पीढ़ी हमेशा डिस्कार्डेड फ़र्नीचर
की तरह होती है

असल में,
मामला क्लैशेज़ आफ़ सेंसिटिविटीज़ का है
आप उसे क्लैशेज़ ऑफ़ प्रेफरेंसेस भी कह
सकते हैं

लेकिन वह निश्चित तौर पर
क्लैशेज़ ऑफ़ वैल्यूज तो बिल्कुल नहीं है
क्योंकि हर अगली पीढ़ी
पिछली पीढ़ी की नज़र में डी-वैल्यूड़ होती है
और नयी पीढ़ी एकदम खड़ूस-बकवास
छकड़ा गाड़ी ढोने वाली
पूरी शिद्दत के साथ महसूस करता हूँ
कि मैं
निश्चित तौर पर गोधूलि का सूर्य नहीं हूँ
लेकिन मध्याह्न का मार्तण्ड हूँ
यह भी तो नहीं कहा जा सकता!

दरअसल
मैं काल की गति का बैरोमीटर हूँ
अपने शरीर की माँसपेशियों में
काल की गति को पढ़ सकता हूँ

बड़ी तेज़ी से वर्तमान अतीत बनता जा रहा है
और जो भविष्यत् जैसा कुछ है
वह सोचा तो जा सकता है
लेकिन महसूस नहीं किया जा सकता

यानी
हमारा जाना हुआ तो अतीत है

और जानने लायक भविष्य
तब फिर वर्तमान!
वह क्या कभी था ही नहीं?

यह किसी वेदना की तरह है
जिसे समझाने के लिए
अलग-अलग
भिन्न-भिन्न बिम्बों-प्रतीकों के ज़रिए
बताया तो जा सकता है
लेकिन उसका अहसास नहीं कराया जा सकता
यह अन-एंडिंग सिम्फ़ेनी की तरह है
जो लगातार बज रही है
या कुम्हार के लगातार चलते उस चाक की तरह
जो घूम रहा है
घूम रहा है
और नए-नए आकार ग्रहण कर रहा है।

इन पेड़ों के बीच बैठना

■

इन पेड़ों के बीच बैठना
या इनमें से किसी एक की छाया का सुख पाना
एक अपरिचित आत्मीयता को पाने जैसा है
मानो
आप किसी लम्बी निरुद्देश्य यात्रा पर निकले हों
थक-हार गए हों
कहीं-कभी निराश भी हुए हों
तब कोई अनजान आदमी
आपको
अपनी आत्मीय मुस्कान से दिलासा दे
इन पेड़ों के बीच बैठना
कुछ-कुछ वैसा सा है

यह कुछ वैसा सा भी है
जब कभी
लगातार बारिश हो रही हो
रास्ते दूर-दूर तक डूब गए हों
घटाटोप अँधेरा हो
अचानक गड़गड़ाहट के साथ
उभरती बिजली की चमक में
कोई दरवेश
आपको रास्ता बता दे
तो इन पेड़ों के बीच बैठना
कुछ-कुछ वैसा सा है
जिस टूटी सीमेंटी बेंच पर
मैं बैठता हूँ
उसने मानो मुझसे कहा है
देखो! जिस जगह तुम रोज़ बैठते रहे हो
उसी वेला, उन्हीं क्षणों
यहाँ कोई नहीं बैठा
यह सुबह तुम्हारे इन्तज़ार में थी पिछले दिनों!
उसी की अजानी लय से सब बँधे हैं।

क्या तुम्हें पता है
कि यहाँ की घास-फूस
फूल-पत्ती-पेड़
उन पर छाया आकाश
या उनसे गुजरती हवा
या यह धरती
जिसकी कोख से ये सब निकले हैं
क्या तुम्हें पता है
कि यह अजानी लय
अपनी सुवास में
उन सबको यकसाँ बनाती है
जो भी इस धरती की उपज हैं

इस पेड़ को देख रहे हो न!
जिसकी झालदार पत्तियाँ हैं
और वह दूसरा पेड़
जिसकी गहरे रंग की पत्तियाँ
तुम्हारे सिर को छू रही हैं

कुछ घट जाता है!
बारिश लगातार हो रही है
लेकिन उसका ज़ोर वैसा नहीं है
जैसा कि कुछ देर पहले तक था

लगातार सब कुछ
एक समान नहीं होता
न तोड़ देने वाले दुख
न आराम पहुँचाने वाले सुख

दुख-सुख की भी
एक खास कनसिस्टेंसी होती है
उससे पड़ने वाले प्रभाव की भी
उसके बारे में सोचते हुए
मेरे सामने एक रंग-बिरंगी चिड़िया का अक्स
उभर आता है
जो बन-सँवर कर
हर बार एक अनजान दिशा में उड़ चलती है
और बेचैनी भरा सुख पाकर
शाम तक लौट आती है

नई-नई खोज में
उसकी उड़ान
हमेशा कुछ कर गुज़रने का जज़्बा
उसे लहुलुहान कर जाता है
और उसे तिक्त व करुण बनाता है

जो जितना आहत होता है
वो दूसरों को
उससे ज़्यादा आहत कर जाता है
कभी घृणा उड़ेल कर
कभी कृपा बिखेर कर।

•

कविता मुझको माँज रही है

इस कठिन समय में

■

इस कठिन समय में
जब तुम्हारे पास
कागज की नाव जैसी उम्मीद हो
कैसे पार करोगे तूफानी नदी को ?

भले ही तुम्हारे दिल में है
हौसलों की बुलन्दी
लेकिन कैसे बैठ पाओगे कागज की नाव में ?

भले ही तुम्हारे बाजुओं में है
बेपनाह ताकत
लेकिन कैसे खे पाओगे कागज की नाव को ?

इरादों की पुख्तगी
छू तो सकती है आसमानों को
पर दूरियाँ तय नहीं कर सकतीं।

आवाजें
जगा तो सकती हैं वीरानों को
लेकिन छायादार दरख्त नहीं बन सकतीं !

जिंदगी एक अबूझ पहेली है, मेरे हमसफर !
जिसे धीरज से समझा
और पार किया जा सकता है
कागज की नाव के सहारे भी !

हर करिश्मा
छिपा है आदमी के मुसलसल धीरज में।

१७ अप्रैल २० ९:१७ ए.म.

गुजार दिया अपना कीमती वक्त

■

गुजार दिया अपना कीमती वक्त
दूसरों के दोष ढूँढ़ते बिना वजह !

जबकि देख सकता था
सुबह के रंग
सुन सकता था
हवा की तान - तरंग !

कर सकता था दोस्ती
झरनों से
नदियों से
धरती की हरियाली से !

पूछ सकता था
पेड़ों का हाल - चाल !

बाँट सकता था
पशु - परिन्दों का सुख - दुख !

घूम टहल सकता था
अपने पड़ोसी का हाथ थामे।

कर सकता हूँ
क्या - क्या
यह भी तो तुम से ही पता चला मुझे।

तुम न आती मेरे जीवन में
तो मैं खुद से ही
अनजान बना रहता, प्रियम्वदा !

प्रेम
अपने होने का होना बताता है !

१६ मार्च२०, ११:२८ ए.एम.

नाखूनों को तराशते हुए

■

नाखूनों को तराशते हुए
एक बात साफ हुई
कि प्यार करने के लिए
आदमी का जिन्दा रहना बेहद जरूरी है !

फूलों की खूबसूरती
उनकी डालों पर लगे रहने से है
दरया की तन्दुरुस्ती उसकी लहरों से
आसमान की पहचान पंछियों की उड़ान से

ज़मीन की सलामती पाँवों की मजबूती से
और इश्क की गहराई इन्कार से!

नाखूनों को तराशते हुए
दरिंदगी को शिकस्त दी जा सकती है
कि प्यार करने के लिए
आदमी का आदमी बने रहना बेहद ज़रूरी है!

मुहब्बत की शिद्दत
बिछड़ने से पता चलती है
अपने वजूद की
कुछ कर गुजरने से
तबाही की
अपना कुछ गँवा बैठने से
दूसरों के दर्द की
तन्हाई से
और आँखों की
अंधा हो जाने से।

नाखूनों को तराशते हुए
एक बात साफ हुई
कि उनका होना ज़रूरी है
उनका बढ़ जाना उतना ही गैरज़रूरी
और यह सब सोचना
आदमी होने के लिए बेहद ज़रूरी है!

१३-३-२० ७:२ ए.एम.

धरती की परत दर परत

■

धरती की परत दर परत
पहचान लेता है किसान
माटी की परत दर परत
सूँघ लेता है माली
चमड़े की परत दर परत
सहला लेता है मोची
काठ की परत दर परत
जान लेता है बढ़ई
वैसे ही पत्थर में
देख लेता है आकार कोई शिल्पी
रंगों से क्रिएट कर देता है एक नया सृजन
गायक / संगीतकार
पर तुम कैसे रच लेते हो कविता, हे कवि?

हर एक का दुख
बयाँ कर जाते हो
जो नहीं है, उसे बताते हो
और जो है, उसे समझा जाते हो।

१८ अप्रैल२०२०

झरबेरी जैसी परतें होती हैं मन की

■

झरबेरी जैसी परतें होती हैं मन की
काँटेदार, बिना काँटें वाली
गुंथी-गुंथी, खुली-खुली

हम खुद को ही कितना पकड़ पाते हैं
और जितना पकड़ पाते हैं
उतने तो नहीं होते हैं हम!

ऐसे ही नहीं तुलना की गयी
मनुष्य-मस्तिष्क और ब्रह्मांड की।

सारा ज्ञान-विज्ञान
कितनी आसानी से समझा देता है हमारे अज्ञान को।

यूँ ही नहीं कहता कि
हम सब को भरपूर जीना चाहिए
अपने प्रत्येक क्षण को
बिना तर्क - वितर्क में गँवाए।

सच्चाई की राह
बताने वाले तो बहुत होते हैं
दिखाने वाले और कम
चलने और चलाने वाले उनसे भी कम।

जिसको जीने की तमन्ना हो
उसको अपने हिसाब से जीना चाहिए

और जो नहीं जी पाता
वह खुद-ब-खुद भेड़ बन जाता है।

कुछ ज्यादा चतुरीलाल भेड़िया
कुछ ज्यादा होशियार तिजारती
और फिर तो
सबके दिमाग में पासंग मारती रहती है तराजू ही!

तराजू के पलड़े
बँधे रहते हैं नफा नुकसान से
मुहब्बत का तो
कभी - कभी झोंका आता है
जो सदियों में एक बार
हिला देता है पलड़ों को हल्के से

१९ अप्रैल २०२०

मजहब, मुहब्बत

■

मजहब, मुहब्बत
और खुदा के मुहावरे को
दोहराते हुए
हम लहुलूहान हुए जा रहे हैं
और जिन्दगी हमारी पकड़ से बाहर

मुहब्बत के बारे में
अब सिर्फ सोचा जा सकता है
मजहब से
फिरकापरस्ती बोई जा सकती है
और खुदा को
सिर तोड़ने वाले पत्थर की तरह
इस्तेमाल किया जा सकता है

मौत का खौफ़
बुजदिलों को होता है
या बहादुरों को
यह एक बहसतलब बात है
जैसे किसी खुदा ने
यह पूरी कायनात बनाई
और उसकी मर्जी के बिना
पत्ता तक नहीं हिलता
जैसे मुहब्बत में
वफ़ा रंग घोलती है या बेवफाई
और मजहब
उस पर बिना यकीन किए
आप घंटों बहस कर सकते हैं

मुहावरे आर्किटेक्चर का काम करते हैं
और हम तमाम उम्र खुद को
उनमें फिट बैठाते रहते हैं
कभी दरवाजों की जगह
कभी खिड़कियों की तरह
कभी चबूतरों, दालानों
सीढ़ियों की तरह

ज़िंदगी और वक्त
वक्त और ज़िंदगी
एक दूसरे के मोहताज हैं
और हम साँस लेते हुए भी
इन दोनों से परे
मुहावरों में जीने की आदी

९ मार्च २०

तुमने जैसा चाहा है, मैंने वैसा ही किया है

■

तुमने जैसा चाहा है, मैंने वैसा ही किया है
अपने खून की लाली को सूरज को सौंप दिया है
तसव्वुर को हवा के
उड़ान को आसमान के
हलचल को लहरों के
और गर्मजोशी को आग के हवाले कर दिया है!

x x x x x x x x x

आज अन्तर्राष्ट्रीय नारी दिवस पर
तुमको याद करते हुए
विश्व की तमाम नारी शक्ति को समर्पित

८ मार्च२०१८

क्या तुम्हें पता है

■

क्या तुम्हें पता है
कि मेरे - तुम्हारे बीच
एक दीवार बन गयी है तुम्हारी नाक
और तुम जानती हो
कि विन्ध्याचल पर्वत
पार करना तो आसान है
लेकिन नहीं है आसान
तुम्हारी नाक पर बैठे
एक हिमालय को पार करना!

हालाँकि तुम्हारी हँसी
तुम्हारी नाक पर
एक हरी - भरी वादी भी उकेर देती है
उकेर देती है एक रात
असंख्य स्वप्न - तारों को संजोती हुई।
लेकिन सूरज की रक्ताभ किरण
तुम्हारी नाक को छूकर
मध्यान्ह के तीखेपन को छू देती है।

हम सभी
अपनी - अपनी नाक से
कभी न कभी परेशान होते हैं
बावजूद अपनी जानकारी
और अज्ञान के।

तुम्हारे चेहरे को
सुडौल बनाती है तुम्हारी नाक
लेकिन वह मुझे कभी - कभी
ऐसे बन्दरगाह की तरह लगती है
जिसका छिछला पानी कीचड़ भरा हो
और जो स्वप्न सम्भावनाओं से लदे
जहाज को अपनी शरण में न ले सके!

मेरी हथेलियों पर
तुम अपना दर्द, पराभव
और जीतने का दम - खम
एक साथ रख दो
तो मैं तुम्हें
तुम्हारी अपनी कैद से
मुक्ति दिला सकता हूँ
और यह नाक
जो मेरे - तुम्हारे बीच
एक दीवार की तरह खड़ी है
एक पुल में बदल सकती है
जिसके सहारे हम एक - दूसरे के पास
बेखौफ़ आ - जा सकें।

मेरे प्यार!
नाक का खूबसूरत होना बड़ी नेमत है
लेकिन प्यार में उसका ऊँचा होना
चीन की दीवार से कम नहीं।

क्या तुम उसे
पुल में तब्दील होने दोगी?

६ मार्च २०१७

तुम कौन हो

■

तुम कौन हो
कभी
तुमने यह जाना?

तुम तो
दूसरों की नजर में ही
खुद को
पहचानते रहे।

५ मार्च२०१७

तुम्हारा सच

■

तुम्हारा सच
सिर्फ तुम्हारा है

यह ज़रूरी नहीं
कि उसे लोग
अपना ही मान लें।

५ मार्च २०१७

तुम मुझे निर्वासित यक्षिणी की तरह लगती हो

■

तुम मुझे
निर्वासित यक्षिणी की तरह लगती हो
अपनी अपराजित देहयष्टि की
ओढ़ी गयी मर्यादा में
एक संकोचभरा कौतूहल
तुम्हें मेरे पास लाता तो है
पर सहमा हुआ संस्कार
तुम्हें तुम्हारे आत्मनिर्वासन में
फिर अकेला छोड़ जाता है।

हमारी दुनिया के सच
फरेबदार झूठ की तरह होते हैं
जो अपनी मंजिल तक पहुँचने से पहले ही
दम तोड़ लेते हैं
और हमारे अपने विश्वास इतने खोखले
कि उन्हें किसी खूँटी पर टाँगकर
सजावट का काम भी नहीं लिया जा सकता।

अपनी ही मान्यताओं से
लहुलूहान हो चुकी तुम्हारी आत्मा
तुम्हारी कान्तिमान देह में रहते हुए
तुमसे कितनी बार तकरार करती है
क्या तुम्हें इसका अहसास नहीं?

गैरजरूरी बोझिल वाक्यों से खुद को थका कर
जब तुम खुद को नींद के हवाले करती हो
तब भी क्या तुम सच में सो पाती हो?

बारिश की तेज बौछार
और हवा के बेतरतीब झोंके
तुम्हारे भीतर
यौवन भरी लहर पैदा करते हैं
लेकिन तुम हो कि अपनी झुँझलाती हुई जिद में
अपने जुड़े को बाँध
अपने केशों को
आकाश में बिखरने से रोक लेती हो!

यह कैसा नियन्त्रण है
जो तुम्हें विजयी बनाकर भी
तुम्हें ग्लानि - बोध देता है
क्या तुम इससे मुक्त होने की बात नहीं सोच पाती?

एक बार मेरी हथेलियों पर अपने हाथ रखो
एक बार अपने हाथों में मेरे हाथ को भरो
एक बार अपनी आँखों से मेरी नजर को देखो
एक बार मेरी आँखों में
अपनी नज़र को डुबकी लगाने दो
एक बार अपनी आग को
मेरी आग में समाने दो
एक बार मेरी आग से
अपनी धड़कनों को सुलगने दो
एक बार, सिर्फ एक बार
बस एक बार
अपने अबोले चुम्बनों से
अपना नया संस्कार गढ़ने दो
तब तुम्हें पता लगेगा
कि फरेबदार झूठ भरी इस दुनिया में
एक सच ऐसा भी होता है
जो आदमी को मुकम्मल बना सकता है।

२५ फरवरी

तुमने तो थोड़ा सा ही सच बोला था, मृत्युंजय

■

तुमने तो थोड़ा सा ही सच बोला था, मृत्युंजय।
और लोग तुमसे कतराने लगे थे
बावजूद तुम्हारी भलमनसाहत के!

दरअसल जिस सच की बात
हम करते है

वह कलाइडोस्कोप की तरह होता है
हर देखनेवाला
उसको अपने एंगल से ही देख-समझ सकता है।

हमारे परसेप्शन और कन्सीव करने में फर्क होता है
हमारी अप - ब्रिंगिंग की वजह से!

यही नहीं
हमारे रिएक्शन्स तक गवर्न होते हैं
हमारे एटीट्यूड की वजह से।

तुम जो बात कहना चाहते थे
वैश्वानर या प्रेतपत्तनम् के ज़रिए
वह क्या वैसी ही समझी गयी!

एक महान रचनाकार का दुख
यही तो होता है
कि उसे वैसा नहीं समझा गया
जैसा वह ख़ुद को समझता है!

इन्सानी मैकेनिज्म और नेचर के
मैकनिजम में यही समानता है
कि हम जितना समझ पाते हैं
उससे कहीं अधिक छूट जाता है!

इसलिए तुम्हारे आत्मोपनिषद् को
जितनी बार पढ़ता हूँ
उतनी बार वह नया अर्थ देता है!

एक महान रचनाकार
हमेशा होता है इन प्रासेस
नये दिन की नयी सुबह की तरह!

तुम्हारे बारे में जब जब सोचता हूँ, मृत्युंजय!
मैं भर जाता हूँ इसी आनन्द से।

रचनात्मक आनन्द से बड़ा
कोई आनन्द नहीं है।

१० मार्च २०, १२:२० पी.एम.

●

आनन्दधारा बहिछे भुवने

■

आनन्द मोहन!
अभी - अभी देखी है तुमने
कोपाई नदी
और उसके पहले नदी खाई
जो यूकेलिप्टस के पेड़ों - पठारों में
हो गयी है गायब
कहीं तो होगा उनका उद्गम।

यह आनन्दधारा
जो शान्तिनिकेतन की हरीतिमा के ऊपर,
छाए निरभ्र नीलवर्णी आकाश में है
आई होगी कहीं से
रवीन्द्रनाथ के मन में!

पता लगाओ, आनन्दमोहन
इसके उद्गम का पता लगाओ!

देखो!
वह उतरी है आकाश से गंगा की तरह
जिसके उद्दाम प्रवाह को
शिव ने रोक लिया है अपनी जटाओं में
वह बह आई है रवीन्द्रनाथ तक
जिसे उसने शान्तिनिकेतन में
चारों तरफ फैला रखा है।

अभी - अभी वही आनन्दधारा
पा गयी है विस्तार
आरती सिकदार के बाउल गान में
सतीश जायसवाल की
पीली चिड़िया वाली कविता में।

आनन्द मोहन!
श्यामाश्री की कविता के भीतर बह रही है आनन्दधारा
उसकी करुणा और सरलता के वेग को
कैसे झेल पाएगा कोई पुरुष
जो पार्थिवता में सौंदर्य खोजा करता है।

कंकाली काली मन्दिर के पास
बिखरी पड़ी है लोगों की समाधियाँ
उसी के ताल में सती की अस्थि है
कहते हैं, जिसके ताल का पानी आजतक सूखा नहीं।

आनन्दमोहन
श्मशान के ऊपर फैले आकाश को देखो!
देखो वृक्षों की छूती हवा की लहर को
सुनो आनन्दमोहन
आनन्दधारा के नि:शब्द प्रवाह को सुनो
वह पसरा बन पड़ा है खेतों में
धान रोपती हुई औरतों के हाथों और घुटनों में
वह मिल सकता है
लीलावती की चाय दूकान की घुघनी - आलूचाप में

सरज - सहज लोगों की पीड़ा दुख-दर्द में भी
होती है आनन्दधारा
जो उनके भोले सपनों-सुखों में बोलती है!

आनन्दमोहन!
आनन्दधारा तो सभी जगह है
पेड़ों से घिरे मैदान में भी
जहाँ बच्चों की नन्हीं पग-ताल पर
थिरकता हुआ पौधा
पालकी में सजा-धजा
पहुँचता है वृक्षारोपण के उत्सव में!

किसी कवि के देहावसान का
ऐसा रूपान्तरण देखा है तुमने?

वह समापन का प्रेमारम्भ है, आनन्दमोहन
जो जीवन को मृत्यु से श्रेष्ठतर सिद्ध करता है
सिद्ध करता है मृत्यु के बाद
जीवन के अनन्त क्रम को
ऐसे ही नहीं लिखा था रवीन्द्रनाथ ने
आनन्दधारा बहिछे भुवने!

वही आनन्दधारा बह रही है
तुममें, मुझमें
हमारे उल्लास-परिहास में
हमारे भीतर-बाहर
हमारे आस-पास में!

ओस की बूँद की तरह उभरता है शब्द
और फूल वर्णमय होने लगते हैं
खुलने लगते हैं अर्थ
हरी घास या पेड़ों की फुनगियों पर
चमकते हुए!

आनन्दमोहन!
अकातर होने की स्थिति है आनन्द
जैसे शब्द
अपना सही संदर्भ पाकर
हो उठता है अर्थवान
जैसे वन-वनस्पतियों का नाम बताती हुई
निहारिका शब्दमय बन जाती है
जैसे कविता सुनाती हुई श्यामाश्री
बन जाती है गंगोत्री की वेगवती लहर
जैसे सिद्धेश की निस्पृह चुप्पी को
अर्थ देती है उसकी मुस्कान!
ओस की बूँद है
जो हम सबको देती है एक पहचान!

यह क्षण-संयोग है आनन्दमोहन
कि यूकेलिप्टस की सीधी कतार की आड़ में
एक प्रेमी अपनी प्रेमिका को देता है प्रदीर्घ चुम्बन
खुले आकाश और धरती के विस्तार को
ठेंगा दिखाता हुआ!

क्षण सम्भावना को जीती हुई
कोई कविता - पंक्ति
कालातीत भी हो सकती है, क्षणभंगुर भी!

आनन्दमोहन!
हृदय - विस्तार का दूसरा चरण है
ओस का कमल - ताल पर
परियों की तरह उतरना

और उन्हें ऐसा रूप-विधान देना
जहाँ कवियों की कल्पना
पा जाती है अपना आकार!

आनन्दमोहन!
तुम्हारी पलकों पर कविता
झूला झुलाती हुई
तुम्हें सुला रही है
और मैं तुम्हें वैसे देख रहा हूँ
जैसे कोई टूटते हुए तारे को देखता है
और दुआ माँगता है।

तुम्हारी पलकों पर ठहरी हुई नींद
मेरी कविता की आश्वस्ति है, आनन्दमोहन!
जिसे कल बिना जगाए उठना है
और आनेवाले कल को भरपूर जीना है।

कविता वेगवान नदी की तरह होती है
जब उमड़ती है
तो शब्दों के सारे व्यवहृत अर्थ
बहा ले जाती है।

बहा ले जाती है सारी वर्जनाएँ
सारे प्रतिबन्ध, सारी मर्यादाएँ
सब के सब बह जाते हैं
उसके उद्दाम प्रवाह में।

बाउल गीत की तरह
बौरा जाती है कविता
वह अपना अमर्यादित संस्कार-संसार
पा जाना चाहती है।

हृदय से नाभि तक
उमड़ती हुई उसकी ऐंठन
पाना चाहती है अपना सम्पूर्ण आकार
तब कैसे संस्कारित करेगा
तुम्हारे नपे-तुले संस्कार का व्यामोह
कैसे रच पाएगा उसका प्रतिमान!

आनन्दमोहन!
अनगढ़ प्यार की तरह होता है उसका व्याकरण
जो किसी तटबन्ध को नहीं चाहता
वह तो उस मछली की तरह होता है
जो धारा के विपरीत जाकर
अपना माथा फोड़ लेती है!

आनन्दमोहन!
बैचेनी की सृष्टि करता है बाउल गीत
जहाँ आग शान्त होने की जगह
अधिक भड़कती है
और अपने आस-पास बने संयोजन को
जला डालती है!

आनन्दमोहन!
शान्तिनिकेतन एक बाउल गान है
जिसकी नियति
सुनसान वादियों में गूँजना है
गूँजते रहना है
और उन्हें प्रशान्ति देना है
जिन्हें प्रेमाग्नि बार-बार जलाती है।

१९ मार्च ८:३५ ए.म.

•

प्रियम्वदा शक्ति का नया अवतार है।

प्रियम्वदा

बच्चों की हँसी को बचाना है, प्रियम्वदा!

■

बच्चों की हँसी को बचाना है, प्रियम्वदा!
बचाना है उसके दुधमुंहे भविष्य को
अगर तुम साथ नहीं दोगी
नहीं दोगी दिशा-निर्देश
तो कैसे दिख पाएगी सही राह
अंधकार में डूबे इस विभ्रमित संसार को
जो त्राण पाने के लिए भटक रहा है
राह दर राह!

कभी इस सम्प्रदाय विशेष की
कभी उस सम्प्रदाय अशेष की
कभी इस विचार सरणी की
कभी उस विचार-वैतरणी की

मजा तो यह है प्रियम्वदा!
हर विचार-सरणी या सम्प्रदाय
मनुष्य के हित के लिए तो था बना
किन्तु वही गौण हो गया वर्चस्व की लड़ाई में!

यहीं से शुरु होती है
तुम्हारी सचेतन भूमिका
यहीं से प्रारम्भ होता है तुम्हारा भिन्न स्वरूप!

प्रेम जब अपनी पराकाष्ठा पर होता है
मशाल बन जाया करता है!

प्रियम्वदा का होना एक वर्चस्वहीन समाज का होना है, जिसमें किसी भी प्रकार के भेद-भाव के लिए कोई स्थान नहीं। उसकी उपस्थिति आश्वस्त करती है कि बच्चों का बचपन और हँसी किसी वंचना का शिकार नहीं होगा। वह उनको बचायेगी और बचायेगी हर दूधमुंहे बच्चे का भविष्य। वर्चस्व के प्रतिकार और प्रेम की प्रतिष्ठा में ही है उसकी सचेतन भूमिका।

चलो यही सही

■

चलो यही सही
तुम जिस तरह भी बैठो-उठो
कोई सी भी मुद्रा बनाओ
लिख दूँगा कविता!

अब तो इतना रम गया हूँ तुममें
कि बिना देखे भी जान सकता हूँ
तुम्हारी कौन सी अँगुली पर
कोना सा कोना है आकाश का
कि तुम्हारी किस पग थाप पर
कौन सा वाद्ययंत्र बजने को है
और तुम्हारी करधनी पर
आलोड़न है कौन से स्वर का!

देखती तो आँखें वे हैं
जिसे देखना चाहता है मन
और संयोग उसका घटता है
जो बिंधा होता है अदम्य इच्छा से।

तुम्हारे भ्रू-विलास का ध्यान करते ही
कितनी रागिनियाँ निबद्ध हो जाती है
इसमें मेरी कल्पना का कोई योगदान नहीं
क्योंकि तुम जो चाहती हो
वही सोच पाता हूँ मैं
और जो सोच पाता हूँ
घटने लग जाता है प्रकारान्तर से वही!

यह काया-प्रवेश नहीं, मानस-मन्थन है
प्रियम्वदा!
कि हम दोनों महाकाल के वे बिन्दु हैं
जिनसे विस्तार पाता है घटना-चक्र
और ग्रहण करने लगता है
सम्भाव्य अपना आकार!

हम दोनों ही शक्ति केन्द्र हैं
केवल तब तक हैं नर-नारी
जब तक नहीं उतार फेंकते अपनी काया केंचुल!

हमारी यात्रा
बिना किसी आरम्भ से है

और जिसका
आरंभ नहीं
उसका अंत कैसे हो सकता है भला।
इसलिए प्रेम अनादि और अंतहीन है, सखी!

प्रियम्वदा की हर मुद्रा पर मोहित है कवि। उसकी देह की हर भंगिमा प्रत्यंचा है और कामनाएँ धनुष जिनसे कवि विद्ध होता है, उत्तापित होता है। प्रियम्वदा में रचा बसा वह उसके हर हाव-भाव से परिचित है। वह हर इंगिति और ध्वनितंत्र को देखे बिना पढ़ना जानता है जैसे वह प्रियम्वदा के सम्मोहन का विस्तार हो।

प्रियम्वदा और कवि कायागत रूप में स्त्री-पुरुष हैं। वे अविरल शक्ति का केंद्र है। अविरल शक्ति का केंद्र महाकाल और महाकाली है जो कालचक्र की अनंत यात्रा में अजस्र प्रेमको आकार और विस्तार देते हैं।

कभी-कभी मैं सोचता हूँ

■

कभी-कभी मैं सोचता हूँ
कि तुम्हें होना चाहिए समुद्र की तरह
जिसके भीतर एक करिश्माई संसार है
है हैरत अंगेज़ पेड़-पौधे
जीव-जन्तु
और हैं कुछ ऐसी चट्टानें
जो पहले कभी वनस्पतियाँ थीं
जीवित जलचर थे
समय पाकर बदल गए चट्टानों में!

समय पाकर बदल जाता है बहुत कुछ
हमारी परिस्थितियाँ
उनसे जुड़े संवेग
और यहाँ तक कि हमारी स्मृतियाँ भी
जो हमारे वर्तमान शरीर से भी
पहले की होती हैं
जिन्हें हम कैरी करते हैं
अपने जीन्स के साथ!

क्या तुम्हें कभी नहीं लगा, प्रियम्वदा
कि हम एक-दूसरे को जानते रहे हैं
इस देह-धारण से भी पहले?

समुद्र भी
अपने अतीत का कोश है
तुम्हारे शरीर की तरह ही!

ऊपर से शांत गंभीर दिखाई देने वाले समुद्र के भीतर लाखों, जलचरों, वनस्पतियों का आश्चर्यजनक संसार है। उसकी चट्टानों में दर्ज करोड़ों वर्षों का अतीत जीवन का कोश है ठीक उन गुणसूत्रों की भाँति जिन्हें मनुष्य अपने भीतर सचेत करता आया है, करोड़ों - करोड़ों वर्षों से। गुणसूत्रों में गुंफित स्मृतियों में हम होते हैं देह धारण से पहले भी, अपने पूर्वजों में। हम उनका पुनर्जन्म है। प्रियम्वदा, तुम समय की चट्टान पर अंकित स्मृतियों को पुनर्जन्म देने वाला जीवन का एक करिश्मा हो।

दो अपना हाथ

■

दो अपना हाथ
कि तुम्हारे हाथों की ऊष्मा
बनाती है संकल्पबद्ध मुझे!

दो अपना हाथ
कि उसकी तीव्रता धधका देगी
हवन कुण्ड की शान्त पड़ी अग्नि को!

दो अपना हाथ
कि वही बन सकेगा मशाल
मुझे रास्ता दिखाने के लिए!

होऊँगा मैं तुम्हारे साथ
किसी नन्हीं कोंपल की कोमलता
बचाने की चेष्टा में!

होऊँगा मैं तुम्हारे साथ
उस घायल चिड़िया के पंख बचाने में
जो छूना चाहती है आकाश को!

होऊँगा तुम्हारे साथ
उस नदी की धारा को मुक्त कराने में
जिसे बाँध दिया गया है अकारण ही!

गाऊँगा तुम्हारे साथ
उस बच्चे के जन्म की बधाई का गीत
जिसने जन्म ले लिया बिना बधाई के!

मेरे साथ चलो
चलूँगा तुम्हारे साथ तुम्हारी छाया बनकर!

करुणा प्रियम्वदा का केंद्रीय भाव है और प्राणिमात्र के प्रति प्रेम उसी करुणा का विस्तार है। उसका साहचर्य पुरुष की प्रकृति को मानवीय करुणा से सिक्त कर अंहकार के दर्प से मुक्त करता है। वह उसका हाथ पकड़ कर उसके भीतर की ऊष्मा और तेज से अपने आप को ऊर्जस्वित करना चाहता है ताकि वह भी प्रेम और

करुणा से भर जाए और जुड़ जाए छोटे लाचार कमजोर वंचित बंदी प्राणियों के दुख से। नन्हीं कोंपल की कोमलता, घायल चिड़िया के पंखों का उपचार, नदी की बंदी धारा को मुक्त करना या फिर उस अभागे बच्चे के लिए बधाई का गीत गाने जैसे कार्य करते हुए प्रियंवदा के साथ उसकी छाया बनकर जीने की कामना कहीं नए पुरुष के सृजन का आग़ाज़ तो नहीं?

तुमने धारण कर लिया है पुष्पाकार

■

तुमने धारण कर लिया है पुष्पाकार
क्या यह बताने के लिए
कि स्त्री-देह होती है
किसी तिलस्म की तरह
पाटल-पाटल खुलती-खिलती
हर क्षण चकित करती?

इतना तो जान ही गया हूँ, प्रियम्वदा!
कि स्त्री का सौंदर्य
उसके रूप में नहीं
उसके श्वास-निश्वास में होता है!

कि स्त्री का लावण्य
उसकी त्वचा में नहीं
उसकी पदचाप में होता है।

कि स्त्री की शक्ति
उसकी मांसपेशियों में नहीं
उसके भ्रू संकुचन में होती है!

और उसका प्रेम
उसके त्याग में नहीं
उसके विराग में होता है।

पता नहीं क्या सोचकर
तुम मुझे विस्मित करती रहती हो
कि तुम्हारे बारे में सोचा हुआ हर शब्द
अपनी पहचान खो बैठता है!

तुमने धारण कर लिया है पुष्पाकार – आपकी कोई भी कविता जब पढ़ती हूँ तो उसका अर्थ बोध विस्मित कर देता है। सौंदर्य और वर्चस्व की प्रचलित धारणाओं से अलग सोच के बिल्कुल नए रूपों से रची यह कविता संबंधों का नया समीकरण है। बने बनाए ढाँचे के अनुसार स्त्री अपने दैहिक सौंदर्य से सत्ता का संसार रचती है और पुरुष पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए अक्सर अपने रंग - रूप को हथियार बनाती है।

यह कविता उन साँचों से अलग नए अर्थों से शब्द के साँचों को भरती है। तभी तो सौंदर्य चेहरे और देह में नहीं सिमटता, भंगिमाओं में नए भाव बोध भरता है। संभवत: इसीलिए शब्दों के पुराने अर्थ अपनी पहचान खोने लगते है और नई स्मृतियों का निर्माण!

जब पूरा विश्व

■

जब पूरा विश्व
एक दु:स्वप्न को जी रहा है
मैं तुम्हारा आह्वान कर रहा हूँ, प्रियम्वदा!

एकमात्र तुम ही हो
जिसको स्वत:सिद्ध है महामृत्युंजय मंत्र
आओ और पूरी तन्मयता से
उसका उच्चारण करते हुए
समस्त विश्व के परित्राण की भूमिका रचो!

रचो एक निर्णायक भूमिका
क्योंकि तुम ही पहचानती हो नक्षत्रों की गति
उनके प्रभाव - कुप्रभाव
उनकी दशा - दिशा
उनका धरती के साथ सम्बन्ध
और मनुष्य?
उसका अस्तित्व
बुदबुद के बराबर भी तो नहीं है
इस सौरमंडल में!

तुम कर सकती हो
दु:स्वप्न के भीषण मायाजाल का उच्छेदन
तुम ही दिला सकती हो मुक्ति
इस घटाटोप अन्धकार से
बचा सकती हो निरीह मनुष्यों को
उनके अकारण सामूहिक वध से!

अब तो प्रकट होकर
अपनी उपस्थिति से
आशा की किरण दिखाओ मनुष्य मात्र को!

आओ!
आओ ना प्रियम्वदा!

संकटापन्न स्थिति में जब हालात काबू से बाहर होने लगे थे, देवताओं ने देवी को असीम शक्ति और विशेष हथियारों के साथ भूमि पर भेजा था। असहाय और बेबसी में परित्राण के लिए प्रियम्वदा का आह्वान नारी के अंतर में निहित अपराजेय शक्ति के प्रति अटूट विश्वास है। स्वयंसिद्धा प्रियम्वदा मृत्यु को पराजित करने वाला मृत्युंजय मंत्र है। हर परिस्थिति में बचने और बचाने, अस्तित्व की सुरक्षा के कार्य में निष्णात है।

मृत्यु के भय से आतंकित दु:समय में वह मनुष्य के अस्तित्व का सुरक्षा कवच है। निराशा के घोर अंधकार में जलने वाला प्रकाश और शक्ति का पुंज है। पुरुष आपनी ताकत के नशे में भूल जाता है कि गुहाकाल में पशुओं एवं जीव-जंतुओं से आदि मानव की रक्षा करने वाली स्त्री ही थी जिसने निरंतर आग को जलाए रखा था।

स्त्री की उसी भूमिका और जज्बे का प्रियम्वदा में पुनर्जन्म हआ है। वह शक्ति का नया अवतार है।

प्रकृति समान होती है स्त्री

■

प्रकृति समान होती है स्त्री
एक हाथ में निर्माण
दूसरे में ध्वंस लेकर करती है नृत्य
जिसे देख विस्मय-विमुग्ध होते हैं स्वयं नटराज भी!

दरअसल
पुरा कथाओं से समृद्ध है हमारा अतीत
जब कुछ बीत जाता है
तब हम अपनी स्मृतियों को टाँग देते हैं
कभी सोने मढ़े फ्रेम में
कभी मूंज बने चौखटे में।

सबका जीवन
कथा नहीं बन पाता, प्रियम्वदा!
जिनका बन पाता है
उसके पीछे होती हैं
मूंज बुनी छोटी-छोटी कहानियाँ!

अब मुझे देखो
कितनी लहरें हैं मेरे पुरखों की
और तुम्हारे बनने के पीछे
कितनी दादियाँ और नानियाँ हैं
पीढ़ी दर पीढ़ी!

प्रेम
क्षण विशेष का वृत्तांत नहीं
उसके पीछे होता है
अदृश्य कथात्मक इतिहास भी!

प्रकृति की प्रतिकृति ही तो है प्रियम्वदा, स्वायत्त चेतना से संपृक्त। उत्पत्ति विकास और विध्वंस उसकी प्रकृति है। प्रजनन और मातृत्व उसकी मानवीय अस्मिता सबसे चमत्कृत कर देने वाल पक्ष है। जन्म स्त्री ही दे सकती है।

आख्यानों, किंवदंतियों से भरा पूरा इतिहास, अच्छाइयों और कमियों के साथ हमारे पूर्वजों ने हमें सौंपा है। मूँज बनी पुरखों की विरासत को प्रियंवदा समृद्ध करती है प्रेम से। प्रेम, प्रियम्वदा और प्रकृति सृष्टि का आरंभ है तो अंत भी। वह नई कहानियों, नए स्वप्नों, नए अर्थों से विरासत को समृद्ध करने वाली पूर्वजों की किताब है।

अब जब सूर्योदय होगा

■

अब जब सूर्योदय होगा
तो वह नहीं लाएगा केवल सुप्रभात
लाएगा एक ऐसा युग, साथ-साथ
जिसमें मनुष्य जाति
एक साथ करेगी प्रार्थना
धरती के शस्य श्यामला बने रहने की।

देशों में एक दूसरे के प्रति
वैमनस्य नहीं होगा
होगी सद्भावना
जिससे वे समझ सकेंगे
सह - अस्तित्व की बात बेहतर तरीके से।

आपदाएँ जब आती हैं
तो आती हैं
हो चुके असंतुलन को ठीक करने के लिए!

बाढ़ जब आती है
तो तहस - नहस करने के बाद
उर्वरा भी तो बना देती है धरती को।

जैसे विषाद का दूसरा पक्ष होता है आनन्द
और मनोमालिन्य का सद्भाव!

यही प्रकृति है विविधवर्णा
तुम्हारी तरह प्रियम्वदा!

२० अप्रैल २०२०

विन्दु जैसा अभास देती है

■

विन्दु जैसा आभास देती
पृथ्वी पर मैं कहाँ हूँ, प्रियम्वदा।

तुम जो मेरा हाथ पकड़
एक-एक नक्षत्र से मेरा परिचय करवा रही हो
कहाँ ले जाना चाहती हो मुझे?

क्या दिखलाना चाहती हो
धरती का नैसर्गिक स्वरूप
जहाँ मनुष्य
बिना किसी आवरण के
केवल जिज्ञासु रूप है
लिंग, वर्ण और किसी भी मान्यता से परे?

यह जानते हुए भी
कि प्रकृति के कारण
तुम स्त्री-रूप हो
और तुम से भिन्न
पुरुष-रूप में मैं!

क्या मुझे समझाना चाहती हो
कि स्त्री प्रकृति स्वरूप है
पुरुष से कहीं अधिक विकसित!

या यह बताना चाहती हो
कि "मैं" केवल भ्रमात्मक प्रतीति है
जिससे अधिक ग्रस्त होता है पुरुष ही
और स्त्री अपने गर्भाशय के साथ
दहाई की भूमिका में होती है
इकाई होते हुए भी।

तुम बहुत कुछ बता देती हो
बिना किसी भाषा का अवलम्ब लिए।
यह मात्र सुखद सुयोग है
कि मैं तुम्हारा हाथ पकड़े
नक्षत्र दर नक्षत्र पार कर रहा हूँ।

८ अप्रैल ९:५५ मिनट

टिप्पणी

श्रेष्ठता की ग्रंथि में आबद्ध पुरुष को भिन्नता के प्राकृतिक रूपों और प्रकृति के नैसर्गिक स्वरूप से रूबरू कराते हुए प्रियम्वदा उन भेदभावों का सामना करवाती है जिनको पुरुष अपनी आधिपत्य सिद्धि के लिए प्राचीनकाल से रचता रहा है। लिंग, जाति, वर्ण, नस्ल और न जाने कितने-कितने भेदों ने स्वाभाविक संबंधों को विकसित होने से रोका है।

महासागरों, महादेशों और समस्त चराचरों से युक्त विशाल पृथ्वी सौरमंडल में एक छोटे से बिंदु के सदृश दिखाई देती है। धरती पर वस्तु या प्राणी का अस्तित्व जितना काल स्थान और समाज सापेक्ष है, उतना ही स्वतन्त्र भी। प्रियम्वदा अपनी सक्रिय बौद्धिक ऊष्मा से सामाजिक निर्मितियों से उत्पन्न विभ्रमों का निराकरण करती है। स्त्री-पुरुष दोनों अपने अस्तित्व में भिन्न होने के बावजूद एक पूर्ण इकाई हैं, न कोई श्रेष्ठ है, न कोई हीन। समानता के पाठ का विखंडन है प्रियंवदा।

तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब हूँ मैं, प्रियम्वदा!

■

तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब हूँ मैं, प्रियम्वदा!
जब - जब सोचता हूँ तुम्हारे बारे में
अपना ही तो अक्स पाता हूँ हर बार!

अब तक दिखती थी तुम मुझको आकाश में
झील के पानी में प्रतिबिम्बित होकर
आजकल दिखने लगी हो किताबों की अलमारी में
किचेन में पानी उबालते वक्त भी
यहाँ तक कि नहाते
तौलिए से बदन सुखाते
दूध गर्म करते
और उसमें उबाल के आने तक!

पता नहीं यह
तुम्हारे प्रति मेरा लगाव है या ऑब्सेशन
या मेरे सोचने की रफ्तार
बेहद इन्टैंस हो गयी है!

समाधि की अवस्था तो नहीं है यह
क्योंकि मुझे अपने चेहरे की दाढ़ी तो दिखती है
जिसे हर रोज शेव कर डालता हूँ।

तुम्हारा स्मरण
मेरा अपना विस्मरण है, प्रियम्वदा!

१५ मार्च १२:०३ मिनट

तुम्हीं को याद कर रहा हूँ, प्रियम्वदा!

■

तुम्हीं को याद कर रहा हूँ, प्रियम्वदा!
जब लहूलुहान होती जा रही है धरती
जब आदमी ऊब गया है अपने लम्बे इंतजार से
जब उम्मीद की नदी सूख चुकी है
तब ऐसे वक्त में
एक तुम्हीं हो
जो आशा की किरण बन चमकती हो मेरे ज़हन में।

सागर की लहरों से होड़ लगाती!
परिन्दों के संग उड़ान भरती।
मानो नया सवेरा तरस रहा है
तुम्हारी हाथों की छुअन के लिए।

यह तुम्हीं हो
जो बचा सकती हो धरती की उर्वरता!

मेरे लिए तो हर दिन
महिला दिवस है, प्रियम्वदा।
जब याद करता हूँ अपनी माँ को
तब साथ होती है मेरी बहनें-बेटियाँ
और तुम!

तुम्हें तो कभी - कभी
अपने हृदय से बाहर निकल कर
देख भी लेता हूँ मैं!

८ मार्च ७:३५

तुम जब सूरज को जगाती हो

तुम जब सूरज को जगाती हो
अपनी अंजुरि में प्रार्थना भरकर
सारी दिशाओं में
फैल जाते हैं शान्ति - विहग

प्रार्थना और शान्ति
शान्ति और प्रेम
प्रेम और जीवन
सबका अटूट संबंध है आपस में

आकाश
आतुरता से प्रतीक्षा करता है
कि उस प्रार्थना में
उसका कितना भाग है
और कितने के भागीदार हैं
अन्य नक्षत्र!

ग्रह - नक्षत्रों के पुरोधा तक
तुम्हारे प्रेम के प्रत्याशी हैं, प्रियम्वदा!
वे जानते हैं
प्रेम होता है असीम और अविभाज्य भी!

प्रेम
जब प्रार्थना का रूप लेता है
तो अकाट्य हो जाता है
और प्रार्थना
जब प्रेममयी हो जाती है
तो कालातीत बन जाती है।

३० मार्च२०, ८:१८ ए.एम.

सृजन - समीक्षा

इस स्तम्भ के अंतर्गत प्रियम्वदा की नयी सीरीज़ की मेरी कविता के साथ हिन्दी की विख्यात कवि - समीक्षक एवं सम्पादक कुसुम जैन की संक्षिप्त टिप्पणी सादर संलग्न है।

कवि कुसुम जैन अनेक देशो की यात्रा कर चुकी है और देश - विदेश के प्रख्यात साहित्यकारों के साथ घनिष्ठ सम्पर्क में रही हैं। प्रियम्वदा संबंधित प्रत्येक कविताके नीचे लिखी टिप्पणी कुसुम जैन की है।

सन् १९७८। बैंक जाते समय बस स्टैण्ड पर खड़े नवल जी के पैरों को कुचलते हुए एक डबल डेकर बस चली गई। रवीन्द्र सरोवर से दारुण यंत्रणा को वर्दाश्त करते हुए नवल जी लेक गार्डेन अपने घर पैदल ही चल पड़े। घर पहुँचते-पहुँचते पैर फुल चुका था। प्राय: एक वर्ष तक चलना-फिरना बंद हो गया। ऐसी अचल स्थिति में ध्यान लग जाता। प्राय: रात ग्यारह बजे के आस-पास हठात् राम के दोहे कवि नवल के कंठ से फूट पड़ते। नवल जी का कहना था कि अक्सर माँ की गोद में मेरा सिर होता, दोहे रच जाते। नवल जी ने कभी भी इन दोहों को लिपिबद्ध नहीं किया। इसका श्रेय उनकी सहधर्मिणी उर्मिला नवल को है। धुन में गाते इन दोहों को उन्होंने कागज पर उतारा।
यहाँ प्रस्तुत है उनके द्वारा लिखे गए राम के दोहे और रमता के राम।

राम के दोहे / मुझे रच गया राम

काम बनाए ना बनें, खुद ही बनते काम।।
तंत्र वृथा उनके लिए, जाग्रत जिनमें राम।

बजती हरदम रागिनी, राग बना है राम।
सभी सुरों को बाँधता, शब्द एक बस राम।।

अहंकार डगमग करे, पहुंचाए मझधार।
राम-नाम तो नाव है, राम कृपा पतवार।।

मन मन्थन से लग रहा, रतनों का अम्बार
रमता रतन न खोजता, खोजे राम विचार।

रमता आँसू पोंछ ले, यहाँ ना आँसू काम
असुँवन में तो जग मुआ, जीवन हँसता राम।

मौज मलाई चाटता, परमारथ के नाम
गुरु रमते हैं भोग में, सुना रहे हैं राम।

मन चाहा सब कर लिया, हर कोशिश नाकाम।
अब तो ऐसे रह रहे, जैसे राखे राम।।

माया जपती राम है, माया तोड़े राम।
सपना जब-जब टूटता, ना माया ना राम।।

रमता उलटी रीत ये, बिके बोल अनबोल।
हीरा ठीकर बन गया, बिकता कौड़ी मोल।।

सबका सच तो है अलग, अलग है सभी का राम।
प्राण बड़ा जब सच हुआ, तब सच बनता राम।।

जीवन नाटक मंच पर, सबको है कुछ काम।
ताली गाली जो मिले, समझो हरि का नाम।।

समय बीतता जा रहा, भरा नहीं पर घाव।
रह-रह टीसें उठ रहीं रामविलय का चाव।।

तेरे कारन नाचता, तेरे कारन गान।
तेरे कारन मंच पर, झेला यश-अपमान।।

अब तो पर्दा खींच ले, नाटक का है अन्त।
जैसा भी मैं कर गया, दाई तू भगवन्त।।

द्विधारहित वो, प्रेम के, प्रेम रहित है संत।
भावरहित जो भक्ति वो, शून्यमना भगवन्त।।

शून्य-शून्य को रच रहा, शून्य रचे संसार।
शून्य तिरोहित शून्य है, शून्य बना आधार।।

बजती हरदम रागिनी, राग बना है राम।
सात सुरों को बाँधता, शब्द एक बस राम।।

भाव अदेही आत्मा, शब्द बाँधता रूप।
शब्द - अर्थ व्यंजित करे, अक्षर - अक्षर धूप।।

पगली दरपन हाथ ले, देखे अपना रूप।
परत परत झुर्री चढ़े, ज्यों - ज्यों उतरे धूप।।

क्या देखा, क्या सुन लिया, मन अब तो वश नाँहि
बोलूँ तो जूठा लगे, ना बोलूँ सच नाँहि।।

एक राज दरबार में, एक अलौकिक नाच।
'मैं' राजा, मैं देखता, मैं ही करता नाच।।

राम अविचलित भाव है, परम संतुलन राम।
ज्ञान, योग, तप, राम है, निष्ठा केवल राम।।

रामकृष्ण तो ध्यान है, रामकृष्ण संधान।
एकनिष्ठ जब मैं हुआ, सब जग राम समान।।

बंजारिन है जिन्दगी, जात - धरम न गाँव।
राम - नाम का काफिला, रामकृपा है छाँव।।

जीवन नदिया धार में, रुके न कोई काम।
'मैं' तो बेसुध सो रहा, पल - पल जागे राम।।

आँख खुले तो वो दिखे, सपने में भी राम।
करवट - करवट देखता, हिलूँ तो डोले राम।।

रामकृपा तो आईना, आँके मन का बिम्ब।
उपजे अनगिन भाव - छवि, बने राम प्रतिबिम्ब।।

राम रमा रस रमन में, स्मरण निरन्तर भाय।
रोम - रोम बीच राम है, राम दरस तब पाय।।

लोहा कंचन हो चले, पाथर शालिग्राम।
राम - परस पर कर गया, मुझ मूरख को राम।।

रामकृपा से गा रहा, अविरल अनुपम गान।
हास - रूदन स्वर लहरियाँ, काया छन्द विधान।।

हम तो खुद ना जानते, हममें गाता कौन।
पवन - वेग लहरें उठा, स्वर बन जाता मौन।।

हम तो अनबोली कथा, अनपूरे है राग।
कोई रचता अल्पना, राखे हमको साथ।।

हम तो पँछी डाल पर, आ पहुँचे सुस्ताय।
भर पंखों में ताज़गी, वापस फिरि उड़ि जाय।।

राम नाम तो लहर है, जपै वही तरि जाय।
हम तो टूटी नाव है, लहरें पार लगाय।।

बूंद - बूंद सागर बना, सागर हुए अकास।
परस राम का जब मिले, मन में भरे उजास।।

हम तो बहती धार थे, अटक गये इस कूल।
धार कटे ऐसे हुए, बिन डाली ज्यों फूल।।

हरपल है जो ध्यान में, उसके जिम्मे काम।
सुख दुख भरती सांस में, प्राण रचा है राम।।

रमता धरम अधर्म सा, खींचे जो दीवार।
धरम तो पर्वत की हवा, धरम है बहती धार।।

पंडित ज्ञान उछालते, समझे क्या मतिमूढ़।
दो रोटी दो वक्त बस, ज्ञानसार अति गूढ़।।

राम नाम ऐसा नशा, उतरे नहीं खुमार।
रामगान में मन रमा, बनता राम पुकार।।

जितना पानी डालिए, बुझे न हाहाकार।
आग लगे प्रतिशोध की, झुलसाए संसार।।

उपदेश सब, बदल सके ना लोग।
प्रेम छिपा है कन्दरा, होड़ लगाता भोग।।

धूरत गाते राम धुन, ढोंगी करते ध्यान।
राम बिके बाजार में, छोड़ें मान - अपमान।।

आँखन झोंके धूल है, कानन मारे फूंक।
साधु रंग सियार है, देखे उठती हूक।।

जग की चिन्ता छोड़कर, केवल चिन्ता राम।
चिन्ता से उलझन बढ़े, सभी अधूरे काम।।

नहीं हमेशा चाँदनी, नहीं हमेशा रात।
जीत नहीं होती सदा, नहीं हमेशा मात।।

जो अपने को जानते, उनकी हार न जीत।
दोष उनसे हो परे, ऐसे होते मीत।।

रमता चढ़्या पहाड़ तो, देखन लगा अकास।
रहा दूर का दूर वो, जितना लागे पास।।

मुझ को मुझ पर छोड़कर, मीत दियो बिसराय।
नाम किरण ऐसी जगी, नाम राम बन जाय।।

श्याम नयन काजर अजय दमक दामिनी रात।
प्रेम पतंगा चपेट में, बनत जात जलजात।।

राम कृपा में शक्ति है, देती सबको आँक।
राम कृपा से पवन पुत्र भी , आये लंका झाँक।।

रामकृपा जब तक रहे, तब तक रहता ध्यान।
रामकृपा जैसे हटे, मेला भी वीरान।।

आकर्षण का अन्त है, अन्त परे है जाप।
जाप शिखर पर जो चढ़ा, छूटे पुन्य-प्रताप।।

राम-नाम से धुल गया, मन पामर खल-नीच।
निर्मल जल की धार से, रहा नहीं ज्यों कीच।।

मन को जितना मारता, मन करता प्रतिरोध।
बंधन में तू क्यों जिये, जीवित है अवरोध।।

ऊँचाई ऊँची हुई, जितनी भरूं उड़ान।
बौने शब्दों से नहीं, होता राम बखान।।

रामकृपा नापन चला, बलि पहुँचा पाताल।
राम कालजय है जहाँ, पहुँचेगा क्या काल।।

रामकृपा सागर विरल, हम हैं चिड़िया चोंच।
अपनी सीमा पी रहे, तब क्या सोच असोच।।

लंगड़ा कविरा चल रहा, लिए लुकाठी हाथ।
जिसे भरम हो राम का, चले उसीके साथ।।

राम नाम तो गीत है, रामकृपा है तान !
जिसे ठौर हो राम का, फीका धन-सम्मान।।

राम सहारा हो गया, क्या लाठी क्या साथ।
गाते-गाते कट गया, जीवन उपला पाथ।।

होनी होकर ही रहे, अनहोनी के फेर।
रामकृपा तब मानिए, लगे न कुछ अंधेर।।

प्रबल काल के वेग में, बिके बीच बाजार।
सखा मानकर राम को, आए सब कुछ हार।।

लात मारता राज को, पागल बना फकीर।
राज पाट पीछे चले, ज्यों-ज्यों बढ़े रमता।।

चुम्बक लोहा खींचता, लोहा चुम्बक होय।
रामकृपा जिसको मिले, वही राममय होय।।

रामकृपा से लग रहा, हारजीत का दांव।
रामकृपा ऐसी हुई, हिले न अंगद पांव।।

मैं जिसको था ढूँढता, वो तो मिला ना राम।
जो मुझको सहसा मिला, मुझको रच गया राम।।

नदियाँ नाले पारकर, पहुँचा सागर तीर।
बुझी, अनबुझी प्यास फिर, जहाँ नीर ही नीर।।

रामकृपा ऐसी हुई, दिखी अनोखी राह।
समय सार सम्पुट खुले, कविता बेपरवाह।।

राम परस ही कर गया, मुझ मूरख को राम।
लोहा कंचन हो गया, पाथर शालिग्राम।।

लोक लाज ऐसे बढ़े, चाहों का अम्बार।
ज्ञान धरम को छोड़कर, चलता है संसार।।

जीवन यदि संग्राम है, रामनाम जयनाद।
हार जीत तो दर्प की, छिपा लास अवसाद।।

जो चमके सोना नहीं, जो बुझता ना राख।
राम समय के फेर में, दर-दर छाने खाक।।

स्वप्न निरन्तर चल रहा, चले अनवरत राम।
राम लोकमय दृष्टि है, दृष्टि स्वप्नमय राम।।

पैसा चिता प्रदाह है, पैसा नेह अगाध।
पैसा बैरी बन गया, पैसा जिनकी साध।।

बड़े-बड़े भी हारते, पैसा ऐसी मार।
पैसा चाक अपाट है, पिसता सब संसार।।

जिस तिस को देखन चला, दिखा नहीं पर कोय।
दिखा, वही मुझको दिखा, राम रचा है जोय।।

राम कृपा से जग मिला, रामकृपा से राम।
राम कृपा गुरुज्ञान है, ज्ञान सदाशिव धाम।।

राम हृदय में बस गया, जो भी कारण होय।
कारन ही गुरु बन गया, अहंकार को धोय।।

रटता रहता रात दिन, पता नहीं क्यों नाम।
मैं तो बेबस हो चला, सांस ले रहा राम।।

मैं उसको ही बोलता, सुनता हरदम नाम।
आंखें उसको देखती, हिलूँ तो डोले राम।।

जतन सभी निष्फल हुए, घटा न मन का ताप।
यादें घुलमिल रच गयीं, समय नदी पर माप।।

गूँगा भी है बोलता, अंधा देखे रंग।
बहरा भी कुछ सुन रहा, रामकथा सत्संग।।

मन चाहे तो बाँट लो, रख लो कुछ भी नाम।
मेरा राम रहीम है, बिस्मिल्लाह है राम।।

पग - पग बन्धन जकड़ते, काटूँ जितने बन्ध।
बन्धन बास सुवास है, शेष न होती गन्ध।।

मन का सच तो है अलग, अलग है सब का राम।
प्रान बड़ा जब सच हुआ, तब सच बनता राम।।

सोचे तो मन में हँसी, सोच द्रवित मन होय।
रमता सोच न सोचना, यहां न सोचा होय।।

अनपढ़ अन्धी वासना, बनती भक्ति महान।
रामकृपा जिसको मिले, मिलता अन्तरज्ञान।।

जीवन जब रूखा हुआ, सपने लेते खींच।
मन नदिया सा बह चले, दो पाटों के बीच।।

राम राम थे रट रहे, बिन समझे क्या राम।
करतब नट का देखकर, हम समझे कथा राम।।

राम सूर्य सा तप रहा, सागर लहरें राम
किरन, लहर दोनों रमूं, मैं भी रमता राम।।

राम कृपा सन्धान है, राम कृपा है ध्यान।
एकनिष्ठ जब मैं हुआ, सब तो राम समान।।

पाथर-पाथर नाम है नाम बसी है गंध।
गंध बनाती सेतु है, जुड़े राम संबंध।।

पल-पल जिसका ध्यान है, उसके जिम्मे काम।
खेल-खेल में, साँस में, प्राण बना है राम।।

रमता मन घट चीकना, बूँद न टिकने पाय।
जिसके हिरदय राम है, जस अपजस ना भाय।।

धूप खिली तो खिल गया, वनश्री का श्रृंगार।
रमता नभ जल से भरा, कण-कण में उपहार!!

नन्हीं प्यारी नींद को, चाट गया बाजार।
रमता ऐसे तंत्र को, दे क्यों ना धिक्कार।।

सुबह प्रकाशित हो गयी, पाकर रमता प्यार।
यह उजास जो फैलती, इससे ही संसार।।

सखी साँझ से कह रही! सुनो ये मन की बात।
रमता दिन बेचैन था, दो अच्छी सौगात।।

नन्हें शिशु सा देखता, रमता हो हैरान।
बिना वजह पगला रही, दुनिया यह नादान।।

कुछ ही दिन की बात है, इंतजार बस और।
रमता आँसू पोंछ लो, बदलेगा यह दौर।।

छन्दों के सुर ताल में, लहरों का संगीत।
रमता सूरज की किरण, गाती अभिनव गीत।।

खिले मोर को देखकर, फूलों में है शोर।
देखे रमता। आ गयी, देख मोर को भोर।।

सभी ओर सब प्राणमय, जित देखूँ तित प्राण।
नश्वरता में है रमा, रमता प्राण प्रमाण।।

रमता वे निश्चिंत जो, सच में बेपरवाह।
राग द्वेष से हैं परे, नहीं सताती चाह।।

सहज रूप जब बन सके, भीतर का ठहराव।
रमता मिलता चैन वो, जिसका हरदम चाव।।

याद तुम्हारी चाँद सी, करती उजली राह।
रमता जीवन कट रहा, नहीं रही परवाह।।

रमता छूटे लोग भी, पगचिन्हों के साथ।
कदम-कदम पर साथ जो, वही थामता हाथ।।

बड़े भाग्य रमता मिलें सीधे सरल सुमीत।
गंगाजल सा आचमन हिमगिरि पवन पुनीत।।

दूर-दूर तक कास-वन हुआ प्रस्फुटन घोष।
द्वार खड़ा रमता शरद, लेकर सुख-संतोष।।

उदित हुआ है बाल रवि, काट विगत तम क्लेश।
रमता बीता स्वप्न था, जाग्रत नव सन्देश।।

नयी सुबह के साथ ही, खुलती उजली राह।
चल पड़ रमता रास्ते, बिना चाह परवाह।।

नन्हें शिशु सा देखता, रमता हो हैरान।
बिना वजह पगला रही, दुनिया यह नादान।।

रमता जीवन क्षण मधुर, जुड़े धरा सम्बन्ध।
साँस साँस कण-कण सखा, बनती तभी सुगन्ध।।

रमता विस्मय से भरा, आया नया विहान।
कण-कण नव तृणपात भी, जाग उठा सुनसान।।

जवा पुष्प है कह रहा, सुन लो मेरी बात।
खुलो, खिलो मेरी तरह, लाओ नया प्रभात।।

हवा हँसी सुलझा रही, अलकराशि के साथ।
भोर रूप रमता जगी, प्रियतम की सुन बात।।

जीवन की लंबी डगर, करनी सबको पार।
हँसी-खुशी काटो सफर, 'रमता' तब उद्धार।।

खिल-खिल खिल शिशु सा हँसे, रमता दिन अम्लान।
जो भी जैसा, मुक्त मन, स्वागत है अनजान।।

लाख अँधेरा हो मगर, दिखता वही प्रकाश।
'रमता' जीवन की प्रभा, रखती हरदम आस।।

एक अकेला सूर्य ही, बाँटे अपना ताप।
'रमता' अपने प्रेम से, हरो कष्ट संताप।।

लाख अंधेरी रात हो, आता नया प्रभात।
जीवन कभी न ठहरता, बनती खुद ही बात।।

तेरे कारन हो गया, 'रमता' यह मन हंस।
तू छू दे वह कृष्णमय, बाकी सब कुछ कंस।।

'रमता' अचरज से भरा, हर पल उत्सव मान।
कहीं जन्म आनंद है, और कहीं श्मशान।।

जो भरमों को जानते, वो भी भरम शिकार।
भरमी भरमों में फँसा, साधु भरम विचार।।

छूटा अपना सोचना, सोच गई जब हार।
सोचा कारज ना हुआ, अन सोचा संसार।।

हवा चले न सोचकर, बरसे जल ना सोच।
मरण न आता सोचकर, जीवन घटता सोच।।

माया रचती राम है, माया तोड़े राम।
हटता मायाजाल जब, ना माया, ना राम।।

बदल - बदल कर चेहरे मिली नहीं पहचान।
एक रंग रमता रमा, हुए पप्रतिष्ठित प्राण।

•

बन्धुवर!
व्हाट्सएप के माध्यम से आपके साथ अब तक जुड़ा हुआ था। सुबह-सुबह सुप्रभात कहने का आनन्द कुछ और ही था।
आगामी कल से प्रातःकालीन इस रिचुअल से मुक्त हो रहा हूँ आत्मशोधन के लिए।
आप मुझे सदैव स्मरण रहेंगे।
सप्रेम
नवल
21.4.2020 (2.58 pm)
23rd ko unka sim corrupt ho gaya tha. 2.59 pm
Aatamasodan ka kya matlab hai didi 2.59 pm

- **बसन्त रूंगटा**

ॐ

Our Darling Poet, one of Srijon's Founders NAWAL, is No MORE ॐ

मेरी मित्रता तो उनके साथ तीस पैंतीस वर्षों की है। की थी।
जीवन को बड़ी गहराई से देखा था उन्होंने।
उनके जैसा मित्र, उनके जैसा स्पष्ट भाषी, उनके जैसा कवि,
उनके जैसा मनुष्य असंभव ना हो किन्तु विरला, दुर्लभ अवश्य है।
मेरे खुद के लिए उनका अभाव पूरा नहीं होगा। .....

(ॐ) (ॐ)

- **महालक्ष्मी शर्मा**

  सादर नमन.... आज भी हर सुबह व्हाट्स एप पर उनके सुप्रभात संदेश का इंतजार रहता है। मेरे प्यारे नवल अंकल आप को कभी भूल नहीं पाएंगें।
- **कृष्णावतार त्रिपाठी**

  अरे यह कब हो गया अनुरोध जी। दुखद। ॐ शान्ति।
- **डॉ० कमलेश जैन**

  फेसबुक पर सुप्रभात व मनोरम दृश्यावलोकन के साथ सारगर्भित आलेख के लिए आँखें तरस जा रही है। नवल जी बहुत अचंभित कर गए। अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि।
- **ब्रह्मदेव सिंह**

  जानेवाले को कौन रोक पाया है? केवल यादें ही रह जाती हैं। नमन
- **संजय बिन्नानी**

  अनुराग, अनिरूद्ध!
  अदिति, अस्मिता!

मेरे प्रिय, तुम्हारे पिता
हो गए अब परमपिता
आँखों में, दिल में
उनका अक्स रहेगा
सदा मुस्कुराता - हँसता
हम सबको देखते रहें वे
बढ़ाते रहें, बनाते रहें.....
यही कामना, यही प्रार्थना करता
मेरे प्रिय, तुम्हारे पिता
बन गए हैं परमपिता!

- **पश्चिम बंग हिन्दी भाषी समाज**
  हिन्दी के लोकप्रिय कवि, विलक्षण संगठक और कलकत्ता के सबसे आत्मीय लेखक नवल हमारे बीच नहीं रहे। उनके निधन से महानगर की अपूरणीय क्षति हुई है। शोक संतप्त परिवार के प्रति हार्दिक संवेदना।

हार्दिक श्रद्धांजलि

- **निशान्त**
  विनम्र श्रद्धांजलि
- **नरसिंह मिश्रा**
  विनम्र श्रद्धांजलि
- **अरविन्द गुप्ता**
  नमन
- **अमरनाथ**
  बहुत दुखद। नमन उन्हें।
- **गोपाल शुक्ला**
  सादर नमन और विनम्र श्रद्धांजलि
- **मनोरंजन द्विवेदी**
  दुखी कर गए हम सभी के प्रिय बड़े भाई कवि नवल जी।
  श्रद्धांजलि
- **लक्ष्मण केड़िया**
  मेरे बड़े भाई, श्रद्धास्पद नवल बिना बोले चले गए। अंतिम प्रणाम हम नहीं कर पाए। नवल जी देना जानते

थे लेना नहीं। बिना कुछ लिए वह उड़ गया अनंत आकाश में। हम छुछे....। आत्मा हो गए बड़े भाई को मेरी प्रणति।

- **अशोक श्रीवास्तव**
  नमन व श्रद्धांजलि
- **रूपा गुप्ता**
  अत्यंत दुखद। उनकी कमी नहीं भरेगी। उनकी स्मृति को सादर प्रणाम।
- **सुरेश कांत**
  विनम्र श्रद्धांजलि
- **अशोक पांडेय**
  अत्यंत दुखद। अवधूत को नमन।
- **उमेश कुमार पाठक**
  अत्यन्त दुखद। प्रिय कवि को विनम्र श्रद्धांजलि
- **निर्भय देव्यांश**
  ओह चाचू चले गए।
- **विजय कुमार पाण्डे**
  दर्दनाक खबर, अपूरणीय क्षति। दिव्यात्मा को ईश्वर शान्ति दें।
- **मंजु श्रीवास्तव**
  सादर नमन
- **अजित प्रियदर्शी**
  नमन
- **रश्मि खेरिया**
  आज भी देह से दूर मन के करीब, इस आश्वस्ति के साथ कि व्याप्त हैं वे सर्वत्र ऊर्जा स्वरूप सृष्टि में स्वयं भी ऊर्जा बन। इस एहसास के साथ कभी विलग न होने के साथ मेरे रोम-रोम का अन्तहीन साथ समर्पण और प्रणाम उन्हें स्वीकार हो।
- **सन्मार्ग संवाददाता**
  कोलकाता के जाने-माने साहित्यकार जयप्रकाश खत्री उर्फ नवल जी ने शुक्रवार को स्वर्गलोक गमन किया। उनकी मृत्यु से कोलकाता के हिन्दी साहित्य जगत में शोक की लहर है। वह साहित्यकारों के मध्य सेतु जैसे थे। अपने समकालीनों से लेकर सहस्त्राब्दी के अंत तक की युवा पीढ़ी को उन्होंने प्रकाशित किया। हमेशा नेपथ्य में रहकर ही उन्होंने काम किया। अप्रस्तुत, नवागत, स्वर, समवेत, स्वर-सामरथ, प्रतिध्वनि[2] आदि कई मंचों का सृजन किया।

अपूर्वा, साहित्य बुलेटिन, काव्यम् आदि पत्रिकाओं की पृष्ठभूमि में वे ही थे। स्थानीय रचनाकारों की लगभग तीन सौ पुस्तकों से अधिक का प्रकाशन भी उनके ही प्रयासों से हुआ। वे अन्त तक साहित्य को रचते रहे। उनकी बेटी अदिति ने कहा कि अचानक अपरान्ह उनकी तबीयत बिगड़ी तथा जब तक अस्पताल पहुँचाया जाता तबीयत और अधिक बिगड़ गयी तथा अस्पताल ले जाने के कुछ देर बाद ही उन्होंने अंतिम सांस ली। उनकी मृत्यु पर हिन्दी साहित्य जगत के तमाम लोगों ने गंभीर शोक जताया है।

- **वसुमती डागा**

  यकीन ही नहीं हो रहा। कुदरत ने क्रूर आघात किया है। एक संवेदनशील हृदय हमारे बीच नहीं रहा। नमन। विनम्र श्रद्धांजलि।

- **भारतीय भाषा परिषद**

  सर्वपरिचित कवि नवल जी का जाना हम सभी के लिए एक अपूरणीय क्षति है। भारतीय भाषा परिषद के हर कदम पर उनका सहयोग हमें उत्साहित करता रहा है। विनम्र और शांत स्वभाव के धनी नवल जी की अनुपस्थिति सर्वदा सालती रहेगी। 'आधी रात का शहर' और 'कालाहाँडी जैसे काव्य-संग्रह के कवि नवल कोलकाता के हिन्दी साहित्य प्रेमियों के बीच हमेशा विद्यमान रहेंगे। भारतीय भाषा परिषद की ओर से उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि। शंभुनाथ, कुसुम खेमानी, प्रदीप चोपड़ा, विवेक गुप्ता, केचुर मजूमदार।

- **सदीनामा : जितेन्द्र जितांशु**

  भगवान नवल जी की आत्मा को शान्ति दे और उनके परिवार को दुख सहन शक्ति प्रदान करे। इस घड़ी में हम सब रचनाकार आपके साथ हैं। कोरोना के इस काल में हम सब घरों से नहीं निकल पा रहे है। यही हाल उनके परिवार का है। सभी अंतिम यात्रा की तैयारी में व्यस्त हैं। आप सभी से आग्रह है कि उनकी बेटी को संवेदना कल ही दें।

- **निशिथ पटेल**

  जिसे रब कहता था
  जिसकी अदब करता था
  जिस के दरबार में अपनी झोली फैला था

  क्या मालूम था कि वह खुद मुझसे एक मुबारक
  दोस्त की भीख मांग रहा है।

  या खुदा तेरी महफिल को सजाने के लिए मेरा
  दोस्त आया है। ख्याल इतना रखना है कि वह
  प्यार और महोब्बत का मारा है।

  तेरे बेपनाह प्यार से उसका दामन भर देना और
  अमन और चैन से उसके उदास मन को भर देना।

  वैसे मेरी खुद की कोई पहचान नहीं है।

  पर नवल साहब बड़ी शिद्दत से उनके सन्मार्ग के आर्टिकल में डॉक्टर नलीन पटेल के बारे में लिखा था

कि उनकी बड़ी इच्छा थी कि नवल साहब उन गुरुजी के छात्र बनके उनकी कक्षा में बैठ कर उनसे शिक्षा प्राप्त करें। पहचान तो ऐसे इंसानों की होती है जिनमें इतनी विनम्रता, सरलता, सरसता और एक दूसरे के प्रति आदर भाव होता है।

मैं उस गुरुजी का पुत्र हूँ और गुरु जी ने निशिथ पटेल नाम दिया है।

वैसे नवल साहब के संपर्क में मैं अपने मित्र जितेन्द्र धाबरिया माध्यम से आया था।

- **हिन्दी साहित्य परिषद द्वारा कवि को श्रद्धांजलि**

  स्वर्गीय जयप्रकाश खत्री 'नवल' जी को श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए श्रद्धांजलि सभा ऑनलाइन आयोजित की गई जिसमें संपूर्ण भारत के कवियों ने उन्हें अश्रुपूरित और भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। हिन्दी साहित्य परिषद के राष्ट्रीय महासचिव श्री संजय शुक्ल ने उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि हिन्दी साहित्य को नवल जी के जाने से एक अपूरणीय क्षति हुई है। युवा साहित्यकारों को वो सदा प्रोत्साहित किया करते थे। नवल जी के पुत्र अनुराग भी इस शोक सभा में शामिल हुए और गमगीन साहित्य जगत के उनके शुभ चिंतकों से अपने मन की बाता साझा करते हुए कहा कि उनके जैसा बनने के लिए हर इंसान को उनकी तरह उच्च विचारों का होना पड़ेगा। कोलकाता से लखबीर सिंह निर्दोष जो ने कहा कि वह उनके अच्छे मित्र थे। अजय तिवारी ने अपनी कविता के माध्यम से श्रद्धांजलि दी। जीवन कवि ऐसा होता। सबको है जो जीवन देता। हिन्दी साहित्य परिषद झारखंड प्रदेश अध्यक्ष स्नेहा राय ने भी उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए कहा कि अच्छे लोग अच्छे साहित्यकार कभी मरते नहीं। संजय शुक्ल ने यह जानकारी दी कि इस शोक सभा कार्यक्रम में हिन्दी साहित्य परिषद से जुड़े अन्य साहित्यकार भी विभिन्न प्रदेशों जैसे पश्चिम बंगाल, झारखंड, छत्तीसगढ़ और बिहार से अपनी श्रद्धांजलि श्री नवल जी को अर्पित करने के लिए ऑनलाइन उपस्थित थे। गिरधर राय, काली प्रसाद जायसवाल, नीता अनामिका, आलोक चौधरी, रीमा पांडे, आदित्य त्रिपाठी, अल्पना सिंह, मीनू मीना सिन्हा (झारखंड), गीता चौबे, अनुराधा सिंह, कल्याणी जी, श्वेता किष्तौत, रूना रश्मि, नंदनी प्रणय नसीम अख्तर जी बिहार से, विजय कल्याणी तिवारी छत्तीसगढ़ से अंजनी रॉय और संतोष तिवारी और तारक नाथ दुबे शामिल थे।

- **सरला जोशी - बाँधाघाट**

  यह प्रभात खबर में छपी है नवल जी के लिए पढ़कर खूब रोना आया जब मेरे पिताजी की डैथ हुई तब छविनाथ जी के साथ हमारे घर आए थे कितना ढांढस दिया था। मैं उनको प्रणाम करती हूँ।

- **मधु शर्मा - नाथद्वारा**

  सुनो, श्री निवास जी ने फेसबुक पर नवल जी की जो सूचना पोस्ट की है सही है क्या। विश्वास नहीं हो रहा।

- **ममता अरोड़ा - भवानीपुर**

  सुनो अन्नू ने कहा– फेसबुक से देखा नवल अंकल अब नहीं है। सच है क्या ? दस वर्ष पहले हमारी दुकान में आए थे कहा – सरदार जी क्या आप पंजाब से फुग्गा मंगवाते है क्या ? इत्तफाक से कलकत्ता में सिर्फ हमारी ही दुकान में यह मिलता है। ६ घंटे से अधिक आप इसे नहीं रख सकते। अमृतसर से

तैयार होकर आता है। मेरे पति ने कहा – आप किसके लिए ले जाएंगे तो बोले– अपने बच्चों के लिए। तब से मेरे पति पिंकी से दोस्ती हुई कि अक्सर दुकान आना-जाना होने लगा। मेरे पति को कैंसर था हॉस्पिटल देखने आते थे। दुकान या हॉस्पिटल आने पर माहौल बदल जाता था। मैंने पति को खोया है आज एक आत्मीय स्वजन को। उनके बच्चों के लिए वाहे गुरु जी से अरदास करूँगी।

- **उमेश पंकज** - लखनऊ

  इन्दु जी, नवल भैया के बारे में अभी मृत्युंजय ने बताया – झूठी खबर है ना। ऐसे कैसे बिना हमसे चुपचाप रूमाल को झाड़ा जैसा हर समय करते थे पॉकेट में रखा मुस्कराते हुए चल देते थे वैसे ही चले गए अच्छा फोन रखता हूँ।

- **विश्रांत वशिष्ठ** – दिल्ली

  अभी-अभी दिल्ली से विश्रांत वशिष्ठ जी का फोन था – आज सुबह ५ बजे आनंद पांडेय जी का फोन था। डर गया क्या अशुभ समाचार है। इतनी सुबह जो सुना उससे एक सदमा पहुँचा। नवल जी से हिसाब पूरा करूँगा। बंधु आज भी तुम जीते। अभी संभला तो तुमसे बात करनी चाही। बताओ परिवार के बारे में। कहना अभी बात करने की स्थिति में नहीं हूँ। स्थिति सामान्य होने पर कलकत्ता आऊँगा। पूछना चाचा के लिए कोई आदेश है और फोन रख दिया।

- **विजय झुनझुनवाला** – कलकत्ता

  नवल जी मुझे मित्र के रूप में मिले थे और मेरे हृदय बन्ध में ज्योति रूप में समा गए। मुझे पता ही नहीं चला कि किस तरह साहित्यिक अभिरुचियों ने दो वर्षों की मित्रता पर एक स्नेह-सेतु बाँध दिया। अब सेतु पथ पर अश्रु सजल आँखों की आर्द्रता किसी स्वप्न घन का सृजन करती है यह तो भविष्य ही बतलायेगा। सूर्य की पहली किरण के साथ उनको मेरा 'सुप्रभात' प्रेषित होता था। उनकी स्मृतियाँ निश्चित हर प्रात: मेरी आँखों का शृंगार करती रहेंगी। उस व्यक्ति की आत्मा के लिए मैं क्या शान्ति प्रार्थना करूँ जो स्वयं शान्ति मूर्ति हो और हमसे बिछुड़े हों।

- **विद्या भंडारी**

  स्मृति शेष पर लिखने वाला स्वयम स्मृति शेष हो गए। मेरा सौभाग्य रहा कि मैं नवल जी के अंतिम दर्शन कर पाई, घर पास है इसलिए। मुझे साहित्य जगत का परिचय कराने वाले स्नेहसिक्त कवि के साहचर्य ने मुझे बहुत कुछ सिखाया। उनके स्नेह व सम्मान ने मुझे बहुत ऊंचा उठा दिया। २३को ही फोन पर बात हुई थी। स्नेह एवं पड़ोस में होने के कारण प्राय: मिलना हो जाता था। अपनी नई कविता सुनाते, कई किस्से सुनाते, खाने के बड़े शौकीन, खाना बनाने की भी चर्चाए होती। कहते– अभी बहुत काम करना है। सबका उत्साहवर्धन करना तो उनका स्वभाव था ही। स्मरणशक्ति का कोई जवाब नहीं था। बातों की अंतरंगता तक याद थी। साहित्य को इतना समर्पित शायद ही कोई होगा। ४५ वर्षों का मित्रवत साथ रहा। २२ तारीख को व्हाट्सअप पर एक मेसेज भेजा कि व्हाट्सअप पर सुप्रभात वाला मेसेज बंद कर रहा हूँ आत्मशोधन के लिए। शेष फिर कभी
  नवल जी के लिए दो शब्द कहना चाहती हूँ

स्नेहसिक्त कवि नवल

कहीं नहीं गए हो
हो यहीं आसपास
प्रियम्वदा की धड़कनों में धड़कते हुए
मित्रों के स्नेह में डुबकी लगाते हुए
लेक के पेड़ - पौधों से बतियाते हुए झूमते हुए
नेपथ्य से कविताओं में सराबोर होते हुए
हर आहट में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हुए
कहीं नहीं गए हो।

- **नौरतन भंडारी** – कलकत्ता

एक महान कवि, साहित्यकार प्रेरणास्रोत नवल जी जिनकी स्नेह की धारा ने न जाने कितने लोगों को प्रोत्साहित करके कवि बना दिया। आज अचानक रूठकर चले गए, दूर चले गए क्षितिज के पार। प्रेम की अथाह धारा बहाकर लुप्त हो गए। हमारा सौभाग्य था कि घर पर अक्सर आकर हंसी मजाक का माहौल बना देते, ये उनका अपनत्व था कि हमें काफी समय देते। कविता पढ़ने का अंदाज ही अलग था उनका, लिखाई देखकर तो मैं मुग्ध हो जाता। उन्हें कभी भूलाया नहीं जा सकता। वे हमारी स्मृतियों में हमेशा रहेंगे।

प्रिय मित्र नवल के प्रति

■ रामेश्वर नाथ मिश्र

क्या इस तरह
कोई जाता है
जैसे तुम चले गये?
बिना कुछ बोले,
बिना कुछ बताये।

वैसे तो तुम घंटों
बतियाते थे
कभी दूरभाष पर
कभी व्हाटसएप पर
और कभी फेसबुक पर
दो-चार पंक्ति लिखकर
तुम्हारी टिप्पणियाँ
लाजवाब होती थीं
तुम्हारी मुस्कान की तरह
तुम्हारे व्यवहार और
तुम्हारे परिधान की तरह।
नफासत और नजाकत
तुम्हारी हमजोली थीं
बोली में चुलबुलापन
शिष्ट ठिठोली थी।

भाषा के सरताज
शैली के बादशाह।
तुम्हारी टिप्पणी सुनने के लिए
मेरे कान लालायित रहते थे,
तुम्हारी प्रतिक्रिया
सटीक और तर्क सम्मत होती थी
अचूक भी राम के बाण की तरह
जिन्हें सुनना ही पड़ता था
असहमत होते हुए भी
काट पाना कठिन था।
वयवरिष्ठ होते हुए भी
तुमने मुझे अपना मित्र माना था
तुम मेरे प्रशंसक थे, मेरे आलोचक भी।
आखिर तुम कहाँ चले गये
मेरे अनन्य मित्र?
इतनी भी क्या जल्दी थी?
इतनी भी क्या जल्दी थी
इतनी क्या ....?

•

प्रतिध्वनि 2002
रिजेन्ट एनक्लेव, फ्लैट नं-3ए, ब्लॉक-6
वि.आई.पी. रोड, कोईखाली, कोलकाता-700 052
मोबाइल : 9830124270